समर्पण ।

हिन्दी भाषाके निःस्वार्थ सेवक, काशी नागरी
प्रचारिणी सभाके जन्मदाता
और सुलेखक
श्रीमान् बाबू श्यामसुन्दरदासजी बी. ए. के करकमलोंमें
यह क्षुद्र ग्रन्थ, लेखकके द्वारा
सादर समर्पित
हुआ ।

आदर्श कहानी।

एक मच्छर जाड़ेके दिनोंमें भूखसे तंग आकर मधु-मक्खियोंके पास गया और बोला,—"कृपा करके मुझे थोड़ासा मधु (शहद) दे दो; मैं भूखके मारे मरा जाता हूँ।" यह सुनकर एक मक्खीने पूछा,—"तुमने सारी गर्मी कैसे बिता दी? उन दिनोंमें तुमने जाड़ेके लिए एकट्ठा करके क्यों न रक्खा?" मच्छरने उत्तर दिया,—"मै मूर्ख हूँ। मैंने सारी गर्मी इधर उधर घूमने और गाने बजानेमें बिता दी, जाडेका कुछ खयाल ही न किया।" इस पर मक्खीने कहा, "आप अपना रास्ता लीजिए। हमारा नियम दूसरा है। हम गर्मीमें कड़ी मेहनत करते हैं और जाड़ेके लिए संग्रह कर रखते है। जो गर्मीमें कुछ नहीं करते, केवल इधर उधर निठले फिरा करते हैं, उनको जाड़ेमें भूखों मरना ही चाहिए।"

अर्थ–समुद्देश ।

यतः सर्वप्रयोजनासिद्धिः सोऽर्थः। सोऽर्थस्य भाजनं योऽर्थानुबन्धेनार्थमनुभवति । अलब्धलाभो लब्धपरिक्षणं रक्षितविवर्धनं चेत्यर्थानुबन्धाः। तीर्थमर्थेनासम्भावयन्मधुच्छत्रमिव सर्वात्मना विनश्यति । धर्मसमवायिनः कार्यसमवायिनश्च पुरुषाः तीर्थम् । तादात्विक-मूलहर–कदर्येषु नासुलभः प्रत्यवायः । यः किमप्यसञ्चित्योत्पन्नमर्थमपव्ययति स तादात्विकः। यः पितृपैतामहमन्यायेनानुभवति स मूलहरः। यो भृत्यात्मपीडाभ्यामर्थं सञ्चिनोति स कदर्यः । तादात्विकमूलहरयोरायत्यां नास्ति कल्याणम् । कदर्यस्यार्थसंग्रहो राजदायादतस्कराणामन्यतमस्य निधिः ।

—श्रीसोमदेवसूरिकृतनीतिवाक्यामृतस्य ।

जिससे मनुष्यके समस्त प्रयोजनोंकी सिद्धि हो सकती है—सारी ज़रूरतें मिट जाती हैं, उसे अर्थ या धन कहते हैं । धनका पात्र अथवा अधिकारी वही हो सकता है, जो धनको अर्थानुबन्धपूर्वक भोगता है। धनका कमाना, कमाये हुए धनकी भली भाँति रक्षा करना और रक्षित धनको बढ़ाते रहना, इन तीन बातोंको अर्थानुबन्ध कहते हैं । धनको धर्मसंबन्धी और समाजसम्बन्धी परोपकारादि कार्य करनेवाले पुरुषोंकी सेवा तथा भरणपोषणमें खर्च करना चाहिए । ये लोग एक प्रकारके तीर्थ हैं। क्योंकि इनसे दूसरोंका कल्याण होता है—दूसरोंको ये कष्टसे बचाते हैं। जो धन तीर्थोंकी सेवामें नहीं लगता, वह शहदके छत्तेकी तरह आप ही नष्ट हो जाता है—किसीके काम नहीं आता। तादात्विक, मूलहर और कदर्य पुरुषों पर कष्टोंका आ पड़ना बहुत सहज है। जो कमाता तो है परन्तु उसमेंसे कुछ भी जमा न करके सबका सब खर्च कर डालता है, उसे तादात्विक कहते हैं। जो अपने बाप दादाओंके धनको अन्यायके साथ उड़ाता है, उसे मूलहर कहते हैं। और जो अपने नौकरों चाकरोंको तथा स्वयं अपने शरीरको भी कष्ट देकर कंजूसीसे धन जमा करता है—न आप खाता है और न दूसरोंको खाने देता है, उसे कदर्य कहते हैं । इनमें से पहले दो प्रकारके मनुष्योंको तो आगे दुःख भोगने पड़ते हैं और अन्तके कदर्यका एकत्र किया हुआ धन राजा हिस्सेदार और चोर इनमेंसे किसी एकके काम आता है।

—नीति-वाक्यामृत ।

प्रस्तावना।

डाक्टर सेमुएल स्माइलसका जन्म हैडिंगटनमें २३ दिसम्बर सन् १८१२ ई० को हुआ। ये ११ भाई बहिन थे। इनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय ग्रामर स्कूलमें हुई। १४ वर्षकी उमरमें इन्होंने एक डाक्टरी दूकान (Medical firm) में नौकरी कर ली। मि० लेविंस इस दूकानके एक हिस्सेदार थे। सन १८२९ में वे लीथ चले गये और सेमुएल स्माइलसको अपने साथ लेते गये। सेमुएलने वहाँ थोडे ही दिन रहकर मेट्रिकुलेशनकी परीक्षा पास कर ली और मेडिकल कालेजमें नाम लिखा लिया। परिश्रमके बलसे आपने सन् १८३२ में मेडिकल परीक्षामें सफलता प्राप्त की और चिकित्सा करनेका सरटीफिकट पाकर एडिन्बर्गमें डाक्टरी करना शुरू कर दिया। परन्तु इस व्यवसायमें यथेष्ट आमदनी नहीं हुई, इसलिए इसे छोड़कर आपने रसायन विद्या और स्वास्थ्यरक्षा आदि विषयों पर सार्वजनिक व्याख्यान देना और पत्रोंमें लेख लिखना प्रारम्भ किया। इसमें आपको अच्छी सफलता हुई—खासी आमदनी होने लगी। सन् १८३७ में आपने 'फिजिकल एजुकेशन' नामकी एक पुस्तक लिखी। इसकी आपने ७५० कापियाँ छपाई। ये बहुत विलम्बसे बिकीं। इसे बहुत ही कम लोगोंने पसन्द किया, बहुतोंने तो निन्दा तक कर डाली। सन् १८३८ में आप लन्दन गये और वहाँ लीडस नामक पत्रके सम्पादक हो गये। यह काम आपने लगभग चार वर्षतक किया। इसके बाद सन् १८६६ तक आप दो रेलवे कम्पनियोंके क्रमसे उपमंत्री और मंत्री रहे। १८६७ में आप नेशनल प्राविडेंट सुसाइटीके सभापति हो गये और १८७१ तक रहे। इस बीचमें आपने राजनीतिक और सामाजिक सुधारोंकी ओर जी लगाया और जितना समय मिला, उसमें परिश्रमी पुरुषों और निर्धन साहसी विद्यार्थियोंके जीवनचरित लिखे। ये जीवनचरित कई जिल्दोंमें प्रकाशित हुए हैं।

आपकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'सेल्फ हेल्प' या 'स्वावलम्बन' सन् १८५९ में प्रकाशित हुई। इसमें बडी भारी सफलता हुई। इसकी २० हजार प्रतियाँ पहले ही सालमें बिक गईं। आगे भी इसकी बहुत खप हुइ है। सन १८८९ तक इसकी डेड लाख प्रतियाँ बिक चुकी थीं और अबतक तो न जाने कितनी बिक चुकी होंगी। प्राय सभी प्रधान प्रधान भाषाओंमें इस पुस्तकका अनुवाद हो चुका है। इसके बाद आपने सन् १८७१ में 'कैरेक्टर' (सदाचार), १८७५ में 'थिरिफ्ट' (मितव्ययिता), १८८० में 'ड्यूटी' (कर्तव्य) और १८८७ में लाइफ एण्ड लेबर (जीवन और श्रम) नामक पुस्तकें लिखीं। आपकी सारी रचनामें इन पाँच पुस्तकोंकी सबसे अधिक प्रसिद्धि है। प्रत्येक पुस्तकालयमें इनका संग्रह रहता है। इन्हें पढकर आलसीसे आलसी और अधमसे अधम मनुष्य भी उद्योगी, साहसी, सदाचारी, कर्तव्यनिष्ठ और श्रेष्ठ बन सकता है।

सन् १८७८ में आपने जॉर्ज मूरकी जीवनी लिखी। इसी वर्ष एडिनबर्ग-यूनीवर्सिटीने आपको एल एल डी की पदवी देकर सम्मानित किया। इटली आप कई बार गये। वहाँ आपकी और आपके ग्रन्थोंकी खूब कदर हुई। अन्त समय तक आप पुस्तक लिखनेमें लगे रहे। और भी कई अच्छी अच्छी पुस्तकें आपकी कलमसे निकलीं। १६ अप्रेल सन् १९०४ को केसिंगटनमें आपका देहान्त हो गया।

स्माइल्स साहबका जीवनचरित बहुत बडा और शिक्षाप्रद है। उसे टामस मेकीने सन् १९०५ में लिखा है। स्थानाभावके कारण उसका बहुत ही संक्षिप्त सार यहाँ दे दिया गया और यह केवल इस लिए कि इस पुस्तकके पढनेवालोंको मूल लेखकका थोडासा परिचय हो जाय।

स्माइल्स साहबके ग्रन्थ बहुत ही सुगम और प्रभावशाली हैं। उन्होंने प्रत्येक विषयको उदाहरणों द्वारा ऐसी सरल और चित्ताकर्षक भाषामें समझाया है कि उसे साधारणसे साधारण बुद्धिवाले भी सहज ही समझ सकते हैं। हम नहीं कह सकते कि इंग्लैंड आदि देशोंमें आपके ग्रन्थोंका आदर पहले

जैसा अब भी है या नहीं; परन्तु भारतवर्षमें आपके ग्रन्थोंका इस समय बहुत ही आदर होना चाहिए। भारतवासियोंको परिश्रमी, उद्योगी, साहसी, कर्तव्यपरायण और मितव्ययी बनानेके लिए बड़ी भारी आवश्यकता है कि आपके ग्रन्थ प्रत्येक घरमें पढ़े जावें।

बंगाली, उर्दू, मराठी गुजराती आदि भाषाओंमें आपके कई ग्रन्थोंके अनुवाद हो चुके हैं। किसी किसी भाषामें तो एक एक ग्रन्थके दो दो तीन तीन अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। परन्तु खेद है कि हिन्दीमें जहाँतक मैं जानता हूँ अबतक आपके किसी भी ग्रन्थका अनुवाद प्रकाशित नहीं हुआ है। इस कमीकी पूर्तिके लिए हिन्दीके धुरन्धर लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी (सरस्वतीसम्पादक) और हिन्दीग्रन्थरत्नाकरकार्यालयके संचालक पं० नाथूरामजी प्रेमीकी सम्मतिसे मैंने डाक्टर स्माइलसकी प्रसिद्ध पुस्तक 'थ्रिफ्ट' का हिन्दी अनुवाद करना निश्चय किया और आज इसी अनुवादको लेकर मैं हिन्दी पाठकोंके सन्मुख उपस्थित हुआ हूँ।

यह ग्रन्थ कितना उपयोगी है और दरिद्र भारतके लिए कितना लाभकारी है, इसके विषयमें मैं स्वयं कुछ नही कहना चाहता—केवल डाक्टर साहबके उन वाक्योंको ही यहाँ उद्धृत किये देता हूँ जो उन्होंने इस ग्रन्थकी भूमिकामें लिखे हैं:—

"वास्तवमें इस पुस्तकको स्वावलम्बन (सेल्फ हेल्प) और शीलसूत्र (कैरेक्टर) नामक ग्रन्थोंकी प्रस्तावना समझना चाहिए। क्योंकि मितव्ययिता स्वावलम्बनकी नीव और शीलकी जड़ है। यद्यपि हम अपने अन्य ग्रन्थोंमें भी रुपयेके सदुपयोग और दुरुपयोगके विषयमें बहुत कुछ लिख चुके हैं; परन्तु यह इतना आवश्यक विषय है कि इसे जितनी अधिक बार समझाया और लिखा जाय, उतना ही अच्छा है। सत्यपरायणता, दयालुता, उदारता, आत्मनिर्भरता, दूरदर्शिता और मितव्ययिता आदि जितने उत्तम गुण हैं, वे सब रुपयेके सदुपयोगसे घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं और इसके विपरीत कृपणता,

निर्दयता, अदूरदर्शिता, स्वार्थता, लोभ, मोह आदि जितने अवगुण हैं, वे सब रुपयेके दुरुपयोगसे सम्बन्ध रखते हैं।

"एक विद्वानका कथन है कि श्रमका परिणाम सुख है। ईश्वरकी प्रसन्नता इसीमें है कि सब लोग श्रमपूर्वक सुख प्राप्त करें। श्रमसे जो कुछ पैदा किया जाय अथवा बचाया जाय, वह केवल इस लिए नहीं कि पैदा करना और बचाना हमारा परम धर्म है। हमारा पैदा करना और बचाना सुखके लिए होना चाहिए। हमें केवल अपने ही लिए श्रम और उद्योग नहीं करना चाहिए, किन्तु उनके सुखके लिए भी, जो हमारे अधीन हैं—आश्रित हैं। परिश्रमी पुरुषको यह अवश्य जानना चाहिए कि किस तरह पैदा किया जाता है, किस तरह खर्च किया जाता है और किस तरह बचाया जाता है। जो मनुष्य सैंट पालकी तरह बचाना और जमा करना जानता है, वह वास्तवमें बड़ा विद्वान् है।

"प्रत्येक मनुष्यको अपनी स्थितिको सुधारने और स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए यथाशक्ति उद्योग करना करना चाहिए। इसके लिए उसका कर्तव्य होना चाहिए कि वह अपनी आमदनीमेंसे कुछ बचाकर रखता जाय। मनुष्य अपनी आजीविका श्रमसे करता है। श्रमसे ही उसे यह जानना चाहिए कि मैं किस तरह हूँ। मितव्ययिता, दूरदर्शिता और निःस्वार्थताके अभ्याससे ही स्वाधीनता मिल सकती है। न्यायशील और उदारचित्त होनेके लिए अपनी इच्छाओंके रोकने और इन्द्रियोंको दमन करनेकी आवश्यकता है। उदारताका मूल तत्त्व स्वार्थत्याग और आत्मनिर्भरता है।

"इस पुस्तकका सार यह है कि मनुष्य अपनी शक्ति, अपने श्रम, अपने उद्योग और अपने धनको स्वार्थपरता और वासनाओंकी तृप्तिमें न लगाकर अच्छे कामोंमें लगावे। इसके लिए आलस, अविचार, अहंकार अविवेक, असंयम आदि अनेक अरियों या शत्रुओंका सामना करना पड़ता है। इनमेंसे असंयम सबसे बुरा और बड़ा शत्रु है। इस पुस्तकमें इन

मन शत्रुओंपर विजय पानेके सैकड़ों उपाय बतलाये गये हैं । हम आशा करते हैं कि पाठकगण उन उपायोंको अवश्य ही काममें लावेंगे । ”

जिस समय मैंने इस ग्रन्थको लिखना प्रारंभ किया, उस समय मेरा अनुमान था कि मैं प्रतिदिन पाँच छह घंटे लिखकर थोड़े ही दिनोंमें इसे पूर्ण कर दूँगा । परन्तु मनुष्य सोचता कुछ है और होता कुछ और ही है । मेरा अनुमान ठीक न उतरा, अनेक असुविधाओंमें आ पड़नेसे बीच बीचमें कितने ही दिनोंतक ठहर जाना पड़ा । इन दिनोंमें मुझ पर सांसारिक सुख दुःखोंका बहुत कुछ प्रभाव पड़ा और जलवायुका परिवर्तन भी मुझे करना पड़ा । संभव है कि इन घटनाओंके कारण मेरी भाषामें तथा भावोंमें भी थोड़ा बहुत परिवर्तन हो गया हो । यदि कहीं ऐसा परिवर्तन दृग्गोचर हो, तो उसके लिए मैं पाठकोंसे क्षमा माँगता हूँ ।

शुरूमें मैंने मूल ग्रन्थके प्रत्येक वाक्यका अनुवाद करनेका प्रयत्न किया था; परन्तु आगे मुझे यह अच्छा न लगा और तब मैंने आशयानुवाद करना ही उचित समझा । ऐसा करनेमें मुझे जहाँ तहाँ बहुत कुछ परिवर्तन करना पड़ा है; तो भी मूल ग्रन्थकर्त्ताके अभिप्रायोंमें कुछ अन्तर न पड़ जाय, इसकी ओर पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है ।

इस ग्रन्थके पहले चार अध्यायोंका उर्दू अनुवाद भोपालके सिटी मजिस्ट्रेट श्रीयुक्त सैयद मोहम्मद मुरतजा साहबका किया हुआ है । प्रारंभमें इस अनुवादसे मुझे बहुत सहायता मिली है और इसके लिये मैं सैयद साहबका अत्यन्त आभारी हूँ । मैं अपने परम प्रिय मित्र नाथूरामजी प्रेमीका भी कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थका संशोधन करनेमें मुझे अमूल्य सहायता दी है ।

यदि मेरा यह छोटासा और नया प्रयत्न हिन्दीभाषाभाषियोंको रुचिकर हुआ, तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूँगा और ऐसी ही कोई दूसरी भेट लेकर सेवामें शीघ्र ही उपस्थित होऊँगा ।

लखनऊ,
२७–३–१४ } दयाचन्द जैन ।

विषय-सूची।

अध्याय			पृ० सं०
१ ला	परिश्रम	...	१
२ रा	मितव्ययिताका अभ्यास	...	१२
३ रा	अदूरदर्शिता	...	३७
४ था	बचतके उपाय	...	४१
५ वाँ	उदाहरण	...	५२
६ वाँ	बचानेके नियम	...	६१
७ वाँ	बीमा कम्पनियाँ और सहायक सभायें	...	७१
८ वाँ	सेविंग बैंक	...	८१
९ वाँ	छोटी छोटी चीजें	...	८७
१० वाँ	स्वामी और सेवक	...	९६
११ वाँ	अपव्यय (आमदनीसे अधिक खर्च करना)	...	१०१
१२ वाँ	ऋण (कर्ज़)	...	११२
१३ वाँ	धन और दान	...	१२०
१४ वाँ	निरोग घर	...	१४०
१५ वाँ	सुखी जीवन	...	१५६

मितव्ययिता।

पहला अध्याय।

परिश्रम।

(विद्वानोंके वाक्य)

जो कुछ मेरे पास है उस पर नहीं, किंतु जो कुछ मैं करता हूँ उस ही पर मेरा अधिकार है।

उपयोगी श्रम ही ऐसा धन है जो समाजको धनवान् बना सक्ता है और उसको उन्नत अवस्था पर पहुँचा सक्ता है। सुलेमान (Solomon) का कथन है कि ऐसा कोई श्रम नहीं जिसमें लाभ न हो। सम्पत्तिशास्त्र क्या है, केवल इसी सूत्रकी एक विशद और बृहत् व्याख्या है।

प्रकृतिकी आवश्यक्ताओंको पूरी करनेके लिए परमात्मा किसानोंके श्रमसे, शिल्पकारोंके कलाकौशलसे और व्यापारियोंके मालसे संसारमें उत्तम वस्तुओंको उत्पन्न कराता है। आलसी पुरुष मृतकके समान है जिसको संसारकी आवश्यकताओं और परिवर्तनोंसे कोई सम्बन्ध नहीं। वह केवल समय नष्ट करनेके लिए और जिह्वाके स्वादके लिए जीता है; जब आयु पूर्ण हो जाती है कूच कर जाता है। संसारको उसके जीवनसे कोई लाभ नहीं पहुँचता।

* * * * *

मितव्ययिता सभ्यताके साथ आरम्भ हुई। उसकी नींव उस समय स्थिर हुई जब आजकी ज़रूरतके साथ कलकी ज़रूरतका भी ख़याल पैदा हुआ। रुपयेके आविष्कारसे बहुत पहले इसका आरम्भ हुआ।

मितव्ययिताका अर्थ गृहप्रबन्ध है। गृहप्रबन्धका यह अभिप्राय है कि व्यक्तिगत उन्नति और वृद्धि हो और सामाजिक वा देशप्रबन्धसे यह तात्पर्य है कि सामाजिक धनदौलतकी वृद्धि हो।

प्राईवेट (निजी) और पब्लिक (सार्वजनिक) दोनों सम्पत्तियोंका एक ही स्रोत है। धन श्रमसे उत्पन्न होता है, मितव्ययितासे सुरक्षित रहता है और उद्योग तथा दृढतासे बढ़ता जाता है। व्यक्तिगत बचतका नाम ही सम्पत्ति है। दूसरे शब्दोंमें यों कह सकते हैं कि यह ही प्रत्येक समाजकी भलाईका कारण है। परन्तु इसके विपरीत व्यक्तिगत अपव्यय (फ़िजूल खर्च) ही बड़े बड़े समाजोंकी निर्धनताका कारण है। अतएव प्रत्येक मितव्ययी व्यक्तिको जनसाधारणका हितैषी और उपकारी समझना चाहिए और अपव्ययी तथा कृपणको शत्रु।

गृहप्रबन्धकी आवश्यकतापर तो किसीको कोई विवाद नहीं है। सब ही इसे मानते हैं। हाँ, सामाजिक प्रबंधके विषयमें बहुत कुछ विवाद है; किंतु हमको उसपर विचार करनेकी कोई ज़रूरत नहीं है। केवल गृहप्रबंधका ही विषय इस पुस्तकके लिए बहुत है।

प्रबन्ध कोई स्वाभाविक शक्ति नहीं है किंतु अनुभव, उदाहरण और दूरदर्शिताकी बुद्धिका ही नाम है। यह शिक्षा और बुद्धिका

फल है। जब मनुष्यमें बुद्धि और विवेक उत्पन्न हो जाता है तब ही उसमें मितव्ययिता आती है। अतएव स्त्रीपुरुषोंको दूरदर्शी बनानेका सर्वोत्तम मार्ग यह है कि उन्हें विवेकी और बुद्धिमान् बनाया जाय।

स्वभावतः मनुष्यमें मितव्ययिताकी अपेक्षा अपव्यय अधिक है। गँवार आदमी बड़े अपव्ययी होते हैं; क्योंकि न तो वे दूरदर्शी होते हैं और न उनको भविष्यका ही खयाल होता है। पहले इंग्लेण्डमें वहाँके मूलनिवासी अशिक्षित पुरुष कुछ भी संग्रह नहीं करते थे। वे गड्ढों और खोहोंमें रहते थे और कपड़ोंकी जगह वृक्षोंके पत्तों और छालोंसे अपना बदन ढँक लिया करते थे। समुद्रके किनारेसे कीड़े मकोड़े पकड़कर और पशु-पक्षियोंको पत्थरोंसे मार कर अपना निर्वाह करते थे। धीरे धीरे उन्होंने पत्थरके हथियार बनाना सीखा जिससे उन्हें शिकार करना बहुत आसान हो गया।

पहले लोग खेतीका काम बिल्कुल नहीं जानते थे। पीछे उन्होंने हर प्रकारके बीज अपने खानेके वास्ते जमा करना और उनमेंसे कुछ भाग दूसरी मौसमके लिए उठाकर रखना शुरू किया। जब धातुओंका पता लगा तब उनसे कई प्रकारकी चीजें बनाई गईं। तरह तरहके औज़ार और मकान बनाये गये और इस लगातार परिश्रमसे सभ्यता और सदाचारके सैकड़ों मार्ग खुल गये। जो लोग नदियों या समुद्रोंके किनारे रहते थे, वे वृक्षोंको काटकर उन्हींमें अपने रहनेकी जगह बना लेते थे और उन्हींपर सवार होकर अपने

खानेकी सामग्री जमा कर लाते थे। धीरे धीरे इन्हीं कटे हुए वृक्षोंने डोंगियोंका और फिर नौकाओंका रूप धारण किया। तत्पश्चात् परिवर्तन होते होते जहाज़ और स्टीमर (अगनबोट) भी इन्हींसे बन गये।

हम पहले ही जैसे मूर्ख और अशिक्षित रहते, परंतु हमारे पूर्वजोंके असीम परिश्रमने हमें मूर्ख और असभ्य रहनेसे बचा दिया। उन्होंने ही भूमिको साफ़ करके उपजके योग्य बनाया, तरह तरहके यंत्रोंका आविष्कार किया और अनेक विद्याओं और शास्त्रोंकी रचना की। उनके इस अपरिमित परिश्रमके कारण ही आज हम लाभ उठा रहे हैं।

प्रकृति हमको बतला रही है कि जो कोई अच्छा काम हो जाता है वह सर्वथा कभी नष्ट नहीं होता। इसी लिए आज हम उनको याद करते हैं जो पूर्वमें अपने परिश्रमसे सफलता प्राप्त करके न जाने कबसे श्मशान भूमिमें शयन कर रहे हैं। बड़े बड़े शिल्पकार जो ताजमहल सरीखी इमारतें बना गये हैं और अपूर्व शिल्पकौशल और नक्शाकारीका काम कर गये हैं, यद्यपि आज इस संसारमें जीवित नहीं है किंतु उनकी अजर अमर कीर्ति सर्वत्र विद्यमान है। प्रकृतिके शासनमें मनुष्यके श्रमका सर्वथा न होजाना बिल्कुल असम्भव है। यदि व्यक्तिके लिए नहीं तो जातिके लिए तो अवश्य ही उसका कोई न कोई लाभदायक फल शेष रह जाता है।

जो रुपया हमारे बाप दादा छोड़ जाते हैं वह तो हमारे लिए एक तुच्छ चीज़ है। हमारे अधिकारमें एक ऐसी अद्भुत चीज़ है जो कभी नाश नहीं होती। वह हमारे पूर्वजोंकी बुद्धि और श्रमका फल है। यह फल सीखनेसे नहीं किंतु सिखाने और दिखानेसे प्राप्त होता है। यह क्रम संतान प्रतिसंतान चलता रहा। पिताने पुत्रको सिखाया, पुत्रने पिताके श्रमसे लाभ उठाया और इसतरह कलाकौशल तथा शिल्पविद्या अबतक सुरक्षित रही। यह संतान प्रतिसंतानका शिक्षाक्रम मनुष्य जातिमें अबतक प्रचलित है और सभ्यताका यह एक मुख्य अंग है।

अतएव हमारा पैतृक धन हमारे पूर्वजोंके श्रमका लाभदायक फल है। किंतु हम उससे उस समय तक लाभ नहीं उठा सकते जब तक कि हम भी उस श्रममें योग न दें। संसारमें प्रत्येक व्यक्तिको श्रम करना योग्य है। वह श्रम शारीरिक हो अथवा मानसिक। श्रमके बिना जीवन व्यर्थ है। आलस्यसे जीवन बिताना बेहोशीकी नींद सोना है। हमारा अभिप्राय केवल शारीरिक श्रमसे नहीं है, किंतु दुनियामें कष्ट और आपत्तियोंको सहन करना, दूसरोंको लाभ पहुँचाना, सभ्यता और सत्यताकी शिक्षा देना, अनाथों अपाहजोंसे सहानुभूति रखना और उनकी सहायता करना, साहस और धीरताका अभ्यास करना, निर्बलोंपर प्रबलोंका अत्याचार न होने देना, उनपर दयाभाव रखना और उनको अपने समान बनाना आदि अनेक उत्तम कार्योंसे है।

गणितज्ञ और धर्मज्ञ वक्ता बैरो (Barrow) का कथन है कि कोई सभ्य पुरुष यह बात पसंद न करेगा कि दूसरोंकी कमाईपर अपना जीवन व्यतीत करे या उस कीड़ेके समान रहना स्वीकार करे जो अनाजके कोठेमेंसे दाना चुराता रहता है। वह यही चाहेगा कि मैं दूसरोंके सहारेसे अपनेको जुदा करके पब्लिककी सेवा और सहानुभूतिमें अधिकतर योग दूँ। क्योंकि राज्यप्रबन्धसे लेकर कुलीके कामतक ऐसा कोई भी काम नहीं है जो किसी बिना प्रकारके शारीरिक अथवा मस्तकसम्बन्धी परिश्रमके अच्छी तरह हो सके।

परिश्रम केवल एक आवश्यकता ही नहीं है किंतु इसमें हर्ष और आनंद भी है। एक दृष्टिसे देखा जाय तो हमारा जीवन प्रकृतिके विरुद्ध है; किंतु दूसरी दृष्टिसे देखा जाय तो वह प्रकृतिका सहकारी है। वायु, पृथिवी, सूर्य आदि सदैव हमारे अंदरसे जीवन शक्तिको निकालते रहते है। उसको पूरा करनेके लिए ही हम खाते पीते और कपड़ा पहनते हैं।

प्रकृति हमारे साथ काम करती है। खेतीके लिए भूमि साफ करती है। जो बीज हम उसमें बोते हैं उसे उगाती और पकाती है। मानवी परिश्रमकी सहायतासे हमारे लिए रुई और अनाज पैदा करती है। हमें यह बात भी नहीं भूलनी चाहिए कि राजासे लेकर रंकतकके लिए जितनी चीजें खाने, पीने, पहननेके काममें आती हैं अथवा रहनेके लिए बड़े बड़े महलोंमे लेकर छोटे छोटे झोपड़ोंतक जो स्थान बनाये जाते हैं, वे सब परिश्रमके ही फल हैं।

मनुष्य एक दूसरेकी आवश्यकताओंको पूरी करनेके लिए आपसमें मिलते हैं। किसान जमीन जोतकर अन्न पैदा करता है, जुलाहा सूत बुनकर कपड़ा तैयार करता है और दर्जी उसे काट छाँट करके उमदा तरीकेसे सी देता है। राजमजूर मकान बनाते हैं जिनमें हम सुख चैनसे रहते हैं। इस तरह हर एक व्यक्ति एक दुसरेकी जरूरतको पूरी करता है।

कैसी ही भद्दी चीज़ क्यों न हो, यदि उसमें परिश्रम और योग्यता सर्फ़ की जाय, तो वह एक सुंदर रूपमें बदलकर बहुमूल्य वस्तु हो जायगी। मनुष्यमें परिश्रमका होना ऐसा ही जरूरी है जैसे शरीरमें आत्माका होना। यदि यह गुण निकाल लिया जाय तो मनुष्यजाति तत्काल यमलोकको पहुँच जाय। सेंट पाल (Saint Paul) का कथन है कि "जो काम नहीं करेगा वह भूखों मरेगा।" यही कारण था कि वह स्वयं अपने हाथसे काम किया करता था।

उदाहरणके लिए एक बूढ़े किसानकी कहानी लिखी जाती है। उसने मरते समय अपने तीन आलसी बेटोंको बुलाकर कहा कि अमुक खेतमें जो मै तुम्हारे लिए छोड़े जाता हूँ बहुतसा धन गड़ा हुआ है। यह सुनते ही लड़के उछल पड़े और पूछने लगे कि पिताजी, वह धन कहाँ गड़ा हुआ है? बापने उत्तर दिया, सुनो, बताता हूँ; किंतु तुम्हें उसे खोद कर निकालना पड़ेगा। अभी उसने ठीक ठीक स्थान नहीं बतलापाया था कि उसका दम निकल गया। उसके मरनेपर रुपयोंके लोभसे बेटोंने तमाम खेत

खोद डाला परंतु कुछ न निकला । लाचार होकर उन्होंने उसमें बीज बो दिया और फसलके वक्त उस खेतमें बेहद अनाज पैदा हुआ। इसका कारण केवल यह था कि उन्होंने रुपयेके लोभसे जमीनको खोदखोदकर बहुत अच्छी बना ली थी। जमीनकी पैदावारसे उन्हें बहुत कुछ लाभ हुआ । तब उन्होंने समझा कि यह वही धन है जिसको हमारे बापने मरते समय बतलाया था।

यद्यपि शुरूमें परिश्रम कठिन और दूभर मालूम होता है किन्तु आदरसत्कार और हर्ष आनंद इसीसे प्राप्त होता है। निर्धनतासे इसकी समानता हो सकती है किंतु यश कीर्ति भी इसमें है। बिना परिश्रमके क्या मनुष्यत्व, क्या जीवन और क्या सभ्यता सब निरर्थक हैं। मनुष्यका गौरव परिश्रमसे ही है। सारा साहित्य विज्ञान इसहीकी कृपासे है। वह विद्या जिसके द्वारा हमको ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त होता है परिश्रमका ही फल है । यद्यपि परिश्रम एक प्रकारका बोझा है, किंतु वास्तवमें प्रतिष्ठा और गौरवका साधक है। जो लोग उच्च उद्देश्य और उच्च अभिप्रायोंसे परिश्रम करते हैं उनके लिए यह पूजा, प्रशंसा, कर्तव्य, नित्यता और अक्षयता है।

ऐसे बहुतसे मनुष्य हैं जो श्रमकी व्यवस्था पर दूषण लगाते हैं किंतु वे यह नहीं समझते कि यह केवल ईश्वरकी इच्छाके अनुकूल ही नहीं किंतु बुद्धिकी वृद्धि और अपने स्वभावसे पूर्ण लाभ उठानेके लिए अत्यंत आवश्यक है। दुनियामें आलसी मनुष्यसे बढ़कर कोई दूसरा निंद्य नहीं। उसका जीवन बिलकुल पोच और लचर है। उसके लिए इन्द्रियपोषणको छोड़कर और कोई काम

नहीं। क्या ऐसे मनुष्य सबसे जियादह अभागे और असंतोषी नहीं हैं? वे सदा शिथिलता और श्रान्तिकी दशामें पड़े रहते है। न तो स्वयं अपने लिए कुछ करते है और न दूसरोंको कुछ लाभ पहुँचा सकते है। वे एक ऐसे स्तम्भके समान हैं जिसने जमीनको व्यर्थ घेर रक्खा है। उनके जीनेसे न किसीको खुशी और न मरनेसे किसीको रंज। सच है, दुनियामें अत्यत घृणित और निकृष्ट आलसी ही है।

बड़े बड़े कामोंसे लेकर छोटे छोटे कामोंतक सबमें परिश्रमकी जरूरत है। सभ्यता, शिष्टता, परोपकार आदि सबकी उन्नति श्रम पर निर्भर है। जितने उपयोगी और बहुमूल्य विचार हैं वे सब श्रम और अनुभवके फल है। कोई भी काम चाहे छोटा हो चाहे बड़ा, चाहे शरीरका हो चाहे मस्तकका, विना परिश्रमके नहीं होता।

कोई बड़ा काम एकदम नहीं हो जाता किन्तु लगातार उद्योग और परिश्रमके बाद अवश्य हो जाता है। यदि बापसे न हुआ तो बेटेसे हो जायगा। परिश्रमसे छोटे दर्जेके मनुष्य भी बड़े दर्जे पर पहुँच जाते है और गौरव तथा प्रतिष्ठाके पात्र हो जाते है। विद्या तथा कलाकौशलके इतिहासमें प्रायः उन्हीं लोगोंके नाम है जो अपने जीवनकालमें परिश्रमी थे। जैसे एक लुहारने स्टीम एंजिन बनाया, एक नाईने रुई कातनेकी कल जारी की और बहुतसे कारीगरोंने—लगातार एकके बाद दूसरेने—यंत्रविद्यामें सफलता प्राप्त की।

परिश्रमसे हमारा अभिप्राय केवल शारीरिक परिश्रमसे नहीं है क्योंकि यह तो पशु भी करते हैं; किंतु वह पुरुष परिश्रमी कहा जा सकता है, जो मस्तकसे भी काम लेता है और जिसकी

शारीरिक शक्ति मस्तककी शक्तिके आधीन है। चित्रकार, ग्रंथकार और कवि, इनकी गणना उच्च जातिके परिश्रमियोंमें है। यद्यपि शरीर-पोषणके लिए यह परिश्रम इतना जरूरी नहीं किंतु समाज या संघको सभ्य और शिक्षित बनानेके लिए बड़ा जरूरी है।

परिश्रमकी आवश्यकता पर इतना ही कहकर अब हम यह दिखलाना चाहते हैं कि इससे जो लाभ होते है उनका किस प्रकार उपयोग किया जाता है। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि यदि हमारे बाप दादा हमारे लिए काफी सामान न छोड़ जाते, तो हम पूर्ववत् असभ्य और गँवार रहते। हम पूर्वमें कह आये हैं कि मितव्ययिता सभ्यताके साथ प्रारम्भ हुई और अब हम बलपूर्वक कहते हैं कि मितव्ययितासे ही सभ्यता प्राप्त होती है। इसीसे धन पैदा होता है और धन परिश्रमसे मिलता है। अतएव धनवान् केवल वही पुरुष है जो अपनी सारी आमदनी खर्च नहीं कर देता।

किंतु मितव्ययिता स्वाभाविक गुण नहीं है। इसकी प्राप्तिके लिए उद्योग करना पड़ता है, इच्छाओंका निरोध करना पड़ता है और दूरदर्शिता और विचारशीलताको दृष्टिगोचर रखते हुए विषयवासनाओंका दमन करना पड़ता है। मितव्ययिता आजकी जरूरतको पूरा करती है और कलके लिए सामग्री इकट्ठा करती है।

एडवर्ड डेनिसन (Edward Denison) साहबका कथन है कि "मनुष्यको सदैव भावी आवश्यकताओंका खयाल रखना जरूरी है। उसे सदा परिणामदर्शी होना चाहिए। जो परिणामदर्शी है वह मानो अस्त्र शस्त्र धारण किए हुए तैयार खड़ा है। भविष्यके लिए तैयार रहना सर्वोत्तम गुण है।"

परंतु दुनियामें उन्हीं लोगोंकी संख्या अधिक है जो भविष्यका कुछ भी खयाल नहीं करते–वे अपनी भूत अवस्थाको भी बिल्कुल भुला देते है। उनको केवल वर्तमानकी चिंता है। वे न अपने लिए जमा करते हैं और न अपने कुटुम्बके लिए कुछ बचाते हैं। जितना कमाते हैं सब खर्च कर डालते हैं। उनकी आमदनी जियादह भी है किंतु सब उड़ा देते है। ऐसे पुरुष सदा निर्धन और दरिद्र रहते हैं।

ठीक यही हाल प्रत्येक देश और समाजका है। जो देश अपनी आमदनीका सारा भाग खर्च कर डालता है और भविष्यके लिए कुछ जमा नहीं करता उसके पास कोई पूँजी नहीं होती। उसकी दशा उन अपव्ययी मनुष्योंके समान है जो जितना कमाते है सब चटोरपनमें उड़ा देते हैं और गाँठमें कौड़ी भी नहीं रखते। जिस देशमें धन नहीं होता वह किसी प्रकारका व्यवसाय नहीं कर सकता। न उसमें जहाज़ होते है, न रेलें होती है और न सड़कें। अतएव मितव्ययिताके साथ परिश्रम ही सभ्यताकी जड़ है।

स्पेन देशको देखो। वहाँके निवासी जिस भूमिकी उपजको बहुत जियादह समझते है वह हमारे यहाँ बहुत कम दर्जेकी गिनी जाती है। पहले वहाँ एक नदीके किनारे पर १२००० ग्राम आबाद थे किंतु अब उनकी संख्या सिर्फ़ ८०० रह गई है और वे भी कंगालों और भिखमंगोंसे भरे हुए है। स्पेनके लोग कहा करते हैं कि जमीन अच्छी है, आकाश अच्छा है सिर्फ़ वे ही चीजें ख़राब

हैं जो जमीन और आकाशके बीचमें हैं। रूपेनवालोंके लिए लगातार मिहनत करना एक असम्भव बात है। कुछ तो आलस और कुछ अभिमानके कारण उनसे परिश्रम नहीं होता। उन्हें काम करनेमें तो शर्म मालूम होती है परंतु भीख माँगनेमें कुछ भी शर्म नहीं।

समाजमें दो प्रकारके मनुष्य होते हैं;—जोड़नेवाले और खर्च करनेवाले, दूरदर्शी और अदूरदर्शी, मितव्ययी और अपव्ययी, निर्धन और धनवान्।

जो मनुष्य परिश्रम करके मितव्ययितासे कुछ रुपया जमा कर लेते हैं वे अपने काममें दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करते हैं और धीरे धीरे वाणिज्य व्यापार प्रारम्भ करके थोडे ही दिनोंमें धनवान् बन जाते है।

जो लोग मितव्ययी हैं वे मकान बनवाते है, कल कारखाने खोलते है, कोठियाँ कायम करते हैं, रेल जहाज बनवाते है, खानें खुदवाते हैं, एंजिन लगवाते हैं, अर्थात् भाँति भाँतिके नये नये काम जारी करते हैं।

यह सब मितव्ययिताका फल है और धनको उत्तम कार्योंमें लगानेकी महिमा है। जगतकी उन्नतिमें अपव्ययी मनुष्यका कोई भाग नहीं। जितनी उसकी आमदनी है वह सब खर्च कर डालता है। उससे किसीको लाभ नहीं पहुँचता। चाहे वह कितना ही धन पैदा कर ले उसकी दशामें किसी तरहकी कोई उन्नति नहीं होती। वह सदा दूसरोंका सहारा तकना है और मितव्ययी मनुष्यका दास बना रहता है।

दूसरा अध्याय ।

मितव्ययिताका अभ्यास ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१. सबसे बड़ा काम अपने आपको वशमें करना है ।

२. बहुतसे लोग वर्तमानके लिए परिश्रम करते हैं और थोड़ेसे भविष्यके लिए । किंतु बुद्धिमान् जन वर्तमान और भावी दोनोंके लिए करते है, अर्थात् आज कलके लिए और कल आजके लिए ।

३. सारी सफलताका गुप्त रहस्य अपनी इच्छाओंका निरोध करना है ...... । यदि तुम एक बार अपने पर काबू पा जाओ तो यह (काबू) सर्वोत्तम शिक्षक है । जब तुम मुझे यह सिद्ध करके दिखलाओगे कि तुम अपनेको वशमें कर सकते हो तब मै कह सकूँगा कि तुम शिक्षित हो, नहीं तो इसके बिना तुम्हारी सारी शिक्षा किसी भी कामकी नहीं ।

४. सारी दुनिया चिल्ला रही है कि ऐसा कौन व्यक्ति है जो हमको बचावे । हमको ऐसे व्यक्तिकी जरूरत है । उसके लिए दूर मत जाओ । वह तुम्हारे पास है । वह तुम हो, मै हूँ और हममेंसे हर एक है ।...... हम अपनेको मनुष्य कैसे बनावें ? इसकी बराबर कोई कठिन काम नहीं, यदि हम यह नहीं जानते कि किस तरह इसके लिए दृढ संकल्प करना चाहिए और इसकी बराबर कोई काम आसान नहीं यदि हम इसके लिए दृढ संकल्प करनेको तैयार है ।

* * * * *

हम सुख और शान्ति तब प्राप्त कर सकते है, जब हम उनके प्राप्त करने और उनसे लाभ उठानेके लिए उचित उपायोंको काममें

लावें। जो लोग अच्छी मजूरी पाते हैं वे धनवान् बन सकते हैं और संसारकी भलाई और उन्नतिमें भी पूरा योग दे सकते हैं; किंतु यह बात कि वे अपनी या अपनी जातिकी दशामें किसी प्रकारकी संतोषजनक उन्नति करें, केवल उनके परिश्रम, साहस, सत्य और परिमितव्यय पर निर्भर है।

किसी समाजको धनके अभावसे इतनी हानि नहीं पहुँचती जितनी धनके व्यर्थ नष्ट करनेसे पहुँचती है। धन पैदा करना आसान है किंतु उसका खर्च करना कठिन है। किसी व्यक्तिके धनका अंदाजा उसकी आमदनीसे लगाना ठीक नहीं; किंतु उसके खर्च और गृहप्रबन्धकी योग्यतासे लगाना चाहिए। जब कोई मनुष्य परिश्रम करके अपनी तथा अपने कुटुम्बकी आवश्यकताओंसे अधिक पैदा कर लेता है और खर्च करके कुछ बचा भी लेता है तो समझ लेना चाहिए कि निःसंदेह जात्युपकारके अंश उसमें विद्यमान हैं। चाहे बचतकी रकम थोड़ी ही क्यों न हो, तो भी वह उसको स्वतंत्र रखनेके लिए बहुत है।

जिस कारीगरको आज अच्छी मजूरी मिलती है, कोई कारण नहीं कि वह एक दिन धनवान् न बन जावे। यह केवल इंद्रियोंको वशीभूत करने तथा घरका योग्य प्रबंध करनेसे हो सकता है। आज जितने बड़े बड़े शिल्पनेता देखनेमें आते हैं वे प्रायः मामूली हैसियतके लोगोंके घर पैदा हुए हैं। काम करनेवाले और न करनेवालेमें केवल अनुभव और चातुर्यका अंतर है। यह काम करनेवाले ही पर निर्भर है कि वह अपने रुपयेको बचावे अथवा खोवे।

यदि वह बचावेगा तो उसे उसके खर्च करनेके सदैव बहुतसे अवसर मिलेंगे।

एक महाशय कहते हैं कि "एक दिन मैंने अपने कुछ मित्रोंसहित एक कारखानेका अवलोकन किया जिसमें ८०० मशीनें और तीन चार हजार आदमी काम कर रहे थे। जब हम लौटने लगे, तब मेरे एक मित्रने कारखानेके मालिकके कंधे पर हाथ रखकर हँसते हुए कहा कि '२५ वर्ष पहले ये महाशय भी एक कारीगर थे और यह तमाम कारखाना इनके ही श्रम और मितव्ययिताका फल है।' यह सुनते ही मालिकने मुसकराते हुए उत्तर दिया, 'नहीं, यह तमाम मेरी वजहसे नहीं है बल्कि मेरी स्त्री भी जब मैंने उससे शादी की प्रतिदिन कपड़ा बुनकर एक रुपया कमा लिया करती थी।'

• समयको सावधानीसे काममें लाना मानो धनको सावधानीसे खर्च करना है। फ्रैंकलिन (Franklin) महोदयका कथन है कि "समय एक अमूल्य रत्न है। यदि किसीको धनप्राप्तिकी अभिलाषा है, तो उसे उचित है कि समयको योग्य रीतिसे खर्च करे। ज्ञान, विज्ञान, शिल्प, साहित्यादि अनेक उत्तम कार्योंमें समयका सदुपयोग हो सकता है। नियमपूर्वक चलनेसे बहुत कुछ समय बच सकता है और उद्देश्योंकी पूर्ति भी हो सकती है। प्रत्येक कार्य व्यवस्थित और नियमपूर्वक होना चाहिए। गृहिणीके लिए भी इस गुणकी अत्यन्त आवश्यकता है। प्रत्येक वस्तुके लिए नियत स्थान होना चाहिए और हरएक चीज़ अपनी जगहपर होनी चाहिए। हरएक कामके लिए वक्त होना चाहिए और हरएक काम वक्त पर होना चाहिए।

इस बातके दिखलानेकी जरूरत नहीं कि मितव्ययिता कैसी और कितनी उपयोगी है। कोई नहीं कह सकता कि इसका पालन नहीं करना चाहिए। इसके अगणित उदाहरण हमारे सामने मौजूद हैं। पहलेके लोग जो काम कर गये हैं उन्हें हम भी कर सकते हैं। मितव्ययिता कोई हानिकारक या दुःखप्रद भी नहीं है बल्कि इसके विपरीत यह हमको अपमान, अवज्ञा और घृणासे बचाती है। यद्यपि इसके अनुसार प्रवर्तनेसे हमको अपनी वासनाओंका दमन करना पड़ता है, किंतु यह हमें योग्य सुखों और उचित भोगोंसे वंचित नहीं रखती। यह हमारे लिए अनेक पवित्र सुख और आनंदकी सामग्री प्रदान करती है जिनसे अमितव्ययी और अपव्ययी सर्वथा वंचित रहते हैं।

किसी व्यक्तिको यह कदापि न कहना चाहिए कि मैं परिमित-व्यय नहीं कर सकता। ऐसे बहुत कम पुरुष हैं जो साप्ताहिक रुपया दो रुपये भी नहीं बचा सकते। यदि एक रुपया भी साप्ताहिक बचाया जावे तो २० सालमें १००० रु० हो जावेंगे और दश वर्ष बाद सूद वगैरह लगाकर कई हजार हो जावेंगे। यदि तुम एक रुपया साप्ताहिक भी नहीं बचा सकते तो न सही, ॥), ।), =) ही बचाना शुरू करो, किंतु करो जरूर। सेविंग बैंक हर जगह मौजूद है, उनमें जमा करना अभी शुरू कर दो—चाहे कितनी ही थोड़ी रकम क्यों न हो। इससे मितव्ययिताका अभ्यास होने लगेगा जिसकी कि बहुत बड़ी आवश्यकता है।

मितव्ययिताके लिए किसी असाधारण शक्ति, साहस अथवा योग्यताकी आवश्यकता नहीं है और न यह कोई ऐसा काम

है जिसके अनुसार चलना मनुष्यकी शक्तिसे बाहर हो। इसके लिए साधारण बुद्धिकी आवश्यकता है । हाँ, इस बातकी बड़ी जरूरत है कि मनुष्य स्वार्थयुक्त भोगविलासोंसे मुँह मोड़ ले। वास्तवमें मितव्ययिता प्रतिदिनके कार्य्यमें एक साधारण बात है। इसके लिए किसी बड़े भारी इरादेकी जरूरत नहीं है; केवल संतोष और इन्द्रियदमनकी जरूरत है । इसका प्रारंभ करना ही इसका उपाय है। ज्यों ज्यों इसका अभ्यास किया जायगा त्यों त्यों सरलता होती जायगी और शीघ्र उन बातोंका बदला मिल जायगा जिनके त्याग करनेमें शुरूमें कठिनाई पड़ी थी।

यहाँ प्रश्न किया जा सकता है कि क्या यह संभव है कि वह व्यक्ति भी जिसकी आमदनी बहुत ही थोड़ी है और सबकी सब कुटुंबपालनमें लग जाती है, कुछ बचा सकता है और सेविंग बैंकमें जमा कर सकता है? इसका उत्तर यही है कि हाँ, बहुतसे बुद्धिमान् और परिश्रमी पुरुष ऐसा करते हैं; वे कुछ न कुछ बचाकर सेविंगबैंक वगैरहमें अवश्य ही जमा करते रहते है। जब कुछ मनुष्य ऐसा कर सकते है तब सबको बिना किसी उचित सुखका त्याग किये, अवश्य ऐसा करना चाहिए।

यह बात कितनी स्वार्थयुक्त है कि कोई व्यक्ति योग्य वेतन मिलने पर भी अपनी सारी आमदनी अपने लिए भोगविलासकी सामग्री संचय करनेमें ही खर्च कर दे, अथवा यदि उसके बचे हैं तो उनके लिए ही खर्च कर दे और कुछ भी न बचावे। हम देखते हैं कि अनेक मनुष्योंकी आमदनी जीवनकालमें अच्छी रही किन्तु उन्होंने कुछ भी संचय न किया—सबका सब खर्च कर दिया। उनके

मरनेपर उनकी स्त्री और बालबच्चे पैसे पैसेके लिए घर घर भीख माँगने लगे । न उनका कोई रक्षक, न उनको कोई पूँछनेवाला। वे चाहे जीवें, चाहे मरें । कहिए उनसे जियादह स्वार्थी और अपव्ययी कौन होगा ?

यदि कुछ भी विवेकसे काम लिया जाय तो ऐसा परिणाम कभी न हो । अन्नपानादिमें यदि थोड़ी भी कमी कर दी जाय तो सबका सब रुपया अपने ही लिए खर्च करनेके बदले थोड़े दिनोंमें कुछ न कुछ दूसरोंके लिए भी जमा हो जायगा । हाँ, यह मनुष्यका मुख्य कर्त्तव्य है कि चाहे कितनी ही थोड़ी रकम क्यों न हो किंतु वह अवश्य बचावे जिससे आपत्तिकालमें जिसमें कि मनुष्य कभी न कभी अचानक फँस ही जाता है, उसके तथा उसके कुटुंबियोंके काम आवे।

मिलान करनेसे जान पड़ता है कि बहुत कम आदमी धनवान् हो सकते है; किन्तु यह शक्ति प्रत्येक आदमीमें है कि परिश्रम और मितव्यायितासे अपनी जरूरतोंको पूरा कर सके और इतना रुपया भी जमा कर सके जो उसे बुढ़ापेमें निर्धनताके कष्टसे बचा सके । मितव्यायितामें अवसरका न मिलना बाधक नहीं होता, किन्तु दृढ संकल्पका न होना बाधक होता है । मनुष्य लगातार शारीरिक और मस्तकसम्बन्धी परिश्रम कर सकते है, किन्तु अपव्यय और अमितव्ययसे जीवन व्यतीत करना नहीं छोड़ते ।

इच्छाओंको वशीभूत करनेकी अपेक्षा भोगविलासमें रहना लोग अधिक पसन्द करते हैं । वे जो कुछ कमाते है सब खर्च कर डालते हैं । केवल परिश्रमी पुरुष अपव्ययी नहीं होते । नित्य सुननेमें आता है कि लोगोंने वर्षोंतक सैकड़ों रुपये कमाये,

परंतु जब वे अकालमृत्युके ग्रास हो गये तब उन्होंने अपनी संतान-के लिए एक कौड़ी भी बाकी न छोड़ी। उनकी मृत्यु पर वही घर जिसमें वे रहते थे और वही सामान जिससे वह मकान सजा रहता था दूसरोंके घर चल जाता है। उनकी बिक्रीसे जो रुपया आता है उससे ही उनकी क्रियाकर्म वगैरहका खर्च किया जाता है और वह कर्ज़ चुकाया जाता है जो उन्होंने अपने जीवन कालमें लिया था।

धन सैकड़ों व्यर्थ और निर्मूल पदार्थोंका प्रतिनिधिस्वरूप है। किन्तु साथ ही वह एक अति अमूल्य वस्तुको भी प्रकट करता है, जिसे स्वतंत्रता कहते है। इस ख़यालसे यह एक बहुत ही ज़रूरी चीज़ है। और जब धन स्वतंत्रताका कारण है तो मितव्ययिता छोटे दर्जेसे निकलकर उच्च माननीय पद पर आरूढ़ हो जाती है। बुल्वर (Bulwer) का कथन है कि "रुपयेके मामलेमें कभी छिछोरापन न करना चाहिए। रुपया गुण, यश, गौरव और चरित्र है। मनुष्यके सत्य, शील, उदारता, दयालुता, न्यायपरायणता, दूरदर्शिता, आदि उत्तम गुण धनके योग्य व्यय पर ही निर्भर हैं और लोभ, कृपणता, अपव्यय, अदूरदर्शिता आदि अनेक अवगुण रुपयेके दुरुपयोगसे पैदा हो जाते हैं।"

उस जातिकी कभी उन्नति नहीं हो सकती जिसने जो कमाया सो खा लिया। जो मनुष्य अपनी आमदनीका सारा रुपया खर्च कर डालते हैं वे सदा निर्धनताके किनारे पर आकाशमें लटके खड़े रहते हैं। वे विवश और निर्बल हैं, समय और अवसरके गुलाम हैं, अपनेको दरिद्र रखते हैं और न केवल अपना गौरव खोते है किंतु दूसरोंका भी खो डालते हैं। यह असम्भव है कि वे स्वाधीन या

स्वतंत्र रह सकें। मनुष्यको सारे उत्तम गुणोंसे वंचित कर देनेके लिए फिजूलखर्च या अपव्ययी होना ही काफ़ी है।

परंतु उस व्यक्तिकी दशा उससे सर्वथा भिन्न है जो कुछ बचाकर जमा करता है, चाहे वह थोड़ा ही क्यों न हो। वही थोड़ा धन जो उसने संचय किया है सदा उसको बल और शान्ति प्रदान करता रहता है। वह कभी समय और भाग्यका शिकार नहीं बनता और संसारकी घटनाओंका साहसपूर्वक वीरतासे सामना कर सकता है। वह अपना अधिकारी आप है, किसीके आधीन नहीं। न उसको कोई खरीद सकता है, न कोई बेच सकता है। वह स्वाधीन और स्वतंत्र है और वृद्धावस्थाके सुखशांतिमय आनंदका स्वागत करनेके लिए तैयार है।

मनुष्य ज्यों ज्यों विचारशील और बुद्धिमान् होता जाता है त्यों त्यों वह परिणामदर्शी और मितव्ययी होता जाता है। अविचारी पुरुष अपनी सारी आमदनी आज ही खर्च कर डालता है, कल-की कुछ भी चिंता नहीं करता, निर्धनता तथा अपने आश्रित बाल-बच्चोंके अधिकारोंकी भी परवा नहीं करता; किन्तु विचारशील पुरुष सदा भविष्यका खयाल रखता है। वह अच्छे वक्तमें बुरे वक्तके लिए तैयार हो रहता है और अपने कुटुम्बकी आवश्यकता-ओंको भी पूरी करता रहता है।

जो पुरुष विवाह करता है वह बहुत बड़ी भारी जिम्मेदारीको अपने सिर पर उठाता है; पर बहुत कम लोग इस पर विचार करते हैं। शायद इसमें भी कुछ बुद्धिमानी है! क्योंकि सम्भव है कि यदि इस पर दीर्घदृष्टिसे विचार किया जाय तो शादी विवाह होने ही

बंद हो जावें, फिर कोई जिम्मेदारी बाकी ही न रहे। परंतु जो पुरुष विवाह करे उसे तत्काल ही दृढ संकल्प कर लेना चाहिए कि निर्धनता यथाशक्ति और यथासम्भव मेरे घरमें कभी न घुसेगी और मेरे मरनेके बाद मेरे बालबच्चे समाज पर किसी प्रकारके भारस्वरूप न होंगे।

इस अभिप्रायसे मितव्ययिता मनुष्यका मुख्य कर्तव्य है। इसके बिना कोई सत्यवक्ता या धर्मात्मा नहीं हो सकता। अदूरदर्शिता स्त्री और बच्चोंके लिए अन्याय है। इस अन्यायका कारण अज्ञानता है। जो पिता अपनी सारी आमदनी तरह तरहके व्यसनोंमें या मौजशौकमें खर्च कर डालता है और कुछ भी नहीं बचाता वह अपनी निराश्रित संतानको जन्मपर्यंत दुःख सहनेके लिए छोड़कर चला जाता है। क्या इससे अधिक और कोई अन्याय हो सकता है? यह असावधानी प्रायः हरएक जातिमें अधिकतासे पाई जाती है। निम्न श्रेणीके लोगोंके साथ साथ मध्यम और उच्चश्रेणीके मनुष्य भी इस अपराधके अपराधी हैं। वे अपनी हैसियतसे बढ़कर फिजूल खर्च कर डालते हैं, बाहरी सज धज और ठाठबाटके हृदयसे इच्छुक रहते है और अपनेको धनवान् सिद्ध करनेका उद्योग करते है जिससे उन्हें शराब उड़ाने, दावतें खिलाने, नाच गायन कराने वगैरहमें खर्च करनेका मौका मिले।

एक बार जब मिस्टर ह्यूमने हाउस आफ़ कामन्स (House of Commons) में यह कहा था कि हमारे खर्च बहुत बढ़ रहे है, तब सबके सब श्रोता हँस पड़े थे, परंतु उनका कथन अक्षर अक्षर सत्य है। बल्कि उस कालकी अपेक्षा अब और भी सत्य है। हमारे

खर्च बहुत बढ़े हुए हैं। हम अपनी हैसियतसे बाहर खर्च करते हैं। हम अपनी आमदनीको व्यर्थ खोदेते हैं और बहुधा अपने जीवनको उसके पीछे नष्ट कर देते हैं।

बहुतसे आदमी रुपया पैदा करनेकी योग्यता रखते हैं परंतु किफ़ायतसे खर्च करना नहीं जानते। पैदा करनेमें तो चतुर हैं किंतु खर्च करनेमें मूर्ख हैं। लोग इन्द्रियजनित क्षणिक सुखोंमें बिना सोचे समझे फँस जाते हैं। यद्यपि असावधानीकी वजहसे ऐसा होता है तथापि लोग दृढचित्त तथा दृढसंकल्पद्वारा इस इच्छाको आसानीसे काबूमें रख सकते हैं जिससे उन्हें आगामीमें आकस्मिक खर्चोंके कारण कष्ट न उठाना पड़े।

बचानेका अभ्यास अधिकतर उस समय होता है जब अपनी जातिकी उन्नति अथवा अपने अधीनों तथा कुटम्बियोंकी दशा सुधारनेका ख़याल दिलमें हो। इस ख़यालसे तमाम फ़िज़ूलखर्ची और हरएक अनावश्यक चीज़की आवश्यकता कम हो जाती है। यदि ज़रूरत नहीं तो सस्तेस सस्ते दाममें खरीदी हुई चीज़ भी महँगी ही है। छोटे छोटे खर्चोंसे बड़े बड़े खर्च होने लगते हैं। बेज़रूर चीज़ोंके खरीदनेसे बहुत जल्द फ़िज़ूलखर्चीकी आदत पड़ जाती है। रोमके प्रसिद्ध सिद्धान्तवेत्ता सिसरो (Cicero) का कथन है कि "खरीदनेका जनून न होना ही मानो धनका जमा होना है।" बहुतसे लोगोंको चीज़ खरीदनेका मर्ज़ होता है। जहाँ उन्होंने कोई चीज़ सस्ती देखी कि वे तुरन्त ही उसे खरीदनेके लिए उत्सुक हो गये। यदि उनसे पूछा जाय कि इसकी क्या ज़रूरत है? तो जवाब देंगे कि इस समय तो कोई नहीं, पर हाँ, यह कभी न

कभी काम आही जायगी । ऐसे ही लोग बहुतसी पुरानी चीजें खरीद लेते हैं और अपना तमाम रुपया खो देते हैं । हेरेस वैल्पोल (Horace Walpole) ने एक बार कहा था कि "अब फिर कभी खरीद न होगी क्योंकि मेरे घरमें एक इंच भी जगह खाली नहीं रही और एक पाई भी नहीं बची । "

प्रत्येक व्यक्तिको अपनी युवावस्थामें इतना सामान जमा कर लेना चाहिए कि जिससे वृद्धावस्थामें आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत हो सके । उस मनुष्यकी दशा कैसी शोचनीय है जिसने अपने जीवनका अधिक भाग अच्छी दशामें बिताया किंतु अंतमें अन्न तकका साँसा पड़ गया और सिवा भीख माँगने और दूसरोंके आगे हाथ पसारनेके और कोई साधन निर्वाहका न रहा । अतएव यह विचार प्रत्येक मनुष्यके मनमें आदिसे ही दृढरूपसे जम जाना चाहिए कि परिश्रम करके किफ़ायतसे खर्च करना चाहिए जिससे भविष्यमें अपने तथा अपने कुटुम्बको लाभ हो ।

वास्तवमें युवावस्थामें ही बचानेका अभ्यास करना चाहिए और वृद्धावस्थामें उसे उदारतासे खर्च करना चाहिए; किंतु आमदनीसे जियादह कदापि नहीं । एक नवयुवकको जिंदगीके मैदानमें बड़ा लम्बा चौड़ा सफ़र तै करना है । इस अवस्थामें ही वह मितव्ययिताके सिद्धान्तोंका भलीभाँति अभ्यास कर सकता है । किंतु एक वृद्ध पुरुष अपनी जीवनलीला समाप्त करनेवाला है और यहाँसे अपने साथ कुछ नहीं ले जा सकता ।

पर ऐसा देखनेमें नहीं आता । प्रत्येक नवयुवककी यह इच्छा होती है कि मैं वैसी ही उदारता और स्वतंत्रतासे खर्च करूँ जिस

तरह मेरे माता पिताने किया। कभी कभी उनसे भी बढ़कर खर्च करनेको जी चाहता है और वह कर डालता है। परिणाम यह होता है कि वह शीघ्र ही ऋणके भारसे दब जाता है,अपनी लगातार जरूरतोंको पूरा करनेके लिए अनुचित और पापमय उपायोंको काममें लाता है, रुपया शीघ्र पैदा करनेकी कोशिश करता है और इसके निमित्त शक्तिसे बाहर व्यापार करता है, किंतु अंतमें घाटा उठाता है। इस प्रकार उसे अनुभव तो हो जाता है, किंतु यह अनुभव अच्छे कामका नहीं होता बुरे कामका होता है।

विश्वविख्यात महात्मा सुकरात (Socrates) का कथन है कि "प्रत्येक कुटुम्बके पिता अर्थात् नेताको अपने मितव्ययी पड़ोसीका अनुकरण करना चाहिए और उन पुरुषोंके जीवनसे लाभ उठाना चाहिए जो अपनी आमदनी उत्तम रीतिसे खर्च करते हैं।" मितव्ययिताका पालन करना अत्यन्त आवश्यक है। यह सर्वोत्तम गुण दृष्टान्तों द्वारा खूब समझमें आसकता है। मान लो कि दो पुरुष हैं; प्रत्येककी आमदनी प्रतिदिन ९)रु० है। दोनोंके रहने सहनेके ढंग और घरके खर्च भी एकसे हैं। एक तो कुछ जमा नहीं करता और कहता है कि मैं कुछ जमा नहीं कर सकता, किंतु दूसरा कहता है कि मैं जमा कर सकता हूँ और नित्य थोड़ा थोड़ा रुपया सेविंग बैंकमें जमा करता जाता है। फल यह होता है कि एक दिन वह धनवान् कहलाने लगता है।

सेमवल जानसन (Samuel Johnson) दरिद्रताके कष्टोंसे भलीभाँति परिचित था। वह ऐसा दरिद्र था कि एक बार उसने अपने नामके स्थानमें जानसन न लिखकर डिनरलेस (Dinnerless

अर्थात् जिसको खाना न मिले) लिख दिया था! वह जंगलियोंकी तरह गलियोंमें फिरा करता था और उसे इतनी जगह भी नहीं मिलती थी कि रातके वक्त कहीं पड़ रहे। जानसनकी प्रारम्भिक अवस्था ऐसी दरिद्रतामें बीती कि वह उसे तमाम उमर नहीं भूला। वह सदा अपने मित्रों और पाठकोंको समझाया करता था कि निर्धनतासे बचना चाहिए। सिसरोके समान उसका भी मत था कि ऋद्धि और वृद्धिका सर्वोत्तम मार्ग मितव्ययिता है। वह मितव्ययिताको **दूरदर्शिताकी पुत्री, संयमकी भगिनी और स्वतंत्रताकी माता कहा करता था।** उसका कथन है कि "निर्धनतासे परोपकारके समस्त द्वार बंद हो जाते हैं और पापसे बचनेकी शक्ति सर्वथा नष्ट हो जाती है। अतएव प्रत्येक शुभ उपायसे इसके दूर करनेकी कोशिश करनी चाहिए। दृढ संकल्प कर लो कि दरिद्र नहीं होंगे। जो कुछ तुम्हारे पास है, उससे कम खर्च करो। मितव्ययिता केवल सुख शांतिका ही आधार नहीं है, किंतु परोपकारका भी मूल है। वह मनुष्य कभी दूसरेकी सहायता नहीं कर सकता जिसे स्वयं सहायताकी आवश्यकता है। दूसरेको देनेसे पहले अपने पास काफ़ी पूँजी जमा कर लेनी चाहिए।"

जानसनने और भी कहा है कि "दरिद्रता मानवीय सुखकी कट्टर शत्रु है। यह स्वतंत्रताका घात कर देती है। कुछ सद्गुणोंको असम्भव और कुछको कठिन बना देती है।" जो लोग दरिद्रतासे भयभीत रहते हैं उनको चाहिए कि अपने मितव्ययी पूर्वजोंके नीतियुक्त वाक्योंका स्मरण करें और अपव्ययसे बचनेके उपयोगी

उपाय ग्रहण करें। मितव्ययिताके बिना कोई धनवान् नहीं हो सकता और मितव्ययिता होते हुए कोई निर्धन नहीं हो सकता।

यदि मितव्ययिता पर इस भावसे दृष्टि डाली जाय कि इसका पालन करना कितना आवश्यक है तो फिर इसके पालन करनेमें कोई कठिनाई न होगी। जिन लोगोंने पहलेसे इसपर ध्यान नहीं दिया है उन्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि सिर्फ़ दो चार पैसे रोज़ बचानेसे भी कितनी चरित्र उन्नति, मानसिक वृद्धि और जातीय स्वतंत्रता प्राप्त होती है।

मितव्ययिताके लिए जितना उद्योग किया जाय उतना ही प्रशंसनीय है। इसके अनुसार काम करना ही इसकी उन्नति है। इससे स्वार्थत्यागका प्रादुर्भाव होता है और संयम वृद्धिको प्राप्त होता है। दूरदर्शिता पर इसकी नीव स्थिर है और दूरदर्शिता ही इसका मूल मंत्र है। यह विषय-वासनाओंको दमन करती है, सुख शान्ति प्रदान करती है और भय, चिंता, आकुलताको जिनमें हम लोग नित्य-फँसे रहते हैं, दूर करती है।

कुछ लोग कहते हैं कि यह नहीं हो सकता। पर यह ठीक नहीं। हरएक व्यक्ति कुछ न कुछ अवश्य कर सकता है। यह ख़याल कि 'नहीं हो सकता' पृथक् पृथक् व्यक्तिके और जातिके सर्वनाशका कारण है। इस 'नहीं हो सकता' से ज़ियादह बुरा और कोई 'नहीं हो सकता' नहीं है। यदि एक पैसा रोज़ पान तम्बाकूमें खर्च हो तो साल भरमें ६) रु० होंगे और अगर जिन्दगी भरका हिसाब लगाया जावे तो मरनेके समय कई सौ रुपये हो जावेंगे। यदि यह रुपया पान तम्बाकूके खर्चसे बचाकर किसी बैंकमें जमा

किया जाय तो २० वर्षमें १२० रु० हो जावेंगे। बहुतसे आदमी तो एके पैसेकी जगह छह छह पैसेके पान चाब जाते हैं। यदि ये पैसे जमा किये जावें तो २० वर्षमें ७००–८०० रु० हो जावेंगे। जो मनुष्य केवल दो आने रोज़की शराब पीता है, वह २० वर्षमें १००० रु० बरबाद कर देता है।

एक बार एक मालिकने अपने नौकरको सलाह दी कि कुछ रुपया बुरे दिनोंके लिए बचाकर रखना चाहिए। थोड़े दिनोंके बाद जब मालिकने नौकरसे पूछा कि "तुमने अपनी पूँजी कितनी बढ़ा ली?" तब उसने जवाब दिया कि "हुज़ूर, कुछ भी नहीं। मैंने निस्संदेह आपकी आज्ञानुसार जमा करना शुरू किया था किंतु कल इतने ज़ोरसे वर्षा हुई कि तमाम रुपयोंकी शराब पी डाली!"

जो मनुष्य अपनी तथा अपने कुटुम्बकी किसी दूसरेकी सहायताके बिना पालना करता है वह आत्मगौरवके असली अर्थको जानता है। प्रत्येक स्वावलम्बी पुरुषको अपनी गौरवरक्षा करना उचित है।

न्यायपूर्वक, मनुष्यको केवल अपनी ही भलाईका ख़याल नहीं रखना चाहिए किंतु दूसरोंके प्रति जो उसके कर्तव्य हैं उनका भी ध्यान रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त अपने आपको कभी नीचेकी ओर नहीं गिराना चाहिए, किंतु सदैव अपनेको उच्च बनाना चाहिए और देवताओंसे कुछ ही न्यून समझना चाहिए। उसे अपने उच्च पदका, प्रकृतिके शासनमें अपने उच्च अधिकारका, अपनी उच्च बुद्धिका, अपनी अद्भुत शक्तिका तथा पृथिवीपर अपने उच्चासन-

का सदैव स्मरण रखना चाहिए। जो कोई इन सब बातोंपर विचार करेगा वह अपनेको तुच्छ समझना तत्काल ही छोड़ देगा।

हर एक मनुष्यको अपने गौरवकी रक्षा करना चाहिए। अपने शरीरका, अपने मनका, अपने आचरणका आदर करना चाहिए। आत्मगौरव जो आत्मप्रियता पर निर्भर है, मनुष्यको उन्नतिकी पहली सीढ़ीपर चढ़ाता है। यह मनुष्यको उठाने, आगे चलने, उसकी बुद्धिके बढ़ाने और उसकी दशा सुधारनेके लिए उत्साहित करता है। आत्मगौरव स्वच्छन्दता, पवित्रता, सत्यता, गम्भीरता आदि अनेक उत्तम गुणोंकी खानि है। अपनेको नीचा समझना मानो अपनेको डुबा देना है और उस भयकर चट्टानके नीचे गिरा देना है जिसकी तलीमें कलंक और अपयश है।

किसी हद तक हरएक व्यक्ति अपनी सहायता कर सकता है। हम उस घासके समान नहीं जो नदीकी लहरमें फेंक दिया जाय और बहता चला जाय और जिसका किना चिह्नके और कुछ नजर न आवे। हम अपने कार्योंमें स्वतंत्र हैं और ऐसी शक्ति रखते हैं कि नदीकी लहरों पर अपनेको स्थिर रख सकते हैं। हममेंसे हरएक आचारणसम्बन्धी उन्नति कर सकता है, अपने विचारोंको बढ़ा सकता है और अच्छे काम कर सकता है। हम गम्भीरता और मितव्ययितामें जीवन व्यतीत कर सकते हैं, विपत्ति कालके लिए सामग्री संचय कर सकते हैं, उत्तम पुस्तकें पढ़ सकते हैं, बुद्धिमान् शिक्षकोंका उपदेश सुन सकते हैं और अपनेको ईश्वरीय शक्तिकी छत्रछायामें रख सकते हैं। हम उच्च उद्देश्योंको दृष्टिगत रखते हुए अपनेको उच्च कार्योंमें नियोजित कर सकते हैं।

एक कविका कथन है कि "अपनेको प्यार करना और समाजको प्यार करना एक ही बात है ।". जो व्यक्ति अपनी उन्नति कर सकता है वह जगतकी उन्नति कर सकता है । वह अपनी व्यक्तितासे समाजकी संख्यामें एक सत्यवक्ता पुरुषकी वृद्धि करता है । चूँकि समाज बहुतसे व्यक्तियोंके मिलनेसे बना है, इस लिए यदि किसी समाजका प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी उन्नति कर ले तो सारे समाजकी उन्नति हो जाय । समाजोन्नति व्यक्तिगत उन्नतिका ही परिणाम है। सर्वांग कभी पवित्र नहीं हो सकता जब तक कि उसके जुदा जुदा अंग पवित्र न हों । समाज व्यक्तिगत व्यवस्थाका प्रतिबिम्ब है। ये सब स्वयंसिद्ध सिद्धांतोंकी पुनरुक्तियाँ हैं, किंतु पूर्ण प्रभाव डालनेके लिए स्वतःसिद्ध वाक्योंकी पुनरुक्तियाँ की ही जाती हैं ।

जिस मनुष्यने स्वयं उन्नति कर ली है, वह अपने निकटवासियोंकी उन्नतिमें बहुत कुछ सहायता दे सकता है । उसमें इस बातकी शक्ति है । उसकी दृष्टिकी सीमा बढ़ी हुई है । वह दूसरोंकी उन त्रुटियोंको बहुत अच्छी तरह देख सकता है जो दूर करनेके योग्य हैं । उनको उन्नत अवस्थामें लानेके वास्ते वह हर समय सहायताके लिए तैयार है । वह स्वयं अपना कर्तव्य पालन कर चुका है और बलपूर्वक दूसरोंको अपने समान कर्तव्य पालनके लिए बाधित कर सकता है । वह व्यक्ति किसी समाजकी उन्नति नहीं कर सकता जो स्वयं विषयवासनाओंकी कीचड़में फँसा हुआ पड़ा है । जो व्यक्ति स्वयं मदोन्मत्त और अपवित्र है वह दूसरोंको संयम

या शुद्धता कैसे सिखला सकता है ? वैद्योंके पड़ोसी अकसर कहा करते हैं कि " वैद्यराज, पहले अपना तो इलाज कीजिए । "

इस कथनका यह तात्पर्य है कि जिस सुधार और उन्नतिकी हमको इच्छा है, हमें चाहिए कि पहले हम उसे आरम्भ कर दें। हमको अपने मत, तथा अपने विचारोंको अपने जीवनमें ही प्रकाशित करना चाहिए ! हमें अपनेको आदर्श बनाकर दिखलाना चाहिए। यदि हम चाहते हैं कि दूसरोंकी उन्नति हो, तो पहले हमें अपनी उन्नति करनी चाहिए। प्रत्येक मनुष्य स्वयं करके दिखला सकता है और इस कामको आत्मगौरवसे प्रारम्भ कर सकता है।

जीवनकी असारता इस बातके लिए बड़ी प्रेरणा करती है कि बुरे समयके लिए कुछ संग्रह कर लेना चाहिए। ऐसा करना धार्मिक, आत्मिक और सामाजिक कर्तव्य है। जो मनुष्य अपने और विशेषकर अपने कुटुम्बके लिए संग्रह नहीं करता वह धर्मसे पराङ्मुख है और नास्तिकसे भी बुरा है।

जीवनकी क्षणभंगुरता प्रत्यक्ष है । अत्यन्त बलवान् और निरोगी भी क्षणभरमें किसी दुर्घटना अथवा रोगके कारण मृत्युका ग्रास बन जाता है। अत एव जीवनकी अस्थिरता पर हमें वैसा विश्वास करना चाहिए जैसा हमें मृत्युका निश्चय है।

मनुष्यके जीवनका कोई निश्चय नहीं। कितने ही तो पैदा होते ही मर जाते हैं, कितने ही २० वर्षके होनेसे पहले और कितने ही ५० वर्षसे पहले मर जाते हैं । गिने चुने ही ६०, ७०, वर्षके देखनेमें आते हैं और ८०–९० वर्षके तो कहीं ढूँढे भी नहीं मिलते। यदि औसत लगाकर देखा जाय तो भारत के लोगोंकी

आयु २०, २९ वर्ष ही होगी। इसका कुछ न कुछ कारण जरूर है। बिना कारणके कोई कार्य नहीं होता। दैव या भाग्य संसारमें कोई वस्तु नहीं है। मनुष्य नियमानुसार पैदा होता है और नियमानुसार ही मरता है। नित्य ही देखनेमें आता है कि जीवनमें बहुत सी घटनायें होती हैं जिनको लोग दैवी घटना कहा करते है, परंतु यदि उनपर दीर्घदृष्टि डाली जाय तो वे जरूर किसी न किसी नियम पर स्थिर मिलेंगी।

यह मनुष्यका कर्तव्य है कि स्वास्थ्यसम्बंधी नियमोंको भलीभाँति जाने और रोग, शोक, अकालमृत्यु आदि दुर्घटनाओंके लिए पहलेसे तैयार हो रहे। प्रकृतिकी आज्ञाकी अवज्ञा करनेसे जो हानिकारक परिणाम होता है उससे हम कदापि नहीं बच सकते—प्रकृति अवश्य दण्ड देगी। चाहे हम लाख प्रार्थना करें किंतु प्रकृतिके दरबारमें हमें कदापि क्षमा न मिलेगी।

प्रकृतिके नियमोंको केवल जान लेनेसे ही काम नहीं चलता, हमको उनके अनुसार वर्ताव करना भी जरूरी है। सर्वशक्तिवान् परमात्मा हमारी अज्ञानताके कारण अपने नियमोंमें परिवर्तन नहीं करता। उसने हमको विवेक बुद्धि दी है जिससे हम उसके नियमोंको समझें और उसका पालन करें, अन्यथा शोक दुःखादि परिणामोंको हमें सहन करना चाहिए।

हम प्रायः लोगोंको यह कहते सुना करते हैं कि "क्या कोई हमारी सहायता नहीं करेगा!" ये निराशा और निरुत्साहके मृतक शब्द है। नहीं नहीं, त्रासजनक निकृष्टताके शब्द हैं; विशेषकर उस समय जब कि ये उन लोगोंके मुखसे निकलते हैं जो किंचित् स्वार्थ-

त्याग संयम और मितव्ययितासे बड़ी आसानीसे आप ही अपनी सहायता कर सकते हैं।

बहुतसे आदमियोंको अभी यह बात सीखना है कि धर्म, ज्ञान, स्वाधीनता आदि उत्तम गुण उन्हींमेंसे उत्पन्न हो सकते हैं। विधिस्थापनसे उनको कोई लाभ नहीं पहुँच सकता। वह उन्हें संयमी या बुद्धिमान् नहीं बना सकता।

अपव्ययी पुरुष विधिस्थापनका हास्य करता है और शराबी उसका अनादर करता है, दूरदर्शिता और इन्द्रियपराजयको घृणित दृष्टिसे देखता है और अंतमें अपनी विपत्ति और दुर्दशाका दोष दूसरोंके सिर मँढ़ता है। वे वक्ता कितने उल्टे मार्गपर जा रहे हैं जो अपने श्रोताओंको मितव्यय, संयम और आत्मगौरवका अभ्यास करानेके बदले, "क्या कोई हमारी सहायता न करेगा ?" इन्हीं शब्दोंके लिए उत्तेजित करते रहते हैं। इन शब्दोंसे दिल गिर जाता है और आत्मीय कल्याणके प्राथमिक सूत्रसे अनभिज्ञता प्रगट होती है।

उपकारका भाव मनुष्यमें स्वतः विद्यमान है। वह इसी लिए पैदा किया गया है कि अपनी उन्नति और वृद्धि करे और अपने लिए मोक्षमार्ग तलाश करे। जब निर्धनसे निर्धन व्यक्ति भी ये कार्य कर चुके हैं तो कोई कारण नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति इनको न कर सके। वीरता और दृढ़ताकी सदा जय होती है।

आजकल भारतमें भी अच्छा वेतन पानेवाले दस्तकारों और शिल्पकारोंकी संख्या बहुत बढ़ती जाती है। यदि ये लोग मितव्ययिताका पालन करें तो इनकी प्रतिष्ठा, स्वाधीनता, और सच्च-

रित्रतामें बहुत कुछ उन्नति हो सकती है और ये लोग उच्चावस्थापर पहुँच सकते हैं। परंतु ये लोग ऐसे अदूरदर्शी और अपव्ययी होते हैं कि न केवल अपनेको हानि पहुँचाते हैं किंतु जातिके लिए भी जिसके ये मुख्य अंग हैं, हानिकारक सिद्ध होते हैं। बढ़तीके समय-में तो ये लोग अपनी आमदनीको आँख मीच कर खर्च कर डालते हैं किंतु जब घटतीका समय आता है तब तत्काल आपत्तिमें फँस जाते हैं। यह धनका उपयोग नहीं, किंतु दुरुपयोग है। यदि कभी बुढ़ापे अथवा बाल बच्चोंकी शादी वगैरहके लिए थोड़ा बहुत जमा भी कर लेते हैं तो बहुत करके देखनेमें आता है कि शादी विवाहसे पहले ही किसी न किसी व्यसनमें पड़कर सबका सब बरबाद कर देते हैं। मदिरापान, और वेश्यासेवनकी तो मामूली आदत हो जाती है। इस कथनमें कोई अत्युक्ति नहीं है। इसकी सत्यताके लिए ज़रा दृष्टि पसारकर चारों ओर देखिए कि कितना रुपया खर्च होता है और कितना जमा किया जाता है। कितना शराबकी भट्टीमें जाता है और कितना बैंक वगैरहमें जमा किया जाता है।

बढ़तीके दिन अकसर बहुत ही घटतीके दिन होते हैं। इसमें संदेह नहीं कि बढ़तीके दिनोंमें प्रत्येक मनुष्यका कार्यव्यवहार उत्तम रीतिसे चलता है, आमदनी भी खूब होती है। लाखों मन असबाब रोज़ आता जाता है। सैकड़ों मालगाड़ियाँ रातदिन खचाखच भरी खड़ी रहती हैं। जगह जगह जहाज़ोंके बंदर कायम होते जाते हैं। हरएक आदमी खुशहाल और धनवान् मालूम होता है। परंतु हम नहीं खयाल करते कि इन तमाम बातोंसे स्त्री पुरुषोंमें कुछ

बुद्धिकी भी वृद्धि होती है अथवा वे स्वार्थ और विषयवासना-ओंसे चित्त हटाकर सभ्यता और शिष्टाचारकी ओर भी झुकते हैं। हमारी समझमें तो सिवा इसके कि पशुवत् इन्द्रियपोषण करते रहें और किसी धार्मिक अथवा सामाजिक कार्यमें उनका समय नहीं लगता।

यदि इस बाहरी सफलता पर ही दीर्घ दृष्टिसे विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि जिधर देखो खर्च बढ़ता जाता है। मजूरी बढ़ानेकी आवाज़ भी चारों ओरसे सुनाई पड़ती है; परंतु जितनी मजूरी बढ़ाई जाती है, उतनी ही जल्द वह खर्च हो जाती है। असंयमकी लत पड़ जाती है और वह दिन दिन बढ़ती जाती है। चाहे जितनी ज़ियादह मजूरी बढ़ा दो, लाभ कुछ नहीं होता। यदि कोई आज एक आनाकी शराब पीता है तो कल मजदूरी बढ़ने पर दो आनेकी पीवेगा। अतएव जो देश व जाति असावधान और अदूरदर्शी है उसको किसी प्रकारकी बढ़ती अथवा वृद्धि लाभ नहीं पहुँचा सकती। जबतक वह मितव्ययिता और दूरदर्शिताका पालन करेगी निर्धनता और दरिद्रताके अंधकूपमें पड़ी ही रहेगी।

यदि मनुष्यके जीवनका उद्देश्य केवल ' येन केन प्रकारेण ' रुपया पैदा करना ही होता, तो हम अपनी ऋद्धिवृद्धि पर अवश्य मोहित होते; किंतु मनुष्यके जीवनका उद्देश्य यह कभी नहीं है। उसमें शारीरिक अंगोंके अतिरिक्त प्रेम, उपकार, मित्रता आदिकी अनेक शक्तियाँ विद्यमान् हैं। उसके हृदय और मस्तक-को वे ही स्वत्व प्राप्त हैं जो उसके मुख और पीठको हैं। इनसे भिन्न उसमें एक आत्मा है। अतः ऋद्धिवृद्धिके साथ उसकी

बुद्धि और आचरणकी उन्नति होना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि नसों और हाड़ोंकी उन्नतिका होना।

केवल धन ही बढ़तीका चिह्न नहीं है। मनुष्यका स्वभाव एकसा रह सकता है; किंतु जब वह अपने खर्चको बढ़ाता है अथवा अपनी सम्पत्तिमें सैकड़ों रुपये सालकी वृद्धि करता है तब उसका स्वभाव नीचता और निर्बलताकी ओर अधिक झुक जाता है। जनसाधारणका यही हाल है। जबतक शारीरिक उन्नतिके साथ साथ सच्चरित्रता न चले तबतक धनवृद्धि भोगविलासकी सामग्री संचय करदेनेके सिवा और कुछ कार्यकारी नहीं है। यदि किसी अशिक्षित पुरुषकी आमदनी दुगुनी कर दी जाय तो इसके सिवा और कोई परिणाम न निकलेगा कि उसके भोगादिकके साधन विस्तृत हो जावेंगे। इस प्रकारकी बढ़तीसे जिसको अर्थशास्त्रके ज्ञाता देशकी बढ़ती कहा करते हैं कुछ भी लाभ नहीं होता। जब तक सच्चरित्रताके सिद्धान्तसे अनभिज्ञता रहेगी, हमारी रायमें, इस प्रकारकी बढ़तीसे लाभके स्थानमें उल्टी हानि ही होगी। केवल विद्या और सच्चरित्रता ऐसे गुण हैं जो मनुष्यके जीवनको प्रतिष्ठित बना सकते हैं और केवल इन्हीं सद्गुणोंकी वृद्धि किसी समाजकी वास्तविक उन्नति और वृद्धिका सच्चा चिह्न है।

एक बार मैंचेस्टरके लाट पादरीने अपनी वक्तृतामें दक्षिण इंग्लेंडके एक पादरी साहबके पत्रका हवाला दिया था। उन्होंने लिखा था कि "मुझे इस बातकी तो बड़ी खुशी है कि खेतोंमें काम करनेवालोंकी मजदूरी बढ़ गई है; परंतु इस बातका शोक है कि इस बढ़ी मजूरीका यह परिणाम हुआ कि

लोग नियादह शराब पीने लगे। यदि इस बढ़तीका यही उपयोग है तो हम इसको ईश्वरीय कृपा कदापि नहीं कह सकते।" किसी देश या समाजकी सच्ची बढ़ती इस बातमें नहीं है कि वह धन दौलतमें बढ़ रहा है। यद्यपि धनदौलतकी बढ़ती भी एक जरूरी चीज है किंतु वास्तविक बढ़ती इस बातमें है कि वह धर्म और सच्चरित्रतामें भी बढ़ रहा है और सुख संतोषादिसे पूरित है।

उपर्युक्त विचारोंसे हमारा यह कदापि तात्पर्य नहीं है कि कृपणताका अभ्यास किया जाय। हम कृपण मनुष्योंको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। हम केवल इस कारण विवाद करते हैं कि मनुष्यको भविष्यके लिए कुछ जमा कर लेना चाहिए। अच्छे समयमें बुरे समयके लिए कुछ बचाकर रख लेना चाहिए। जरूरतके लिए पहलेहीसे तैयार रहना चाहिए। इतनी पूँजी पास रखना चाहिए कि जो बुढ़ापेमें काम आवे, जिससे आत्मगौरव बना रहे, सुख शांति प्राप्त हो और समाज उन्नति करे। मितव्ययिताका लोभ, लालच अथवा स्वार्थसाधनसे कुछ सम्बन्ध नहीं। यह असलमें इन दुर्गुणोंसे सर्वथा प्रतिकूल है। इसका यही अभिप्राय है कि स्वतंत्रताकी रक्षा हो और धनका सदुपयोग हो। धन न्यायपूर्वक उपार्जन किया जाय और किफ़ायतसे काममें लाया जाय।

तीसरा अध्याय ।

अदूरदर्शिता ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१. प्रत्येक दशामें सुख उन लोगोंको प्राप्त है जिन्होंने अपनेको वशमें कर रक्खा है ।

२. जिन लोगोंके बाल बच्चे हैं उन्होंने मानो रुपयेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले रक्खी है ।

* * * *

यह तो कोई नहीं कह सकता कि आज कलके लोग परिश्रमी नहीं हैं । परिश्रमी अवश्य हैं और रुपया भी जी तोड़कर पैदा करते हैं, किंतु बात यह है कि दूरदर्शी नहीं हैं—दूरदर्शिताका उनमें अभाव है । इसी कारण उनकी दशा शोचनीय है । जो आज कमाते हैं आज ही उसे खर्च कर डालते हैं; कलके लिए कुछ बचाकर नहीं रखते । यदि दैवसे आज नौकरी छूट जाय, या तबियत खराब हो जाय तो बस कल सफाया है; घरमें खानेको अनाज तक न निकले । यह दशा केवल मजूरों अथवा छोटे लोगोंकी ही नहीं है, किंतु बड़े बड़े लोगोंकी भी यही दशा है । सौ सौ रुपये मासिक पानेवालों तकका यह हाल है

कि महीनेके पहले २० रोज तो कुशलतासे बीत जाते हैं, शेष १० दिन रो-झींककर कठिनाईसे निकल पाते हैं।

चाहे जितनी आमदनी बढ़ जाय उनकी दशा एकसी रहती है। वे अपनी आदतको नहीं छोड़ते। आमदनी बढ़नेमें देर लगती है किंतु खर्च बढ़ते देर नहीं लगती।

व्यापारमें सदा ही परिवर्तन हुआ करता है; किंतु अदूरदर्शी और अपव्ययी मनुष्य उससे कुछ शिक्षा ग्रहण नहीं करते और भविष्यके लिए कोई सामान जमा नहीं करते। अदूरदर्शिता क्या है मानो एक दुःसाध्य रोग है।

एक महाशय अपनी रिपोर्टमें एक ऐसे देशका हाल लिखते हैं कि यदि वहाँ दो सप्ताहके लिए भी काम बंद कर दिया जाय तो कारीगर लोग भूखों मरने लगें। यदि कभी हड़ताल डाली जाती है, तो माल असबाब बाज़ारमें बिकने लगता है, अपील पर अपील किये जाते हैं और धनवानोंके दरवाज़े खटखटाये जाते हैं। यह अदूरदर्शिता ही शिल्पकारोंके पतनका मुख्य कारण है। इसीसे जातिकी दुर्दशा है। हमारी यह दुर्दशा हमारी ही मूर्खता और हमारे ही स्वेच्छाचारसे है। यद्यपि परमात्माने दरिद्रताको उत्पन्न किया है; किंतु यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि निर्धन व्यक्ति बुरी दशामें रहे। दुश्चरित्रता और विशेषकर अदूरदर्शितासे विपत्ति और अभाग्यके कारण पैदा हो जाते हैं।

इंग्लैंड आदि देशोंमें शिल्पकारोंकी दशा सुधारनेके लिए बहुत कुछ प्रयत्न किया गया। उन लोगोंपर जो कर लगे हुए थे, वे भी छोड़ दिये गये; परन्तु उनकी दशा ज्योंकी त्यों रही। उन्होंने

कोई किसी प्रकारकी उन्नति नहीं की । न उन्होंने सुधारके नियमोंको अपने लिए नियोजित किया न उनका स्वयं अभ्यास किया। सुधारका मूल अभिप्राय व्यक्तिगत उन्नति है । यदि किसी समाजके उद्देश्य बुरे हैं तो समझना चाहिए कि उसका प्रत्येक सदस्य बुरा है और यदि सदस्य बुरे हैं तो कुल समाज बुरा है।

फ्रैंकलिन (Franklin) महोदयका कथन है कि "राज्यकी ओरसे हमपर जो कर लगे हुए हैं वे निस्संदेह कड़े हैं; परन्तु यदि केवल ये ही राजकीय कर हों तो हम बड़ी आसानीसे इनको अदा कर सकते हैं । हम पर तो और भी बहुतसे टेक्स लगे हुए हैं जो उनसे कहीं जियादह भारी हैं। हमको इतना टेक्स तो आलस्यसे, इससे दुगुना घमंडसे और चौगुना मूर्खतासे देना पड़ता है। अर्थात् इन दुर्गुणोंके कारण हमारा कितना ही रुपया और कितना ही समय नष्ट हो जाता है। यदि इस समयका सदुपयोग किया जाय तो टेक्ससे दुगुना तिगुना रुपया जमा हो जाय।" ऐसी दशामें पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि हमारा सरकारी टेक्सकी शिकायत करना कहाँतक ठीक है। क्या कोई राजा हमको इनसे मुक्त कर सकता है ? कदापि नहीं।

एक बार बहुतसे आदमी जमा होकर लार्ड जान रसल (Lord john Russell) के पास गये और उनसे प्रार्थना करने लगे कि "हमारे टेक्स माफ़ कर दिये जायँ।" लार्ड महोदयने उत्तर दिया कि "तुम लोग सरकारी टेक्सकी शिकायत करते हो, ज़रा सोचो तो कि तुमने स्वयं अपने ऊपर कितने टेक्स लगा रक्खे हैं। तुम लाखों रुपया प्रतिवर्ष केवल शराबमें खर्च कर देते हो। क्या कोई

सरकार इतना कर तुम पर लगा सकती है ! यह सर्वथा तुम्हारे अधिकारमें है कि बिना किसी अपील या कमीशनके इन टैक्सोंको कम कर दो।"

सिर्फ़ इस बातकी हाय हाय करनेसे कि कर भारी हैं, कानून ख़राब हैं, कोई काम नहीं चल सकता। किसी राज्यके अन्यायसे इतनी हानि नहीं पहुँच सकती जितनी बुरी इच्छाओंसे पहुँचती है। लोग प्रायः आलस्य, अपव्यय, असंयम, और कुचरित्र आदि बुरी वासनाओंसे ही अपने लिए हानिकारक हो जाते हैं। यह बात प्रत्यक्ष है कि जो लोग बिना किसी उद्देश्य या नियमके जीवन व्यतीत करते हैं और अपनी कुल आमदनी बिना किसी बचतके ख़र्च कर डालते हैं, वे मानो पहलेसे ही किसी आपत्तिमें फँसनेकी तैयारी कर रहे हैं। केवल वर्तमानकी चिंता करना क्या है मानो भविष्यमें भूखों मरना है। उन बेचारोंसे क्या आशा की जा सकती है जिनके जीवनका यही उद्देश्य है कि आज तो खा पी लेवें, कौन जाने कल जिये या मरे, या जो कहते हैं कि आज तो चैनसे गुजरती है कलकी परमात्मा जाने।

यद्यपि प्रत्यक्षमें इन बातोंसे निराशा प्रतीत होती है तथापि बिल्कुल निराश न होना चाहिए। जितनी शिक्षाकी उन्नति होती जायगी उतनी ही हमारी आर्थिक दशा सुधरती जायगी। हम अपने धनका सदुपयोग करने लगेंगे और नेकी तथा ईमानदारीसे जीवन व्यतीत करने लगेंगे। इसमें संदेह नहीं कि इस कार्यमें बहुत समय लगेगा, परन्तु हमको साहस और धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए।

चौथा अध्याय।

बचतके उपाय।

(विद्वानोंके वाक्य)

१. आत्मनिर्भरता और स्वार्थत्यागसे यह शिक्षा मिलती है कि मनुष्य-को उचित है कि आजीविकाके अर्थ शक्ति भर परिश्रम करे, सावधानीसे व्यय करे और भविष्यके लिए क्रम क्रमसे बचाकर जमा करे।

२. श्रमसे प्रेम करो। यदि पेटके लिए इसकी जरूरत नहीं है तो न सही, सम्भव है कि कभी वैद्योपचार अथवा औषधोपचारके लिए इसकी जरूरत पड़ जाय। यह शरीर तथा मन दोनोंको लाभदायक है। इससे आलस्य दूरसे ही भाग जाता है।

३. जो माता पिता अपने बालकोंको कार्यव्यवहार नहीं सिखलाते वे उनको चोर और डाकू बनना सिखलाते हैं।

* * * * * * *

आज कल देखनेमें आता है कि बहुतसे कारीगर दूकानदारों और नौकरी पेशावाले बाबू लोगोंसे कहीं जियादह कमाते हैं। एन्ट्रेंस-पास बाबुओंको २०) रु० की क्लर्की मुश्किलसे मिल पाती है। बी. ए.-पास ५०) रु० की जगह पर रख लीजिए; पर अनपढ़ मिस्त्री दर्जी वगैरह शिल्पकार दो दो रुपये रोज़ तक कमा लेते हैं। इतने पर भी ये लोग सदा बुरे हाल रहते हैं। बनियेके

ऋणसे इनका पीछा नहीं छूटता। भारतकी ब्राह्मण, वैश्य आदि उच्च जातियोंका भी यही हाल है। आमदनी इनकी कम नहीं, खाने पीने वगैरहके दैनिक खर्च भी अधिक नहीं; पर बात यह है कि ६, ७ वर्ष भूखों रह कर तनमन मसोस कर जो कुछ पैदा किया वह, तथा और ऋण लेकर लड़के लड़कियोंके विवाह शादियोंमें खर्च कर दिया और जातिके भाइयोंको दावतें देकर क्षण मात्रके लिए नाम पैदा कर लिया! बहुत से महात्मा ऐसे भी हैं कि जिसके शादी विवाह, जो कुछ बाप दादा छोड़ गये हैं उसे, जो स्वयं कमाते हैं उसे, तथा और भी ऋण लेकर खर्च करते जाते हैं—गाँठमें फूटी कौड़ी भी नहीं रखते। उनका रुपया शराबकी भट्टी, हलवाईकी दूकान और वेश्याके सत्कार पुरस्कारके लिए नियुक्त है।

हम लोगोंका यह स्वार्थ और अपव्यय किसी प्रकार प्रशंसनीय नहीं। जबतक हम इस स्वार्थ और अदूरदर्शिताका त्याग न करेंगे, नीच अवस्थामें ही गिने जावेंगे। अदूरदर्शिता निरा पाप ही नहीं है किंतु अत्यंत क्रूरता भी है। यह बात कितनी स्वार्थयुक्त है कि किसी कुटुम्बका नेता अपनी सारी आमदनी अपने लिए ही भोग विलासमें व्यय कर दे। उस पर बहुतसे भार हैं। उसका कर्तव्य है कि अपने बच्चोंका पालन पोषण करे, उनकी शिक्षाका यथोचित प्रबंध करे और अपने तथा अपने कुटुम्बके लिए सामग्री संचय करे। क्या आश्चर्य है कि वह कल बीमार हो जाय अथवा मर जाय! यदि उसके पास पूँजी नहीं है तो कल ही उसके बाल बच्चे भूखों मरने लगेंगे।

उन लोगोंको शिक्षा देना व्यर्थ जान पड़ता है जिन्हें अपने हानि लाभकी चिन्ता नहीं और अपनी उन्नति अवनतिकी परवा नहीं। उनके मित्रोंका कर्तव्य है कि उन्हें अच्छी तरह समझा दें कि यदि तुम गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त करना और स्वार्थके अंधकूप-से निकलना चाहते हो, तो तुमको दूरदर्शिता, मितव्ययिता और संयमका अभ्यास करना योग्य है और आत्मनिर्भरताका आश्रय लेना आवश्यक है।

आक्सफोर्ड (Oxford) के एक जूता बनानेवालेका कथन है कि जगतमें शिल्पकार सबसे ज़ियादह स्वतंत्र है। वह किसीके अधीन नहीं होता। वह जहाँ बैठ जाता है वहीं अपनी रोजी कमा लेता है। उसको किसीके सहारेकी जरूरत नहीं। यदि वह मामूली परिश्रमी और संयमी है तो भी सदा हृष्टपुष्ट और प्रसन्नचित्त रहेगा। उसके खान पान रहन सहनमें कोई कमी न आयगी। वह सदा अपनी गृहस्थीको उत्तम रीतिसे चला सकेगा, अपने बालकोंको शिक्षा दे सकेगा और समय समयपर दूसरोंकी भी सहायता कर सकेगा।

कितने शोक की बात है कि लोग अच्छी आमदनी होते हुए भी अपना कुल रुपया बुरी वासनाओंकी तृप्तिके लिए व्यय कर दें। कोई कोई तो आमदनीका आधा भाग केवल मदिरा पानमें ही उड़ा देते हैं और दूसरे दूसरे व्यसनोंका तो पूछना ही क्या है।

इँग्लेंडके एक शिल्पकार मिष्टर रोनेकने एक आम सभामें अपने व्याख्यानमें कहा था कि "क्या कारण है कि जिस शिल्पकार अथवा दूकानदारकी आमदनी अच्छी खासी है वह पशुवत् असभ्यतासे

रहता है। क्यों वह ऐसी दशा में रहता है इसका कोई कारण नहीं मालूम होता। उसको एक सभ्य शिक्षित पुरुषकी तरह रहना चाहिए। उसका घर मेरे घरके समान होना चाहिए। जब मैं दिनभर परिश्रम करके घर जाता हूँ तो अपनी प्यारी प्रफुल्ल-चित्ता विदुषी स्त्रीको देखकर सारा श्रम भूल जाता हूँ। मेरे एक पुत्री है वह भी अपनी माताके अनुरूप है। मै यह भी पूछना चाहता हूँ कि जब कोई व्यक्ति श्रम करके घर जाता है तब उसके खानेकी मेज मेरी मेजकी तरह सजी हुई क्यों नहीं रहती ! उसकी स्त्री और बालबच्चे साफ़ सुथरे क्यों नहीं रहते ! हम सब जानते हैं कि ये लोग इतनी आमदनी रखते हुए भी अपनी स्त्री और संतानको अच्छा कपड़ा नहीं पहना सकते, और अच्छा खाना नहीं खिला सकते। इनका सारा रुपया शराबकी दूकान पर चला जाता है। इन लोगोंको अपनी कमाई उसी तरह अपनी बुद्धिवृद्धि और मस्तककी शक्तिकी उन्नतिमें व्यय करनी चाहिए जिस तरह मैं अपनी कमाईको व्यय करता हूँ। इन लोगोंको यह बात अच्छी तरह समझा देनी चाहिए। जो इन बातोंको न बतलाकर उनकी झूठी प्रशंसा करता है, वह उनका मित्र नहीं शत्रु है।"

पूर्वकालमें दासत्वका सर्वत्र प्रचार था। शिल्पकारी तथा मजदूरीका काम दासोंसे ही लिया जाता था, परंतु उन्हें कोई वेतन या मजूरी नहीं दी जाती थी। मालिक अपनी इच्छानुसार उन्हें खाना कपड़ा दे दिया करता था। गाय बैल भैंसोंकी तरह मालिकका उनपर अधिकार था। वह जिसे चाहे उसको उन्हें बेच सकता

था। इस कारण उन बेचारोंको कभी जोड़ने या रखनेका अभ्यास नहीं हुआ। बचानेसे क्या लाभ है, इसकी आवश्यकताको उन्होंने कभी नहीं समझा। इसी तरह उन्हें अदूरदर्शिताका अभ्यास हो गया। यह अवगुण उनमें पूर्वसंस्कारवश अबतक विद्यमान है। परंतु अब वह समय नहीं रहा। अब दासत्वका मुँह काला हो गया है। सब स्वतंत्र और स्वाधीन हैं। इस अवस्थामें हमें अपने अवगुणको दूर करना उचित है। आत्मगौरव और संयमका पालन करना हमारा मुख्य धर्म है। भावी सुखके लिए वर्तमान सुखको कुछ विचारपूर्वक भोगना योग्य है। यही बातें है जिनसे हमारी दशा सुधर सकती है और हम अपनेको उन्नत अवस्था पर पहुँचा सकते हैं।

कुछ काल पहले शिल्पकारोंकी भले ही छोटे दर्जेके मनुष्योंमें गणना हो, किंतु अब वह बात नहीं है। अब उनका यथेष्ट आदर है। कलाकौशल्यका चारों ओर आंदोलन हो रहा है; नित्य नवीन नवीन आविष्कार हुआ करते हैं, तरह तरहके कल कारखाने खुलते जाते हैं, प्रत्येक जाति और समाजमें विद्याका प्रचार बढ़ता जाता है। भारतमें जितनी जातीय सभायें होती हैं, उन सबमें शिल्पविद्याके लिए जोर दिया जाता है, छात्रवृत्तियाँ देकर विद्यार्थी जापान, अमेरिकादि देशोंमें शिल्पविद्याशिक्षार्थ भेजे जाते हैं। शिल्पकारोंकी आमदनी भी नित्य बढ़ती जाती है, परन्तु शोक है कि क्या अँगरेजी और क्या भारतीय सभी शिल्पकारोंका धन बुरी तरह खर्च होता है। यही कारण है कि वे नीच अवस्थामें पड़े हुए हैं। उन्होंने स्वयं अपनेको ऐसा बना

रक्खा है । आत्मगौरव क्या वस्तु है इसका उन्हें दिग्दर्शन भी नहीं हुआ है । वे काम अवश्य करते हैं, पर मनमें संकोच करते हैं । उनका विचार है कि यह काम जो हम कर रहे हैं बुरा है; परन्तु यह उनकी भूल है । कोई काम बुरा नहीं । हर प्रकारका परिश्रम प्रशंसनीय है । यह केवल आलस है जिसकी कृपासे मनुष्य नीच और घृणित रहता है । भारतके नव युवकोंको इस पर विशेष लक्ष्य देना योग्य है । यदि ब्राह्मण कपड़ा बुननेका काम करे, वैश्य दर्जी अथवा बढ़ई लुहारका काम करे तो इसमें कोई लज्जाकी बात नहीं है । काम करनेमें लज्जा नहीं । लज्जा खाली बैठनेमें है ।

मिस्टर स्टरलिंग (Mr. Sterling) का कथन है कि " यदि कोई शिल्पकार अपने नित्यके कार्यको चाहे वह कितना ही नीचे दर्जेका क्यों न हो, उच्च विचारोंसे करता है, तो समझना चाहिए कि वह सच्चे दिलसे अपने कर्तव्यका पालन कर रहा है और अपने जीवनको लाभ और भलाईके लिए उन्नत कर रहा है ।" परन्तु शिल्पकारोंने ऐसा नहीं किया और न दूसरोंने उनकी यथेष्ट सहायता की । इसी कारण श्रम नीच और घृणित समझा जाता है ।

आमदनीके खयालसे जैसा हम पूर्वमें कह आये हैं शिल्पकार औरोंसे कदापि गिरे हुए नहीं हैं । इंजिनियर फौजी अफ़सरोंसे जियादह कमाता है । अच्छे कारखानेका मिस्त्री एन्ट्रेन्स-पास क्लर्कोंसे जियादह पैदा करता है । मास्टर टेलर स्कूलके मास्टरोंसे अच्छा रहता है ।

चतुर शिल्पकार यदि चाहे तो सभ्य शिक्षित पुरुषोंके समान गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है; किंतु कई कारण उनकी उन्नतिमें बाधक हैं। वे अवकाश मिलनेपर अपनी उन्नति नहीं करते। यद्यपि उनके पास धन काफ़ी है, किंतु शिक्षाकी कमी है। उनको अच्छी तरह यह बात समझ लेना चाहिए कि समाजमें मनुष्यकी प्रतिष्ठा उसकी आमदनीसे नहीं, किंतु बहुधा उसकी बुद्धिमानी और सच्चरित्रतासे की जाती है। चूँकि वे लोग इन बातोंको भूले हुए हैं, अपव्ययी हैं, अपनी सारी आमदनीको विषयवासनाओंकी पूर्तिमें ही व्यय कर देते हैं और आत्मोन्नतिकी स्वप्नमें भी रंच मात्र परवा नहीं करते है। इसी कारण वे समस्त सामाजिक सुखोंसे वंचित कर दिये गये हैं, बल्कि यह कहना चाहिए कि उन्होंने स्वयं अपनेको उन जातीय अधिकारोंसे वंचित कर लिया है जिनसे लाभ उठानेका स्वत्व उन्हें प्रकृतिके नियमानुसार प्राप्त है।

यद्यपि उनकी आमदनी ज़ियादह है, किंतु वे लोग प्रायः रहन सहन और आचरणमें गिरे ही रहते हैं। चाहे कोई शिल्पकार कितना ही चतुर क्यों न हो, परन्तु वह अपना हाल वैसा ही बुरा बनाये रखता है जैसा कि उसके दूसरे साथी रखते हैं। जब देखो उसके बदन पर मैले कुचैले कपड़े ही दिखाई देते हैं। नहाने धोने, बाल बनवाने, कंघा करनेका तो वह नाम भी नहीं जानता। हाथ पैर मैलसे काले और बाल धूलसे सुफ़ेद हुए रहते हैं। बुद्धिमानीके कारण वह जो ज़ियादह रुपया कमाता है, वह भी उसके लिए हानिकर हो जाता है। वह चाहे तो बड़े आरामसे रह सकता है,

अच्छे कपडे पहिन सकता है, जरूरी चीजें खरीद सकता है, परन्तु वह ऐसा नहीं करता। हर हफ्तेमें उसकी सारी आमदनी नष्ट हो जाती है। वह एक कौडी भी जमा नहीं करता। जब कभी काममें कमी हो जाती है अथवा उसको कोई रोग हो जाता है तो सब सफ़ाया हो जाता है।

अब प्रश्न यह है कि इन बुराईयोंके दूर करनेका क्या उपाय है? कुछ लोग कहते हैं कि उत्तम शिक्षा होना चाहिए, कुछ कहते हैं कि वह शिक्षा दी जाय जिसमें धर्म और सच्चरित्रताके सिद्धात इनके हृदयमें अंकित हो जावे, कुछ कहते हैं कि नहीं, जब तक अच्छे घर, अच्छी स्त्रियाँ और अच्छी मातायें न होंगी तब तक उन्नति न होगी। निस्सदेह ये सब उन्नति और सुधारके कारण है। यह एक प्रत्यक्ष बात है कि आजकल चारों ओर अज्ञानता फैली हुई है। जब तक यह अज्ञानता दूर न की जायगी छोटे दर्जेके मनुष्योंकी उन्नति कदापि नहीं हो सकती। उनकी दशामें एकदम परिवर्तन कर देना चाहिए और उनको प्रारम्भसे ही दूरदर्शिता और इन्द्रियदमनका अभ्यास कराना चाहिए।

हम प्राय सुना करते हैं कि ज्ञान बल है, परन्तु यह कभी नहीं सुना कि अज्ञानतामें भी बल है। तथापि जगतमें अज्ञानताका साम्राज्य है। जिधर देखो उधर अज्ञानता ही फैली हुई है। अज्ञानता-के कारण ही जेल और पुलिसके दर्शन होते हैं। अतएव इसके कहनेमें तनिक भी सकोच न करना चाहिए कि अज्ञानतामें भी बल है।

इसका मुख्य कारण यह है कि अभी तक भारतवर्षमें विद्या का प्रकाश बहुत कम लोगों तक पहुँचा है। जब इसका सर्वत्र

प्रकाश हो जायगा, सब कोई पढ लिख कर दूरदर्शी और विचारशील हो जावेंगे, तब विद्याका मूर्खता पर अधिकार हो जायगा। किंतु अभी वह समय दूर है।

जेलखानोंके रजिस्टरोंको देखिए, १०० कैदियोंमेंसे ९९ मूर्ख और अज्ञान निकलेंगे। शराबकी भट्टीपर जाकर देखिए वहाँ भी ९९ अशिक्षित ही मिलेंगे। हमारे पतनका मूल कारण हमारी सामाजिक त्रुटियाँ हैं जो अज्ञानताके कारण पाई जाती हैं। इन त्रुटियोंके दूर करनेके लिए हम शक्तिभर उद्योग करते हैं, सभायें स्थापित करते हैं, धन और श्रम भी व्यय करते हैं किंतु अज्ञानता इस हद तक बढ़ी हुई है कि कभी कभी हमें निराशा हो जाती है, हमारा उद्योग निष्फल जाता है।

इस अज्ञानताका ही प्रताप है कि हजारों आदमी स्वास्थ्यसंबंधी नियमोंका पालन नहीं करते और अपनी असावधानीसे अकालमृत्युके शिकार हो जाते हैं। यद्यपि स्वास्थ्यसम्बन्धी अनेक ट्रेक्ट लिखे जाते हैं और सर्व साधारणमें वितरण भी किये जाते हैं, पर जिनके लिए ये लिखे जाते है वे पढ भी नहीं सकते। उनको पढकर उनपर विचार करना और उनके अनुकूल चलना तो कहाँ। यह सब अज्ञानताका फल है। अज्ञानताकी इस बलिष्ठ शक्तिको मंद करनेके लिए ज्ञानकी आवश्यकता है। जैसे सूर्योदयसे अंधकार नाश हो जाता है, उल्लू चमगीदड़ आदि अनेक दुष्ट जीव अदृश्य हो जाते हैं, उसी तरह ज्ञानका प्रकाश होते ही अज्ञानरूपी अंधकार नष्ट हो जायगा। जनसाधारणमें शिक्षाका प्रचार करो, विद्याका प्रकाश करो, दूषण स्वतः

ही भाग जावेंगे। शराबकी भट्टियाँ और जेलखाने कहीं ढूँढ़े भी न मिलेंगे।

यह बात भी स्मरण रखना चाहिए कि केवल शिक्षा ही काफी नहीं है। चतुर मनुष्य दुराचारी भी हो सकता है। जितना चतुर होगा उतना ही दुराचारी भी होगा। अतएव शिक्षाकी नींव धर्म और सुचरित्रता पर स्थित होनी चाहिए, कोरी शिक्षा किसीभी कामकी नहीं। उससे बुरी वासनायें दूर नहीं हो सकतीं। बुद्धिकी वृद्धिका सच्चरित्रतापर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। बहुतेरे पढ़े लिखे मनुष्य अदूरदर्शी अपव्ययी और व्यभिचारी देखनेमें आते है। अतएव यह अत्यंत आवश्यक है कि शिक्षा धार्मिक और नैतिक सिद्धांतों पर स्थिर हो।

बहुतसे आदमी कहा करते हैं कि मजूर लोग निर्धन होते हैं, इसी कारण समाजमें उनकी कोई क़दर नहीं होती। परंतु यह सत्य नहीं है। आप उनकी आमदनी दूनी कर दीजिए पर उनकी दशा ज्योंकी त्यों रहेगी। उनके सुखमें कुछ भी बढ़ती न होगी। कारण कि सुख रुपयेसे नही हैं। रुपया बढ़नेसे उल्टी उनकी बुरी आदतें बढ़ जावेंगी।

सच्चा सुख ज्ञानसे ही प्राप्त हो सकता है। अतएव जिस तरह हो ज्ञान प्राप्तिके लिए उद्योग करना चाहिए। उच्च जातिके पुरुषोंका कर्तव्य है कि वे नीच जातियोंको शिक्षा और उपदेशसे ऊपर उठावें। ये जातियाँ स्वयं अपनेको उठानेमें असमर्थ हैं, पहले आप उन्हें सहायता दें फिर वे स्वतः अपनेको सँभाल लेंगी।

जीवनमें विचारनेकी दो बातें हैं—रुपया पैदा करना और उसको व्यय करना । इसके लिए विचार और दूरदर्शिताकी आवश्यकता है और ये गुण उत्तम शिक्षाके द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं । जब शिक्षाका प्रचार हो जायगा, तब सब समझ जावेंगे कि ईमानदारीसे शक्तिभर परिश्रम करके कमाना चाहिए और सदा आमदसे कम खर्च करके कुछ न कुछ भविष्यके लिए बचाकर रखना चाहिए ।

पाँचवाँ अध्याय ।

उदाहरण ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१. उदाहरणों द्वारा ही सफलताकी सम्भावना की जाती है ।

२. स्वावलम्बनसे ही मार्ग प्रगट होता है ।

३. जिस प्रकार किसी राज्यके धनधान्यकी वृद्धिके लिए उत्तम प्रबंधकी आवश्यकता है उसी प्रकार एक कुटुम्बकी बढ़तीके लिए भी समीचीन प्रबंधकी आवश्यकता है ।

४. सम्यक् आचरण, सम्यक् श्रद्धानपूर्वक होता है, किंतु सम्यक् आचरणके विना सम्यक् श्रद्धान कदापि श्रीवृद्धिको प्राप्त नहीं हो सकता ।

* * * *

मितव्ययिताका असली अर्थ गृहप्रबन्ध है । इसका यह अभिप्राय है कि हम अपनी आमदनीका ठीक ठीक हिसाब रक्खें, उसको उचित रीतिसे खर्च करें, फिजूलखर्चीको दूर करें, विवेक और दूरदर्शितासे काम लें, किसी भी चीजको फिजूल न समझें, हर एक चीजसे जहाँ तक हो सके लाभ उठावें और रुपयेको केवल बचानेके अभिप्रायसे ही न बचावें किंतु इस लिए बचावें कि वह जरूरतके समय अपने और दूसरोंके काम आयगा ।

जिन लोगोंने इस उद्देश्यसे थोड़ा थोड़ा भी बचानेका अभ्यास किया है उन्होंने थोड़े ही दिनोंमें बहुत कुछ जमा कर लिया है और

उस रुपयेसे अपने कुटुम्बियों सम्बन्धियों तथा देशवासियोंका बहुत कुछ उपकार किया है और आपत्तिमें उनको सहारा दिया है।

हाँ, जरूरत इस बातकी है कि हम हरएक कामको नियमानुसार करें। चाहे कोई काम हो घर-का हो या बाहरका, राज्यका हो या व्यापारका, नियमानुसार हो। हरएक चीज़के लिए नियत स्थान हो और अपने अपने स्थानपर हरएक चीज़ हो।

नियम और प्रबन्धको ही दौलत कहना चाहिए। क्योंकि जो कोई अपनी आमदनीको उत्तम रीतिसे खर्च करता है उसकी आमदनी दूनी हो जाती है। जो पुरुष नियमोंका उल्लंघन करते हैं और अपने घरका ठीक ठीक प्रबन्ध नहीं करते, वे कदापि धनवान् नहीं हो सकते। इसके विपरीत जो नियमानुसार चलते हैं, वे कदापि निर्धन नहीं हो सकते।

बिना नियम काम करनेसे व्यर्थमें समय नष्ट होता है और जो समय एक बार नष्ट हो जाता है वह कभी लौट नहीं सकता। अतएव नियमोंका पालन करना सदैव आवश्यक है। यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो संसार नियमोंपर ही स्थिर है। यदि नियम न होते तो उचित अनुचित, न्याय अन्याय, धर्म अधर्मका कोई विचार न होता; जो जिसके मनमें आता वही करता।

हमारे जीवनमें गृहप्रबन्धके लिए नियमोंकी बड़ी जरूरत है। इनका पालन करनेसे ही हमारा घर शोभाको पाता है और हमको सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। चूँकि घरका प्रबन्ध गृहिणीके हाथमें होता है, इस कारण समाजकी उन्नति एक प्रकारसे गृहिणी पर ही निर्भर है और इस दशामें उसके लिए यह बहुत

जरूरी है कि उसको गृहप्रबन्ध और नियमानुसार प्रवर्तनेकी शिक्षा प्रारम्भसे ही दी जाय और उसके हृदयमें इसकी जरूरतको कूट कूट कर भर दिया जाय।

हमारे लिए सवाल यह नहीं है कि हम धनवान् हों या निर्धन, जरूरत यह है कि हम अपनी आमदनीको चाहे वह कितनी ही थोड़ी क्यों न हो इस रीतिसे खर्च करें कि हम संसारमें दिन दिन उन्नति करते जावें और हमारी स्थिति और हमारी सम्पत्ति नित्यशः बढ़ती जाय। हमको उन पुरुषोंका अनुकरण करना चाहिए जिन्होंने थोड़ी आमदनी होते हुए भी उत्तम प्रबन्धसे अपनेको तथा अपनी सतानको संसारमें यशस्वी और भाग्यशाली बनाया है।

भारतवर्ष तथा अन्य देशोंमें ऐसे सैकड़ों उदाहरण मौजूद हैं। आज जितने बडे बड़े पुरुष देखनेमें आते हैं वे प्राय: उन्हींकी संतान हैं जिन्होंने परिमित आमदनी होते हुए भी अपने बाहुबलसे अपनी संतानको शिक्षा दिलाकर इस योग्य बनाया। ईश्वरचन्द्र विद्यासागरका नाम कौन नहीं जानता। उनके पिता कितने निर्धन थे, तिस पर भी अपने पुत्रको अपनी छोटी सी आमदनीसे पढ़ाकर विद्यासागर बनाया। विद्यासागरने स्वय ५०) रु० की नौकरीमें अपने सारे कुटुम्बका अच्छी तरह पालन किया तथा अनेक निर्धन असहाय विद्यार्थियोंको छात्रवृत्तियाँ देकर पढ़ाया।

जेम्स गारफील्ड (James Garfield) ने लुहार और बढ़ईके यहाँ मजूरी कर करके अपने कुटुम्बका ही पालन नहीं किया किन्तु स्वयं धीरे धीरे पढ़कर एक दिन अमेरिकाके सर्वोच्च पद अर्थात् प्रेसिडेंटके पदको भी प्राप्त कर लिया।

इँगलिस्तानके डॉक्टर एटनने (Dr. Aiton) केवल १००) रु. मासिककी आयसे १२ बच्चोंका पालन पोषण किया और उनमेंसे ४ को उच्च शिक्षा दिलाकर अच्छे अच्छे कामोंमें लगाया ।

हम जिन ग्रंथकर्ता महाशयके ग्रन्थके आधार पर यह पुस्तक लिख रहे हैं स्वयं उन्हींका हाल सुनिए। उनके ११ भाई थे। सबसे छोटा भाई केवल दो सप्ताहका था जब उनके पिताका देहांत हो गया । उनकी माताने बहुत थोडी आमदनी होते हुए भी बहुतसा कर्ज चुकाया और अपने बच्चोंको धार्मिक तथा लौकिक शिक्षा दिलाई ।

इतिहासकार ह्यूमकी भी यही दशा थी । पादरी रॉबर्ट वाकर हब (Reud, Robert Wacker) की आमदनी सिर्फ ५ पौंड ालाना थी। ४० पौंड उनकी पत्नी लाई थी। इतनी ज़रा सी ामदनी पर भी उन्होंने आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत किया और पने कुटुम्बके लिए भी कुछ रुपया जमा किया । यह सब न्होंने श्रम, मितव्यय और संयमसे ही कर पाया । धार्मिक र्तव्योंका पालन करके, लड़कोंको पढ़ा करके, ऊन बुन करके, नानवरोंको चरा करके, हल जोत करके, इत्यादि अनेक काम करके उन्होंने ईमानदारीसे रुपया पैदा किया और उससे अपना तथा अपने ८ बच्चोंका पालन किया। एकको कालेजमें पढ़ाया। पादरी साहब बड़े मितव्ययी थे, किंतु उनके किसी भी कामसे लालच या कमीनापन प्रगट न होता था । वे व्यर्थकी नुमायशी चीजोंसे घृणा करते थे, किंतु जरूरी चीजोंके लिए कभी कृपणता न करते थे। वे सदा दयालु और उदारचित्त रहते थे। चाय, दूध और शुद्ध जल ही

पर उनको संतोष था। उनकी सारी जरूरतें उनके घरसे ही पूरी हो जाती थीं। उनको भेड़ बकरियोंसे ऊन दूध और खेतोंसे अनाज मिल जाता था।

इसी प्रकार अनेक पुरुषोंने अपने साहस और बलसे रुपयेका सदुपयोग करके अपनेको बढ़ाया और क्रमशः अपने देश और समाजको उन्नतिके शिखर पर चढ़ाया। वास्तवमें व्यक्तिगत उन्नतिसे ही समाजकी उन्नति है। समाज बहुतसे व्यक्तियोंका समूह है। यदि प्रत्येक व्यक्ति उन्नति करे तो कुल समाज उन्नति कर लेगा। किन्तु व्यक्तिगत उन्नतिके लिए दृढ़ संकल्प और स्थिर विचारोंकी जरूरत है।

इनसे ही छोटेसे छोटा आदमी बड़ेसे बड़े दर्जे पर पहुँच सकता है। इन्हींके उद्योगसे ज्ञान विज्ञानकी वृद्धि होती है, सभ्यता और शिष्टाचारका प्रचार होता है और दूसरे लोगोंको इनके अनुकरण करनेका साहस होता है। इनके जीवनसे अनेकोंके जीवन सुधरते है। इनका हाल सुनकर मुरदेसे मुरदेके दिलमें भी जोश पैदा हो जाता है, निराशा और आलसका मुँह काला हो जाता है और 'हमसे यह न हो सकेगा' 'यह हमारी शक्तिसे बाहर है,'ऐसे वाक्योंका मानो देशनिकाला हो जाता है। इनके जीवन-चरित प्रत्यक्ष इस बातको सिखला रहे हैं कि उठकर आलस्यको त्यागो, कुछ काम करो, चाहे तुम कितने ही नीचे क्यों न हो एक दिन ऊँचेसे ऊँचे दर्जेपर पहुँच जाओगे।

एक नहीं, दो नहीं, दश नहीं, पचास नहीं, सैकड़ों उदाहरण उनके मौजूद है जो शुरूमें कारखानों या खानियोंमें कुलियों

और मजदूरोंका काम करते थे और ऐसी अवस्थामें भी जिन्होंने मितव्ययितासे काम करके थोड़ा बचाया, अवकाश मिलनेपर पढ़ना लिखना भी जारी रक्खा और अंतमें जो बड़े बड़े दर्जेपर जा पहुँचे। कोई पादरी हुआ, कोई इंजिनियर हुआ, कोई डॉक्टर हुआ और कोई पार्लियामेंटका मेम्बर हुआ।

जार्ज स्टेफेंसन (George Stephenson) जिसने रेलगाड़ीका आविष्कार किया शुरूमें कुलीका काम करता था। उसने श्रमसे कुछ रुपया पैदाकरके पढ़ना लिखना प्रारंभ किया। आगे उसकी मजूरी १२ शिलिंग सप्ताह हो गई। इँग्लेंड जैसे महँगे देशमें भी उसने इस थोड़ीसी मजूरीसे अपना तथा अपने मातापिताका निर्वाह किया और अपनी शिक्षाका खर्च चलाया। धीरे धीरे उसका वेतन १९) रु० सप्ताह हो गया। अब तो वह अपनेको एक धनवान् समझने लगा। वास्तवमें उसका यह खयाल ठीक भी था। जो पुरुष खर्च करके कुछ बचा सकता है वह कदापि निर्धन नहीं हो सकता। जार्ज बराबर उन्नति करता गया। जब उसको अपने एंजिन बनानेके लिए रुपयेकी जरूरत हुई तब उसकी सच्चरित्रता और कार्यकुशलताके कारण एक महाशयने तत्काल ही उसकी जरूरतको पूरा कर दिया।

जेम्स वाट (James Watt) जिसने स्टीम एंजिनका आविष्कार किया शुरूमें एक साधारण पुरुष था, छोटे छोटे औजार बेचा करता था और उन्हींकी बिक्रीसे अपना खर्च चलाया करता था, साथमें पढ़ता भी जाता था। कई वर्ष तक लगातार उद्योग करनेपर उसने स्टीम एंजिनमें सफलता प्राप्त कर ली।

इन बड़े बड़े लोगोंको हाथका काम करते शर्म नहीं मालूम होती थी। उनका विचार था कि पेटके लिए काम करनेमें कोई मानहानि नहीं है। वे साथमें दिमागका काम भी करते जाते थे। इसीसे उन्होंने बड़े बड़े काम किये जिनसे समस्त संसारको लाभ पहुँचा और पहुँच रहा है।

यह काम हम क्यों करें, यह हमारे लायक नहीं है, बड़ा हानिकर है। बहुतसे लोग ऐसे ही खयालोंके कारण अपने जीवनको नष्ट कर देते हैं और टुकड़े तकको तरसते रहते हैं। तीन आदमी एक लुहारकी दूकानमें काम किया करते थे। उनके दिलमें किसी तरह यह विचार उत्पन्न हो गया कि हम कुछ और बढ़िया काम करें। उनमेंसे दोने कुछ रुपया जमा किया और जाड़ेके दिनोंमें कालेजमें पढ़ना शुरू किया। कालेजका समय पूरा होनेपर वे गर्मीमें घर आकर अपनी दूकानपर फिर वही काम किया करते थे। तीसरा वैज्ञानिक संस्थामें काम करने लगा और वहाँ पुस्तकावलोकन करते करते उसको सायंसका अच्छा ज्ञान हो गया। वह सुबह शाम अवकाश न मिलने पर भी जी तोड़कर पढ़ा करता था। थोड़े ही दिनोंमें वह एक इंजिनियर और बड़ी भारी कंपनीका मैनेजर हो गया। पहले दोमेंसे एक प्रोफेसर हुआ और दूसरा प्रसिद्ध राजमंत्री हुआ।

एक महाशय गायन विद्यासे अपनी आजीविका करते हुए खगोल और ज्योतिषसंबन्धी अविष्कार सोचा करते थे। एक दिन उनको अपने उद्योगमें सफलता हुई और वे संसार भरमें नामी हो गये।

फ्रैंकलिन (Franklin) अपना निर्वाह छापेका काम करके किया करता था। वह बड़ा परिश्रमी, मितव्ययी और दूरदर्शी था।

समयको कभी फ़िज़ूल न खोता था । उसने अपनी ईमान-दारीसे सबके दिलोंमें स्थान पा लिया था । हर प्रकारसे उन्नति करना वह अपना मुख्य कर्त्तव्य समझता था । इसीका परिणाम यह हुआ कि वह एक बड़ा विज्ञानी समझा जाने लगा और बड़े बड़े आदमी उसका आदर करने लगे । प्रसिद्ध ज्योतिषी फरगुसन (Firguson) बहुत दिनोंतक तसबीरें ही बनाता रहा ।

जगद्विख्यात लेखक विंकलमेन (Winckelman) एक चमारका लड़का था । उसका पिता जबतक उससे हो सका उसे शिक्षा दिलाता रहा । परन्तु जब वह बीमार पड़ गया, तब स्वयं लड़केने रातको गलियोंमें गा गा कर अपने रोगी बूढ़े बापकी सेवा की और बादमें ट्यूशन करके अपनी कालेजकी शिक्षा जारी रक्खी । इसके कहनेकी जरूरत नहीं कि अंतमें वह कितना बड़ा आदमी हुआ ।

स्वर्गीय डाक्टर ग्रेगरी (Dr. Gregary) ने अपने लेक्चरमें कहा था कि " मैं ऐसे कितने ही आदमियोंको जानता हूँ जो श्रम, साहस और संतोषके बलसे मजूरोंकी श्रेणीसे निकल कर बड़े बड़े विद्वानोंकी गणनामें आ गये । एक सड़कपर मजूरी करनेवाला आदमी बड़ा लेखक होगया । एक सिपाही स्कूलमास्टर हो गया । दूसरा तात्त्विक उपदेशक हुआ । एकने बीजगणितमें कई नई नई बातें निकालीं । एक कोयलेकी खानिमें काम करनेवाला बड़ा भारी गणितज्ञ हुआ । एक दर्जीने वे वे बातें निकालीं जो न्यूटन भी न निकाल सका । एक किसानने बिना किसीकी सहायताके जमीनकी गर्दिशको मालूम किया और अनेक खगोलसंबंधी आवि-

प्कार किये। एक ग्रामीण चमार जबर्दस्त फिलास्फर हुआ और उसने लंडनमें अनेक पुस्तकोंका संपादन किया।"

जितने बड़े बड़े शिल्पकार हुए है प्रायः सब शुरूमें बहुत ही साधारण स्थितिके आदमी थे। यदि वे अमीर होते तो कभी ऐसी उन्नति न कर पाते। गरीब होनेकी वजहसे ही उनको उन्नति करनेका शौक पैदा हुआ। उन्होंने अपने छोटे छोटे कामोंसे ही धीरे धीरे उन्नति की। एक दम बड़े कामको हाथ नहीं लगाया; परन्तु उसके लिए शनैः शनैः योग्यता प्राप्त करते रहे। फल यह हुआ कि एक दिन उनकी मनोकामना पूरी हो गई। उन्होंने सदा धैर्य्य-से काम किया और मितव्ययिताको अपना सिद्धान्त बनाया। जरूरी चीजोंके लिए कभी मुँह न मोड़ा, हाँ, बेजरूरी चीजोंमें कभी रुपया बर्बाद न किया। यही उनकी सफलताका मूल मन्त्र है।

मिस्टर नैस्मिथ (Naysmith) के शब्द-जिन्होंने छोटे छोटे औजारोंसे शुरू करके बड़े बड़े एंजिन बनाये-याद रखनेके काबिल है। उनका कथन है कि "मेरी सारी सफलताका रहस्य केवल इसमें है कि मनुष्यको पहले अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए, पश्चात् भोगोपभोगोंपर ध्यान देना चाहिए और अभाग्य दुर्भाग्य आदि शब्दोंका एक दम बहिष्कार कर देना चाहिए।" ऊपरके सिद्धान्तके विपरीत करनेसे ही ऐसे शब्द सुननेमें आते हैं। श्रम और संतोषके अभावसे ही असफलता होती है।

छठा अध्याय ।
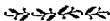
बचानेके नियम ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१–मनुष्य पशुओंसे इसी कारण बड़ा है कि उसमें अपने साथियोंसे मिलकर काम करनेकी शक्ति है । समुदायसे जो काम हो सकता है, वह पृथक् पृथक् व्यक्तिसे कभी नहीं हो सकता ।

२–हमारे लिए सबसे पहली और जरूरी बात यह है कि हम अपनी इन्द्रियोंको दमन करें और अपनी इच्छाओंको वशमें करें ।

* * * *

सबसे पहला नियम यह है कि आमदनीसे कम खर्च करो। आगेके लिए जरूर कुछ न कुछ बचाकर रक्खो । जो आमदनी-से ज्यादह खर्च करता है वह मूर्ख और पागल है । दूसरे, हरएक चीज़ नक़द रुपया देकर ख़रीदो, कोई चीज़ उधार न लो । जो उधार लेना है अथवा कर्ज़ लेता है वह ज़रूर धोखा खाता है और प्रायः खुद झूठा बेईमान हो जाता है । तीसरे, भावी लाभकी आशासे जिसका कोई निश्चय नहीं है कभी खर्च मत करो । सम्भव है कि लाभ न हो । इस दशामें तुम्हारे सिरपर व्यर्थ कर्ज़का भार हो जायगा और तुम सदा उसके नीचे दबे रहोगे । चौथे, अपनी आमदनी और खर्चका पूरा पूरा हिसाब रक्खो ।

पहलेसे अपना बजट बना-लो। उसमें खर्चेको आमदनीसे कम रक्खो। ऐसा करनेसे कभी तुमको तकलीफ़ न होगी। तुम्हारी जरूरतकी चीजें सब तुमको मिल जायँगी। बेफ़ायदा खर्च करनेसे तुम फ़िजूल चीजोंको खरीद लोगे जिनकी तुम्हें कोई जरूरत नहीं और जरूरी चीजोंके लिए वक्त पर तुमको कर्ज लेना पड़ेगा। पाँचवें, सदा इस बातका खयाल रक्खो कि कोई चीज फ़िजूल न जाने पावे। हर एक चीजको ठीक तौरसे काममें लाओ और हर एक कामको कायदेसे अच्छी तरह करो। प्रत्येक पुरुषके लिए चाहे वह किसी हैसियत का हो, यह जरूरी है कि इन बातोंका खयाल रक्खे। अपने घरकी चीजोंका खयाल रखनेमें कोई बात हल्की नहीं होती हैं।

इस बातकी कोई ठीक ठीक हद्द नियत नहीं की जासकती कि कितना बचाना चाहिए। यह अवसर और स्थान पर निर्भर है। गाँवमें शहरकी अपेक्षा ज़ियादह बचत हो सकती है। सिर्फ़ इतनी याद रखनी चाहिए कि किसी दशामें भी खर्च आमदनीसे न बढ़ने पावे।

मितव्ययिता क्या अमीर क्या गरीब सबके लिए जरूरी है। इसके बिना कोई काम नहीं हो सकता। जो मनुष्य सारी आमदनी खर्च कर डालता है वह किसीकी सहायता नहीं कर सकता। न अपने बच्चोंको पढ़ा सकता है और न अपने कुटुम्बियोंके काम आ सकता है। वह दान पुण्य भी नहीं कर सकता।

यद्यपि हम लोग मिहनती हैं, परंतु संयमी और दूरदर्शी नहीं हैं। हम अपना विचार वर्तमान पर ही लगाये रहते हैं भविष्यत्की कुछ चिंता नहीं करते। यही हममें दोष है। इसीके कारण हम कभी कभी बहुत दुःख उठाते हैं। हमारे इस व्यवहारसे दूसरोंपर भी

बुरा असर पड़ता है। वे भी हमारी देखादेखी जो कुछ होता है खर्च कर डालते है। अमीर लोग दौलतके नशेमें आगा पीछा कुछ नहीं देखते; एकसे एक बढ़कर बाग बगीचे, कोठी मकान, घोड़े गाड़ी रखते हैं। हमारे बराबर किसीका सामान न हो, इसी धुनमें वे सदा लगे रहते हैं। विवाह शादियोंमें, नाच तमाशोंमें हजारों और लाखों रुपया सर्फ़ कर देते हैं।

इनके पास तो रुपया है जो चाहे करें। खराबी है तो यह कि मामूली आदमी भी इनकी नकल करने लगते हैं। जातिमें छोटे बड़े सब तरहके आदमी होते हैं। बहुतसी बातोंमें, बहुतसे खर्चोंमें लोक लाजके कारण सबको समान खर्च करना पड़ता है। इससे साधारण आदमियोंकी मुश्किल आजाती है। फिर उनकी देखादेखी मिहनती मजूर तक भी वैसा ही करने लगते हैं। नित्य ही देखनेमें आता है कि शहरोंमें भंगी चमार, कोली कहार भी पैरमें बूट जूता, सिरपर गोल टोपी, जेबमें घड़ी, हाथमें छड़ी, बदनमें अँगरेजी कोट क़मीज़ डटाये रहते है। इन फ़िजूलखर्चियोंके कारण ही बादमें बड़ी बड़ी तकलीफ़ें उठानी पड़ती है।

यह हमारी सरासर मूर्खता है। यदि हम सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहें तो हमको जरूर कुछ न कुछ आपत्ति कालके लिए बचाकर रखना चाहिए। इसका यह अभिप्राय नहीं कि हम पेट मोसकर बदन सिकोड़कर कंजूसकी तरह रुपया जमा करें। न खावें, न पीवें, न पढ़ें, न पढ़ावें। न बीमार होनेपर इलाज करें, और न दूसरोंको दुखमें देखकर उनकी सहायता करें। किंतु यह अभिप्राय होना चाहिए कि हम अच्छी तरह रहें। रुपयोंको अपने तथा दूस-

रोके सुखका कारण और साधन जानकर आगेके लिए थोडासा बचाकर रक्खें। कौन जानता है कि हमारी आमदनी सदा एकसी रहेगी। सम्भव है कि हम कल मर जावें अथवा बीमार पड़ जावें। यदि हमने कुछ रुपया जमा नहीं किया तो बतलाए कल क्या हाल होगा? कौन हमारी स्त्री तथा बच्चोंकी सहायता करेगा अथवा इलाजके लिए रुपया कहाँसे आयगा? इस दशामें क्या शोकका कोई पार रहेगा? आज तो हम बड़े कहला रहे हैं कल हमारे बच्चे भिखारी हो जावेंगे, अन्नके दाने दानेको तरसेंगे।

इस लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम बचाना सीखें। ऐसा करनेसे अनेक चिन्तायें जाती रहती हैं और मनमें शांति रहती है। चाहे रुपया कितनाही थोड़ा हो परन्तु वह निर्धनता अथवा रोग शोकके समय बहुत ही काम आता है। उसी समय उसकी असली कदर मालूम होती है। जीवन स्वतंत्रतया आनंद-पूर्वक व्यतीत होता है, बुढ़ापे का रंज नहीं होता, बाल बच्चोंकी चिन्ता नहीं होती।

परन्तु इसके लिए जैसा हम पहले कह आये हैं दृढ संकल्प और स्थिर विचारोंकी ज़रूरत है। इसमें संदेह नहीं कि हमको शुरूमें बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ आवेंगी, परन्तु हमें उन्हें धीरतासे सहन करते जाना चाहिए। हमको अपने बहुतसे खर्चोंमें कमी करनी होगी। सम्भव है कि कुछ कालके लिए हमको कुछ दुख मालूम हो; परन्तु यदि हम करते जावेंगे, साहस और उद्योगको न छोड़ेंगे तो बहुत जल्द सफलताको प्राप्त कर लेंगे। पहले हमको खुद मिसाल बनकर दुनियाको दिखलाना चाहिए। हम मितव्य-

यिताका कितना ही उपदेश लोगोंको दें; परन्तु वह कुछ कार्यकारी न होगा। हाँ, यदि हम खुद करके दिखलावें तो बिना कहे ही लोग हमारा अनुकरण करने लगें और धीरे धीरे सारा समाज उन्नति कर ले। क्यों कि पृथक् पृथक् व्यक्तिसे ही मिलकर समाज बना है, व्यक्तिगत उन्नति अथवा अवनति पर ही समाजकी उन्नति अथवा अवनति निर्भर है।

प्रायः लोग इस बातसे डरा करते हैं कि कहीं हमारे काम-में हानि न हो जाय। यह उनकी भूल है। यदि हम श्रम, साहस और दूरदर्शितासे काम करें तो कदापि हानि नहीं हो सकती। हाँ, यदि हम इनके विपरीत करें तो जरूर हानि होगी। जो आदमी खुद कुछ नहीं करता और सदा दूसरोंका मुँह ताकता रहता है अथवा जो कोई अपने रुपयेको फिजूल खोता रहता है अथवा जो कोई कजूसी करता है, उसका काम जरूर फेल होगा। बहुतसे आदमी अपनी अयोग्यताके कारण हानि उठाते है। वे उल्टे तरीकेसे कामको शुरू करते है और कितना ही नुकसान क्यों न उठा लें अपनी हठको नहीं छोड़ते। बहुतसे आदमी भाग्यको उलहना दिया करते है। पर यह उनका भ्रम है। वे भाग्यके अर्थको नहीं समझते। समीचीन या अच्छे प्रबन्धका ही दूसरा नाम भाग्य है। अभागा वही है जो व्यवहारिक बातोंको नहीं जानता और अनुभवसे लाभ नहीं उठा सकता।

कोई कोई मनुष्य योग्य और उत्तम होते हुए भी विचारहीन होते हैं। न वे देशकालका विचार करते हैं और न देशकाल-के अनुसार वर्ताव करते हैं। अंधेकी नाई बढ़े चले जाते हैं, परिणाम

यह होता है कि धमसे गढ़ेमें गिर पड़ते हैं। अर्थात् उनका काम बिल्कुल डूब जाता है।

जीवनक्षेत्रमें सुगमतासे निवास करनेके लिए इस बातकी जरूरत है कि हम जो कुछ कहें वह करके दिखलावें। केवल बातें बनानेसे काम नहीं चलता। हम उसी आदमीको पसंद करते हैं, जिसके उद्देश्य स्थिर हैं और जो उन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए सरल और सीधे मार्गको ग्रहण करता है।

संसारमें सफलता और धनप्राप्तिकी आशा प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें स्वभावसे ही अंकित है। यह इच्छा बुरी नहीं है, बहुत ही लाभदायक है। इसीसे लोग श्रम और साहस करना सीखते हैं और समाज उन्नति करता है। यह कलाकौशल्य और व्यापारको बढ़ाती है और लोगोंको काम करना सिखलाती है।

यदि यह इच्छा मनुष्यमें न होती तो वह निरा आलसी ही रहता, किसी काममें भी हाथ न लगाता। इसीकी बदौलत नित्य नये नये आविष्कार देखनेमें आते है।

कोई आलसी अथवा अमितव्ययी मनुष्य कभी संसारमें महत्त्वका भागी नहीं हुआ। उसका नाम कभी संसारके महत् पुरुषोंकी गणनामें नहीं आया। जिन मनुष्योंने अपने ज्ञान विज्ञानके बलसे संसारको उन्नत अवस्थापर पहुँचाया है और इसके इतिहासमें किसी प्रकारका परिवर्तन किया है वे उन्हीं महात्माओंमेंसे थे, जिन्होंने अपने जीवनके एक समयको भी नष्ट नहीं किया। वास्तवमें श्रम पर ही जीवनका अस्तित्व है।

नीव आर्लिंसके जान डानफ़ (John Donouph of new orlans) की कबर पर निम्नलिखित शिक्षायें नवयुवकोंके हितार्थ खुदी हुई हैं जिनके अनुसार चलनेसे वे कभी जिन्दगीमें धोखा नहीं खा सकते:—

१—सदा याद रक्खो कि हमारे जीवनका अस्तित्व श्रम पर निर्भर है ।

२—समय स्वर्ण है, एक पल भी नष्ट न करो—प्रत्येक पलको शुभ कार्यमें लगाओ ।

३—दूसरोंके साथ वैसा ही व्यवहार करो जैसा तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे साथ करें ।

४—जो काम आज हो सकता है उसे कल पर कभी मत छोड़ो ।

५—जो काम तुम खुद कर सकते हो उसके लिए कभी दूसरेसे मत कहो ।

६—जो चीज़ तुम्हारी नहीं है, उसकी इच्छा कभी न करो ।

७—किसी भी चीज़को तुच्छ मत समझो ।

८—जिस चीज़की आमद नहीं है उसे फ़िजूल न खोओ ।

९—पैदा करो, खोओ मत ।

१०—तुम्हारे जीवनके समस्त कार्य नियमानुकूल हों ।

११—सदा परोपकारका अभ्यास करो ।

१२—जिस चीज़से तुम्हें आराम मिलता हो उसे कभी मत छोड़ो । जीवन सदा सरलता और मितव्ययितासे व्यतीत करो ।

१३—अंत समय तक श्रमको न त्यागो ।

बहुतसे आदमी समीचीन प्रबन्धके कारण निर्धनताकी अवस्थामें

भी अपना निर्वाह करते रहते हैं, भूखों नहीं मरते। छोटेसे छोटे दर्जेके मनुष्य भी एक दूसरेसे मिलकर काम करनेसे निर्धनताके चुंगलमें नहीं फँस सकते, किन्तु अपनी शक्तियोंको बढ़ा सकते हैं और जातिकी उन्नतिमें भी योग दे सकते हैं।

अकेला मनुष्य समाजकी कुछ उन्नति नहीं कर सकता। हाँ, यदि वह अपने साथियोंसे मिलकर काम करने लगे तो बहुत कुछ कर सकता है। मिलकर काम करनेमें बड़ी शक्ति है। सभ्यता समुदायका ही फल है।

प्रसिद्ध विद्वान् मिस्टर मिल (Mr. Mill) का कथन है कि प्रायः जिन जिन चीजोंके कारण मनुष्य पशुओंसे बड़ा समझा जाता है वे सब समुदायमें रहने और मिलकर काम करनेसे ही मनुष्यको प्राप्त हुई हैं।

जातीय उन्नतिका गुप्त रहस्य मिलकर काम करना है। जितना अधिक लाभ पहुँचाना अभीष्ट हो उतना ही अधिक मिलकर काम करना योग्य है। मध्यम श्रेणीके मनुष्योंमें मिलकर काम करनेका अभ्यास है। इग्लैंड देशकी वृद्धि और उन्नतिके कारण ये ही लोग हैं। इन्होंने मिलकर वे वे काम किये हैं जो पृथक् पृथक् व्यक्तिसे कभी न हो सकते। शत्रुओंको भगानेके लिए, बुराइयोंको दूर करनेके लिए, उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए, व्यापारकी वृद्धिके लिए, नई नई चीजोंके बनानेके लिए, कल ऐंजिन तय्यार करनेके लिए, तथा अनेक श्रमजनककार्योंके लिए, इन्होंने सदा अपनी शक्तियोंको मिलाकर काम किया। छोटे छोटे हिस्सोंसे बढ़ाते बढ़ाते बड़ी बड़ी कम्पनियाँ बना लीं और करोड़ों रुपयेके कारखाने खोल लि-

थे। जितनी स्टाक कम्पनियाँ, रेल्वे कम्पनियाँ, तार कम्पनियाँ, तथा कल कारखाने दिखलाई देते हैं वे सब इन्हीं लोगोंके एकत्रित श्रम और धनके नतीजे हैं। इंग्लैंड देशने जितनी उन्नति की है वह सब कम्पनियों द्वारा ही की है। वहाँ ऐसा कोई शहर या ग्राम न होगा जिसमें कोई न कोई कम्पनी या सोसायटी न हो। इन सोसाइटियोंके द्वारा ही शिक्षादिका प्रबन्ध होता है और अनाथों विधवाओंकी पालना की जाती है। भारतवासियोंको भी इनका अनुकरण करना उचित है। हर एक शहरमें ऐसी सोसायटियाँ होनी चाहिए जिनके द्वारा कलाकौशल्यका प्रचार हो, व्यापारकी उन्नति हो और उनके नफेमेंसे कुछ भाग हिस्सेदारों तथा और लोगोंके बालकोंकी शिक्षा रक्षाके लिए नियुक्त किया जाय। यदि साहस और मितव्ययितासे मिलकर काम किया जाय तो जरूर लाभ होगा और थोड़ी पूँजीवाली कम्पनी भी बहुत जल्दी बढ़ जायगी। ऐसी कम्पनियोंसे अनेक लाभ हैं। सबसे बड़ा लाभ यह है कि थोड़े थोड़े रुपयोंसे ही बड़ा काम चल सकता है और काफ़ी नफ़ा हो सकता है। दूसरे कम्पनियाँ बनाकर काम करनेसे अपनी ताक़त बहुत बढ़ जाती है और आपसमें मेल और एकता होनेसे दुखके समयमें भी कभी तकलीफ मालूम नहीं होती। तीसरे कम्पनियोंमें काम करनेसे फ़िजूलखर्च भी किफ़ायतसे खर्च करने लगते हैं और छोटे छोटे दर्जेके आदमी भी बड़े हो जाते हैं। हिस्सेदारोंके सिवा मेहनती मजूरोंको सदा काम मिलता रहता है; वे खाली नहीं बैठने पाते। वे भी धीरे धीरे मजूरीमेंसे कुछ बचाकर जमा करने लगेंगे

और थोड़े ही दिनोंमें आसानीसे एक एक दो हिस्सोंके मालिक बन जावेंगे। जहाँ एक दो हिस्सेके मालिक हुए और साल भरका नफा मालूम हुआ फिर तो उन्हें ऐसा शौक हो जायगा कि बिना कुछ बचाये चैन ही न पड़ेगी। परिणाम यह होगा कि कुछ वर्षोंमें ही वे मजूरोंकी श्रेणीसे निकलकर व्यापारियोंकी गणनामें आजावेंगे और अपने जीवनमें ही धनी कहलाने लगेंगे। इंग्लैंड आदि देशोंमें ऐसे सैकड़ों उदाहरण मौजूद हैं। हमें भी उनका अनुकरण करना योग्य है।

सातवाँ अध्याय ।

बीमाकम्पनियाँ और सहायक सभायें ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१ हमको जीवन इस लिए नहीं मिला है कि हम हर समय उन चीजोंके हासिल करनेमें लगे रहें जिनको हम मरते समय यहीं छोड़ जावेंगे ।

२–बुढ़ापेमें हमको सुख अथवा दुख बहुधा हमारे पूर्वके कृत्योंके अनुसार *ही मिलता है ।*

३–सत्यके लिए संसारमें हम सब एक दूसरेके सहायक हैं और शुभचिंतक है ।

*   *   *   *

बचतका एक तरीक़ा तो हम पिछले अध्यायमें बतला ही चुके हैं। उसके सिवा दो तरीक़े और हैं । एक यह है कि हमको अपनी जान-का बीमा करा लेना चाहिए जिससे हमारे मरने पर हमारे घरवालोंको उनके खर्चके लिए काफ़ी रुपया मिल जाय । दूसरा तरीक़ा यह है कि ऐसे सहायक फंड खोलने चाहिए जिनसे ग़रीब लोगोंको दुखके समय आराम मिले और उनके मरनेपर उनकी ग़रीब स्त्री और बच्चोंको कुछ थोड़ीसी सहायता मिल जाय जिससे उनको एकबारगी विशेष दुःख मालूम न हो । पहला तरीक़ा प्रथम और मध्यम श्रेणीके मनुष्योंके लिए है और दूसरा ग़रीब लोगोंके लिए है ।

यदि हम चाहें कि अपने कुटुम्बके लिए धीरे धीरे रुपया जमा करते रहें तो इसमें वर्षों लग जावेंगे, फिर भी काफ़ी रुपया जमा न हो

सकेगा। इसके अतिरिक्त सम्भव है कि किसी समय जरूरत पड़ने पर उस रुपये पर भी तबियत चल जाय और यह खयाल करके—कि मौतका कौन ठिकाना है, न मालूम कितने दिनोंमें आवे, तब तक फिर जमा कर लेंगे—उसको भी खर्चमें ले आवें। इस कारण अपने पास जमा किये हुए रुपयेपर कोई भरोसा नहीं किया जासकता। जरूरतके वक्त सब खर्च हो जाता है और अपने बाद कुटुम्बका क्या हाल होगा, इसका कुछ खयाल नहीं रहता है।

परंतु जो मनुष्य किसी बीमा कम्पनीमें शामिल हो जाता है वह सबसे आराममें रहता है। वह सदा थोड़ा थोड़ा माहवारी या सालाना चंदा कम्पनीके कोशमें जमा करता जाता है और मौतसे बिल्कुल निडर होकर गहरी नींद सोता है। चाहे आज चंदा देकर कल ही क्यों न मर जाय परंतु उसे कुछ चिंता नहीं होती। कारण कि उसकी स्त्री और बच्चोंको जितने रुपयोंका बीमा कराया है उतने रुपये तत्काल मिल जाते हैं।

बीमा करानेसे न केवल उसके कुटुम्बको लाभ होता है किंतु स्वयं उसको अपने जीवनकालमें दूरदार्शिताका खयाल होता जाता है। सबसे बड़ा फ़ायदा यह है कि बीमा करानेवालेके मनमें अत्यन्त पीड़ा या दुःखके समय अथवा मरते समय किसी प्रकारका क्लेश नहीं होता।

जिस मनुष्यने अपनी संतानके लिए रुपया जमा नहीं किया उसको मरते समय आधा दुख रुपयेके न होनेका होता है। इसीके कारण औषधिका उस पर कुछ असर नहीं होता और उसका रोग बढ़ता ही जाता है। कवि बर्न्स (Burns) ने मरनेसे कुछ दिन

पहले अपने एक मित्रको लिखा था कि "मैं अबतक दुःखमें फँसा हूँ। हाय ! मुझे इससे भी अधिक दुःख अपने आगेकी दुःखमयी अवस्थाके भयका है । मेरी विधवा स्त्री और छह छोटे छोटे प्यारे अनाथ बच्चे अब क्या करेंगे ? मैं क्या करूँ? मेरी आधी बीमारी यही चिंता है।"

बीमाकम्पनियाँ विशेष कर अनाथों और विधवाओंकी रक्षाके लिए स्थापित की जाती हैं । थोड़ी आमदनी और पूँजीवाला मनुष्य भी इनसे फायदा उठा सकता है । थोड़ा थोड़ा देते कुछ दूभर नहीं मालूम होता । प्लेग आदि दुर्घटनाओंके कारण अकाल मृत्युके समय इनसे यथेष्ट लाभ होता है ।

प्रायः देखनेमें आता है कि बहुतसे आदमी उमर भर काम करते रहने पर भी मरते समय अपने बच्चोंको भूखे गरीब छोड़ जाते हैं। जीवनकालमें वे बड़े सुख चैनसे रहे, कभी खाने पीने और रहने सहनेमें कमी न की, परंतु उनके मरते ही उनकी अवस्था शोच-नीय हो गई । यदि वे १०—२०रु० साल भी किसी बीमाकम्पनीमें जमा कराते रहते तो उनके खर्चेमें कोई कमी न आती और उनके कुटुम्बको भी कोई कष्ट न होता । परंतु उन्होंने अपनी अदूर-दर्शिताके कारण इस पर कुछ भी विचार न किया । जितना कमाया सबका सब खर्च कर दिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि उनके मरते ही उनकी संतान समाजके लिए भारस्वरूप हो गई। अपनी संतानके प्रति इस प्रकारका व्यवहार करना बड़ी निर्दयता और कठोरता है । पहले तो उनका लालन पालन करना उनके लिए सर्व प्रकारकी सुखसामग्री संचय करना और फिर उनको परवश,

पराधीन और निर्धन छोड़ जाना, यह एक प्रकारसे समाज और उनके प्रति अन्याय और अपराध करना है।

अतएव प्रत्येक व्यक्तिके लिए यह बहुत ज़रूरी है कि वह थोडा थोड़ा रुपया किसी अच्छी बीमाकम्पनीमें जमा कराता रहे कि जिससे अकालमृत्यु आदिका भय न रहे। मौतके बराबर कोई निश्चित चीज़ नहीं; परतु मौतके समयके बराबर कोई अनिश्चित भी नहीं। यदि हमने १०—१५ रु० देकर ५०० रु० का भी आज बीमा करा लिया तो समझना चाहिए कि ये ५०० रु० ऐसे सुरक्षित बैंकमें जमा होगये हैं कि चाहे कितनी ही ज़रूरत क्यों न पड़े कभी खर्च न होंगे। हाँ, यदि हम कल मर जावें तो कल ही हमारे बालबच्चोंको मिल जावेंगे।

यदि हम ये १०—१५ रु० बीमा कम्पनीमें जमा न कराकर किसी बैंकमें जमा करते या किसी और जगह सूदपर चढ़ाते तो कहीं ३०—३५ सालमें जाकर ५००) रु० जुड पाते, परन्तु बीमा कम्पनीमें जमा करानेसे ये ३०—३५ वर्ष चिंता आदिके दुखोंसे मुक्त हो गये—अब भावी दुखका भय वर्त्तमान सुखको नष्ट नहीं कर सकता।

इस तरह जीवनका बीमा एक प्रकारका ठेका है जिससे जीवनकी कठिनाइयाँ और आपत्तियाँ सरल हो जाती हैं। जो लोग जल्दी मर जाते हैं वे उन लोगोंके धनमें साझी हो जाते है, जो देरमें मरते हैं। यदि कोई मनुष्य इतने काल तक जीवे कि उसमें यदि वह स्वयं जमा करता जाता तो बीमेसे मिलनेवाली रकमसे ज़ियादह जमा कर लेता, तो भी उसे कोई पश्चात्ताप नहीं

हो सकता यदि वह उस सुख और शांतिका हिसाब लगाकर देखे जो उसे इतने दिनोंतक रही है।

जिस तरह बम्बई कलकत्ता आदि बड़े बड़े शहरोंमें सौदागर लोग अपने मालको अग्निसे सुरक्षित रखनेके लिए उसका बीमा करा देते हैं, उसी तरह जीवनको रोग शोक तथा असमय मृत्युसे बचानेके लिए उसका भी बीमा करा देना उचित है। जैसे वह जरूरी है ऐसे ही यह भी जरूरी है। जिस तरह पति और पिताका, जीवनकालमें भोजनकी चिंता करना और कुटुम्बका निर्वाह करना कर्तव्य है इसी तरह जीवनके पश्चात् भी स्त्री और संतानके लिए सामान जमा कर जाना जरूरी है। यह प्रत्येक पुरुषका धार्मिक कर्तव्य है जिसका उसे सर्वदा पालन करना उचित है। सौभाग्यसे इसके लिए साधन भी आजकल अनेक हैं और प्रबन्ध भी प्रशंसनीय हैं, अतएव हमें इसके लिए तत्काल ही दृढ़ संकल्प कर लेना चाहिए। इसमें कोई दोष या आपत्ति नहीं है और किसी प्रकारकी मानहानि भी नहीं है। यह अति उत्तम और लाभदायक कार्य है जिसमें किसीको कोई शंका नहीं हो सकती। इंग्लैंड आदि देशोंमें इसका बहुत कुछ प्रचार है। भारतवर्षमें भी यह दिनपर दिन बढ़ता जाता है। परंतु इतनी बात याद रखना चाहिए कि जब हम किसी कम्पनीमें शामिल हों तो उसके नियमोंको अच्छी तरह देख लेवें। उसके डाइरेक्टरों प्रबन्धकोंके-व्यवहार और हिसाब किताबकी भली भाँति जाँच कर लेवें और जिस तरह हो सके उसकी ईमानदारीकी परीक्षा कर लेवें कि जिससे बादमें धोखा न उठाना पड़े। हमें शोकके साथ लिखना पड़ता है कि

आजकलकी इश्तहारी दुनिया हमको बहुत कुछ हानि पहुँचा रही है। इस लिए चाहिए कि, हम केवल छपे हुए उदाहरणों पर ही संतुष्ट न हो जावें; किंतु अच्छी तरहसे देख भालकर शामिल हों। आजकल प्रावीडेंट फंडवाली बीमा कम्पनियाँ जगह जगह खुल रही हैं। जितने इश्तहार छपते हैं उनमें प्रायः उन्हीं लोगोंके नाम आते हैं जिनको चंदा दी हुई रक़मसे ज़ियादह रुपया मिला। इन्हीं नामों और रक़मोंको देख कर सर्व साधारण मेम्बर बनने लगते है परंतु बादमें बहुत धोखा खाते है और टेटेमें रहते है। हमने स्वयं एक कम्पनीमें अपने एक सम्बन्धीकी शादीका बीमा कराया था। क़रीब १८ रु०का चंदा देकर ९ रु० पाये,उल्टे गाँठके ९ रु० खोने पड़े। हमें जहाँ तक ख़याल है किसी इश्तहारमें भी यह उदाहरण न आया होगा। उदाहरण जहाँ मिलेंगे उन ही लोगोंके मिलेंगे जिन्होंने १० रु० देकर १०० रु० पाये अथवा २० रु० देकर ९०० रु० पाये।

अतएव पाठकोंको उचित है कि इश्तहारों पर ही लुब्ध न हो जावें। जहाँतक होसके कम चंदेके लोभमें आकर प्रावीडेंट फंड कम्पनियोंमें शामिल न हों। किंतु ओरियंटल, सन राइज़ आदि प्रसिद्ध इन्सियोरेंस कम्पनियोंमें जिनमें नियत रक़मका बीमा किया जाता है शामिल हों। चन्दा निःसंदेह कुछ अधिक देना होगा, परंतु रुपयेकी संख्या मालूम होनेसे चिंता तो न होगी। प्रावीडेंट फंडोंमें कोई संख्या नियत नहीं होती। शादियों और मौतोंकी संख्या पर रुपयेकी संख्या होती है। कभी कभी १ रु० के १० रु० मिल जाते हैं पर कभी कभी रुपयेके आठ आने ही रह जाते हैं।

दूसरा तरीक़ा यह है कि ऐसी सोसायटियाँ स्थापित करनी चाहिए कि जिनसे बेचारे ग़रीब लोगोंको दुख अथवा आपत्तिके समय सहायता मिले। सोसायटीमें जितने मेम्बर होते हैं वे सब एक दूसरेके सहायक समझे जाते हैं। सोसायटीका जितना रुपया होता है वह सब सोसायटीके मेम्बरोंकी ही सहायताके लिए होता है। पृथक् पृथक् मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। रोग अथवा मृत्युके समय उसके दुखका कोई पार नहीं होता। न कोई उसका सहायक होता है और न उसके पास काफ़ी रुपया ही इलाज अथवा संतान पालनके लिए जमा होता है। परंतु सहायक सोसायटियोंके मेम्बरोंको इस प्रकारका कोई दुःख नहीं होता। उनके इलाज अथवा उनकी संतानके पालन पोषणके लिए सोसायटी मौजूद रहती है। चाहे उन्होंने केवल १० रु० ही चंदा दे पाया हो, परन्तु सोसायटी उनके लिए १०० रु० भी खर्च करनेको तयार रहती है।

इंग्लैंड, बेलजियम, फ्रान्स आदि देशोंमें ऐसी बहुतसी सोसायटियाँ मौजूद है। वहाँके मनुष्य ऐसी सोसायटियोंमें शामिल होना अपना कर्तव्य समझते है। वास्तवमें इनसे लाभ भी अनेक है। थोड़ासा चंदा देनेसे ही लोग मेम्बर बन जाते है। चंदेका रुपया व्यापार आदि कार्योंमें लगाया जाता है जिससे नफ़ा भी होता रहता है। इस तरह सोसायटीका धन बढ़ता जाता है। जिस समय किसी मेम्बरको किसी प्रकारका दुःख होता है अथवा वह अचानक मर जाता है तो इस देशकी नाईं उसकी बुरी दशा नहीं होती। उसकी औलाद भूखों नहीं मरती, भीख नहीं माँगती, उसका घर बार नीलाम

नहीं होता, सोसायटी उसकी तन मन धनसे सहायता करती है। इसमें संदेह नहीं कि पहले लोगोंको चंदा देते कुछ बुरा जरूर मालूम होता है और एक प्रकारका फ़िजूल खर्च जान पड़ता है परंतु पीछे इसका असली उपयोग मालूम होता है। मेहनती मजूर लोगोंको तो इससे बहुत ही फ़ायदा पहुँचता है; कारण कि वे अपनी थोड़ीसी मजूरीमेंसे कुछ नहीं बचा सकते सबका सब खर्च कर डालते हैं और दुःखके समय काम बंद होने और पैसा पास न होनेके कारण जितना दुःख उनको होता है उसको वे ही जानते हैं। जो दो दिनमें अच्छे हो जाते वे दश दिनमें भी अच्छे नहीं हो पाते। कुछ बेचारे तो पैसेके अभावसे कोई इलाज ही नहीं कर सकते, यों ही मर जाते हैं। यदि ये लोग सहायक सोसायटियोंमें शामिल हों और आमदनीका दशवाँ बीसवाँ हिस्सा भी चंदा देते रहें तो इन्हें कोई कष्ट नहीं हो सकता।

इंग्लेंडमें केवल मजूरोंने ही ऐसी अनेक सोसायटियाँ खोल रक्खी हैं। इनसे न केवल सभासदोंको लाभ पहुँचता है किंतु आमदनीका कुछ भाग अन्य धार्मिक कार्योंमें भी लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त एक सोसायटीके सभासद होनेके कारण सब एक दूसरेके दुख सुखमें साथी रहते हैं। आपसमें एक प्रकारकी शांति मालूम होती है। सभासदोंकी जितनी संख्या बढ़ती जाती है उतनी ही शक्ति और प्रीति बढ़ती जाती है। जिसका परिणाम देशके लिए बड़ा ही लाभकारी होता है।

हिन्दुस्तानमें ऐसी सोसायटियोंकी बहुत कमी है। इस कमीके कारण ही यहाँके साधारण स्थितिके मनुष्य बहुत दुःख उठाते हैं अतएव यहाँ ऐसी सोसायटियोंका स्थापित करना बड़ा जरूरी है।

इनके स्थापित होनेसे यहाँके लोगोंमेंसे भिक्षावृत्तिके भाव निकल जावेंगे और वे स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरताको सीख जावेंगे।

अवश्य ही यह काम बड़ा कठिन है। इसमें प्रत्यक्षमें लाभ कम और हानि अधिक है। परंतु यदि इसको विचारपूर्वक किया जाय और अच्छे नियमोंपर चलाया जाय तो अवश्य सफलता होगी। यूरुपके देशोंमें इस प्रकारकी हज़ारों सोसायटियाँ नियमोंके ठीक न होनेके कारण टूट गईं। इसलिए नियमोंको बड़े विचारपूर्वक बनाना जरूरी है। विशेष कर इस बात पर ध्यान देना योग्य है कि उनके सभासदोंपर अवस्थाके अनुसार चंदा लगाया जाय। यह न हो कि चाहे ७० वर्षका बूढ़ा शामिल हो चाहे २० वर्षका जवान, दोनोंसे एकसा चंदा लिया जाय। बहुतसी सोसायटियाँ इसी खराबीसे फेल हुई हैं। उनमें बूढ़ोंकी तादाद बहुत बढ़ गई जो स्वभावतः जवानोंसे कहीं पहले बीमारीमें फँस गये अथवा संसारसे चल बसे। इस तरह चंद बूढ़ोंने ही सोसायटीका सारा रुपया खतम कर दिया, बेचारे जवानोंको हानि उठानी पड़ी। यह देखकर जवानोंने शामिल होना ही छोड़ दिया, केवल बूढ़े ही आने लगे। इनका चंदा इतना हुआ नहीं कि उनकी बीमारी अथवा मौतके खर्चको पूरा करे। अंतमें रुपयेके अभावसे सोसायटीहीकी इतिश्री हो गई।

इन सोसायटियोंने तो इस कारणसे धोखा खाया कि इनको इन बातोंका अनुभव न था। न कोई इस प्रकारका पहला दृष्टांत उनके सामने था; परन्तु भारतवासियोंके सामने तो अब पूरा इतिहास

मौजूद है जिसमें समस्त कम्पनियों और कारखानोंकी सफल असफलताके रहस्य और कारण प्रत्यक्ष विद्यमान है। विचार-पूर्वक काम किया जाय तो कदापि हानि न होगी। जिन जिन खराबियोंके कारण ऐसी सोसायटियोंको हानि पहुँची है उनका प्रवेश ही न होने देना चाहिए। जो कार्य किया जाय वह उद्देश और *नियमानुकूल ही किया जाय। जितने कार्यकर्ता नियुक्त किये जावें* वे सब कर्तव्यपरायण और सत्यनिष्ठ होने चाहिए उनको धर्म और न्यायसे कदापि विमुख न होना चाहिए।

आठवाँ अध्याय।

सेविंग बैंक।

(विद्वानोंके वाक्य)

१—मेरी उत्कट इच्छा है कि मैं समस्त संसारमें सेविंग बैंक शब्दको सुनहरे अक्षरोंमें लिख दूँ।

२—गरीब लोगोंकी मददके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि उनको यह बात सिखलाई जाय कि वे अपनी दशा स्वयं सुधारें।

३—चींटीके पास जाओ और उससे शिक्षा ग्रहण करो। उसकी कोई देख भाल नहीं करता तिस पर भी वह अपने लिए गर्मीमें सामान जमा कर लेती है और जाड़ेमें आरामसे खाती है।

*　　*　　*　　*

भारतवर्षमें जिधर देखो उधर ही निर्धनताका साम्राज्य है। शायद ही कोई घर ऐसा होगा जिसमें इसका जोर न हो; प्रायः सब ही इसकी शिकायत करते हैं। इसका कारण कुछ न कुछ अवश्य है। विचार करनेसे मालूम होता है कि हम अपनी मूर्खता और अदूरदर्शिताके कारण इसके चुंगलमें फँसते हैं। आगेके लिए कुछ भी जमा नहीं करते। रोग शोक, तथा अकाल मृत्यु-की कुछ परवा नहीं करते। जितनी आमदनी होती है सब खर्च कर

डालते हैं। यही कारण है कि आपत्ति आने पर हम भूखों मरते हैं। आगेकी बात कोई नहीं जानता। सम्भव है कि कल हम बीमार पड़ जावें अथवा कल हमारी नौकरी छूट जावे; यदि हमारे पास थोड़ासा भी रुपया जमा है तो हमें कुछ कष्ट न होगा। जब तक आराम होगा अथवा दूसरी जगह नौकरी मिलेगी तब तक हम आसानीसे अपना निर्वाह कर सकेंगे। परन्तु इसके विपरीत यदि हमारे पास रुपया नहीं है तो हमारी दशा बहुत शोचनीय हो जायगी।

चाहे कितना ही थोड़ा रुपया हो ज़रूरतके समय बड़ा काम आता है। मान लो, किसी मजूरके पास १०) रु० हैं। उसकी नौकरी छूट गई और दूसरे शहरमें जियादह मजूरी मिलती है, तो वह इन १० रुपयोंसे दूसरे शहर में जाकर काम कर सकता है; परंतु यदि उसके पास कुछ नहीं है तो वह वहीं पड़ा रहेगा—कहीं भी न जा सकेगा।

हम यह नहीं कहते कि कंजूसकी तरह रुपया जमा किया जाय, हम केवल इस कारणसे रुपयेकी कदर करते हैं कि हमें आराम मिले। संसारमें सब चीजें रुपयेहीसे मिलती हैं। जिसके पास रुपया है, जो आमदनीका थोड़ा हिस्सा भी बचाता है वह सदा आराममें रहता है—कभी तकलीफ़ नहीं उठाता।

आजकल रुपया जमा करनेके साधन भी अनेक हैं। हरएक शहरमें बैंक खुले हुए हैं, और सरकारने गरीबोंके सुभीतेके लिए हरएक कसबे और हरएक शहरमें डाकखानोंके साथ साथ सेविंग-बैंक भी जारी कर रक्खे हैं। डाकखानेके और और कामोंके साथ सेविंग बैंकका भी काम होता है। इस बैंकके नियम बड़े ही सरल

और उपयोगी हैं। गरीबसे गरीब भी इनसे लाभ उठा सकता है। चार आने तक भी इस बैंकमें जमा कर लिये जाते हैं और चलते हिसाबमें चार आने सैकड़ा माहवारी सूद मिलता है। जब चाहो जितना रुपया जमा कर दो और हफ्तेवार जितना चाहे निकाल लो, कोई कैद नहीं। अँगरेज़ी राज्यमें चाहे जिस डाकख़ानेमें अपना हिसाब बदलवा लो, तुम्हारी कौड़ी भी खर्च न होगी। इस बैंकमें रुपया डूबने अथवा दीवाला निकलनेका कोई भय नहीं। यह सरकारी बैंक है। इसकी मालिक और देनदार सरकार है। सबसे बड़ी बात यह है कि इन बैंकोंका हिसाब बड़ा ही गुप्त रक्खा जाता है। पोस्टमास्टरको खास तौरसे इस बातकी हिदायत होती है कि वह किसी हिसाबदारका नाम प्रकट न करे।

पहले पहल ये बैंक इंग्लैंडमें गरीब लोगोंके लिए स्थापित हुए थे, पर अब सब देशों और ग्रामोंमें जारी हो गये हैं। इनका मुख्य उद्देश्य यह है कि साधारण लोग भी रुपया जमा कर सकें। जो आदमी चार आने रोज़ कमाता है उसके लिए पैसा रोज़ बचाना कोई कठिन बात नहीं। यदि पैसा रोज़ भी बचाया जाय तो महीनेमें आठ आने होते है और ये आठ आने सेविंगबैंकमें जमा करनेसे सालमें ६ रु० हो जावेंगे। १० वर्ष में ६२ रु० के करीब हो जावेंगे। हर साल मूलमें व्याज भी शामिल होता जायगा। जिस मनुष्यकी आमदनी ५० रु० मासिक है, यदि वह १२ रु० मासिक डाकख़ानेमें जमा करे तो दश वर्षमें सूद दर सूदके हिसाबसे १७०० रु० जमा कर सकेगा। इन रुपयोंसे यदि वह चाहे तो कोई अच्छा काम कर सकता है। किसी व्यापारादिमें लगा कर दश बारह रु०

सैकड़ेका सूद कमा सकता है। यदि कुछ न करे तो किसी दूसरे बैंकमें पाँच छह रु० सूद कमा सकता है।

अतएव हमें यथासाध्य बचानेकी कोशिश करनी चाहिए। महीनेमें जो बच सके उसे सेविंगबैंकमें जमा करा देना चाहिए। अपने बच्चोंको भी शुरूसे ही इसका अभ्यास कराना चाहिए। जेबखर्चके लिए जब उन्हें पैसे दो तो उनसे यह जरूर कहो कि इनमेंसे कुछ बचाकर रखते जाओ। महीनेमें जब चार आने अथवा अधिक हो जावें तब किसी पासवाले डाकखानेमें उनका हिसाब खुलवा दो।

उनकी 'पासबुक' उन्हींको दे दो और उनको अच्छी तरह समझा दो कि बेटा, इस किताबको अपने पास बड़ी होशयारीसे रक्खो। जब तुम चार आने जमा कर लो, तब डाकखानेमें जाकर इस किताबमें जमा करा लाओ। थोड़े दिनोंमें तुम्हारे पास बहुतसे रुपये होजावेंगे तुम अमीर कहलाने लगोगे। बच्चेको शौक बढ़ता जायगा और वह हररोज अपने जेबखर्चमेंसे कुछ न कुछ बचाता रहेगा। इससे न केवल रुपया ही जमा होगा, किंतु उसे मितव्ययिता और संचयशीलताका अभ्यास भी हो जायगा। वह सदा अपने जीवनमें सुखी रहेगा। कभी फिजूलखर्चीके कारण तकलीफ न उठायगा।

हम समझते है, सेविंग बैंकके बारेमें इतना कह देना काफी है कि सरकारने यह बैंक और बैंकोंकी तरह अपने लाभके लिए नहीं खोला है किंतु केवल हमारे लाभके लिए जारी कर रक्खा है। हमारा कर्त्तव्य है कि यदि हम अपना भला चाहते हैं, हम

अपनेको संसारमें सुखी रखना चाहते हैं तो हमें जरूर कुछ न कुछ बचाना चाहिए। बिना बचाये हमारी स्थिति कभी ठीक नहीं रह सकती। इसकी कुछ परवा नहीं कि कितना बचाया जाय। जितना हम आसानीसे बचा सकें उतना ही काफ़ी है। थोड़ा थोड़ा बहुत हो जाता है। एक एक बूँदसे घड़ा भर जाता है। आधा पैसा रोज़ बचानेसे चार आना महीना बचता है। चार आनेकी शक्ति कुछ कम नहीं है। एक खोमचेवाला चार आनेका माल लगाकर उससे चार आने कमाता है; दो आने खाता है, दो आने मूल-में जमा करता है। दूसरे रोज़ छह आने लगाकर छह आने कमाता है। इस तरह उसकी पूँजी दिन दिन बढ़ती जाती है। थोड़े ही दिनोंमें वह अमीर बन जाता है।

अत एव हमें मितव्ययी और संचयशील होना जरूरी है। मितव्ययी और संचयी पुरुषोंके लिए सबसे पहला स्कूल सेविंगबैंक है। सेविंगबैंकसे उत्तीर्ण होकर हम बड़े बड़े बैंकों और कार्यालयोंमें प्रवेश पा सकते हैं और अतुल्य लक्ष्मीके धनी हो सकते हैं।

इंग्लेंडमें जब कुछ देशहितैषी परोपकारी पुरुषोंने ग़रीबोंकी शोचनीय दशापर तरस खाकर सेविंगबैंक स्थापित किये थे तब उन्हें बड़े बड़े कष्ट उठाने पड़े थे; अनेक आपत्तियोंका सामना करना पड़ा था। परंतु हमारा अहो भाग्य है कि अब स्वयं सरकारने हमारे लिए स्थान स्थानपर इस प्रकारके बैंक खोल रक्खे हैं जिनमें हर तरहका सुभीता है। हमारे बहुतसे भाइयोंका इनमें पहलेसे ही हिसाब होगा। जिनका नहीं है उनसे हम अनुरोध करते हैं कि वे बिना

किसी विलम्बके इनमें अपना हिसाब खोल दें। साधारणस्थितिके लोगोंको बड़ा लाभ पहुँचेगा। थोड़े ही दिनोंमें उन्हें मालूम हो जायगा कि हमारा बहुतसा रुपया जो यों ही फ़िज़ूलखर्चीमें बर्बाद हो जाता सेविंग बैंगमें सुरक्षित मौजूद है।

गरज यह कि ये बैंक हमारे लिए बड़े ही उपयोगी हैं। हमें इनकी बड़ी क़दर करनी चाहिए और इनसे यथासाध्य लाभ उठाना चाहिए।

नौवाँ अध्याय ।

छोटी छोटी चीजें ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१—इस बातको याद रक्खो कि कहाँ खर्च करना चाहिए, कहाँ बचाना चाहिए और कब किस चीजको खरीदना चाहिए । ऐसा करनेसे तुम कभी भूखे न रहोगे ।

२—जो मनुष्य छोटी छोटी चीज़ोंको तुच्छ दृष्टिसे देखता है उसका धीरे धीरे सर्वनाश हो जायगा ।

३—यदि तुम चाहते हो कि तुमको सच्चा सुख प्राप्त हो तो सदा छोटी छोटी चीज़ोंकी रक्षा करो ।

* * * * *

संसारमें छोटी छोटी चीज़ोंकी बेपरवाई करनेसे हज़ारों आदमी बर्बाद हो गये और होते जाते हैं । संसार छोटे छोटे परमाणुओंसे बना हुआ है । हमारा जीवन ज़रा ज़रासी घटनाओंका समूह है। यदि इनमेंसे एक एक पर विचार करें तो वे बहुत ही तुच्छ और अनावश्यक मालूम होती हैं; परंतु प्रत्येक मनुष्यकी सफलता इन्हीं ज़रा ज़रा सी घटनाओं पर निर्भर है । हम किस तरह रहते हैं और किस प्रकार इन घटनाओंका सामना करते हैं, बस इन्हीं बातोंपर हमारा सुख अवलम्बित है । चरित्रगठनके लिए छोटी छोटी

चीजें बड़ी जरूरी है । छोटी छोटी आदतोंके सुधारनेसे ही हमारा आचरण शुद्ध होता है और छोटे छोटे कामोंके करनेसे ही हमारा जीवन सुधरता है । व्यापारमें वृद्धि उसी समय होगी जब हम छोटी छोटी चीजोंकी परवा करेंगे । घरमें आराम तब ही मिलेगा जब हम छोटी छोटी चीजोंको तरतीबसे रक्खेंगे और समय पर तैयार रक्खेंगे । राज्यमें उसी समय उन्नति होगी और वही राज्य उत्तम राज्य कहला सकेगा जब उसमें छोटेसे छोटे काम पर भी पूरा पूरा ध्यान दिया जायगा ।

एक एक अक्षर सीखनेसे ही ज्ञान बढ़ता है । जितने बड़े बड़े विद्वान् हुए और हैं उन्होंने एक दिन किसी न किसी लिपिकी वर्णमालाका पहला अक्षर पढ़ा था । आज जो प्रसिद्ध अनुभवी कहलाते हैं, एक दिन उन्होंने अनुभव प्राप्त करनेकी पहली सीढ़ी पर पैर रक्खा था । धीरे धीरे उनका ज्ञान और अनुभव बढ़ता गया । यदि वे एक एक अक्षर न सीखते, उनको तुच्छ समझ कर छोड़ देते तो कदापि आज अनुभवी विद्वान् न कहलाते । ज़रा ज़रा सी बातोंकी क़दर करनेसे ही आज वे इस योग्य हुए ।

जो मनुष्य कुछ नहीं सीखते अथवा कुछ जमा नहीं करते वे इसी कारणसे गिरे रहते हैं कि उन्होंने छोटी छोटी चीजों पर ध्यान नहीं दिया । वे प्रायः कहा करते हैं कि क्या करें, संसार हमारे विरुद्ध है, परन्तु वास्तवमें संसार उनके विरुद्ध क्या होगा वे स्वयं अपने शत्रु हैं ।

अबतक दैवपर लोगोंकी बहुत ही अंधश्रद्धा थी। परन्तु अब ज्ञानके प्रकाशसे यह कुछ हटती जाती है। अब यह विचार होता जाता है कि परिश्रम ही दैवका जनक या पिता है, अर्थात् जितना मनुष्य श्रम करेगा तथा छोटी छोटी चीजोंकी ओर ध्यान देगा उतना ही वह सफलताको प्राप्त कर लेगा। निरुद्यमी आलसी पुरुष कभी सफल नहीं हो सकता। जो मेहनत नहीं करता वह कभी लाभ नहीं उठा सकता।

मानव जीवनकी सफलताके लिए दैवकी आवश्यकता नहीं किंतु श्रमकी आवश्यकता है। दैव सदा बाट देखा करता है और चाहा करता है कि ऐसा हो जाय; परन्तु श्रम जिस चीज़को करना चाहता है तत्काल उसे दृढ संकल्पद्वारा कर डालता है। दैव दोपहर तक पलंग पर पड़ा हुआ डाककी जोहमें रहता है—शायद अमुक लाटरीमें मेरा नाम निकल आवे, परंतु श्रम सबेरा होते ही अपने कार्यमें लग जाता है और शामतक अपने निर्वाहके योग्य पैदा कर लेता है। वह अवसर ढूँढ़ा करता है यह अपने बाहुबलपर खड़ा होता है। वह पीछे और नीचे गिरता है और यह आगे और ऊँचे बढ़ता है।

घरमें बहुतसी छोटी छोटी चीजें होती हैं। सुख और स्वास्थ्यके उनकी ओर ध्यान देना बड़ा जरूरी है। स्वास्थ्यके लिए सफ़ाई एक मुख्य चीज़ है। सफ़ाईकी जरूरत बड़ी चीजोंमें उतनी नहीं होती जितनी छोटी चीजोंमें होती है। फ़र्श साफ़ रखना, कपड़े बर्तन साफ़ रखना, दीवारोंपर गर्द मिट्टी न चढ़ने देना, जाला न लगने देना, नाली साफ़ रखना, किसी जगह पानी जमा न होने देना, देखनेमें ये बातें बहुत ही छोटी छोटी मालूम होती हैं परन्तु इनका स्वास्थ्य पर

बड़ा असर पड़ता है। इनका खयाल रखनेसे बीमारी दूरसे ही भाग जाती है। जो हवा हमारे मकानोंमें चलती है वह बहुत छोटी चीज़ मालूम होती है क्योंकि न हम उसको देख सकते हैं और न उसके विषयमें अधिक जानते हैं; परंतु यदि हमारे मकानोंमें काफ़ी साफ़ हवा न आवे तो हमें अपनी मूर्खता और असावधानीके कारण ज़रूर तकलीफ़ उठानी पड़ेगी। ज़रासा कूड़ा करकट भले ही मालूम न हो, खिड़कियाँ चाहे बंद रहें या खुलीं इसमें कोई भेद भले ही मालूम न हो, परन्तु इनका बहुत ही बुरा परिणाम होता है। कूड़े करकटसे अथवा ताज़ी हवाके न आनेसे बुखारके घरमें आते देर नहीं लगती और एक दफ़ा आनेपर उससे पीछा छुड़ाना मुश्किल हो जाता है। इस कारण ज़रासी बदबू अथवा ज़रासी खराब हवा भी बड़ी हानिकर है। गरज यह कि घरमें जितने काम होते हैं, यद्यपि वे सब छोटे छोटे मालूम होते हैं परन्तु उनका परिणाम बहुत बड़ा होता है। अतएव उनकी ओर हमारा पूरा ध्यान होना बहुत ही जरूरी है।

पिन कितनी छोटी चीज़ है परन्तु यदि वह ठीक तौरसे न लगाया जाय तो उससे लगानेवालेकी मूर्खता और फूहड़पन मालूम हो जायगा। ऐसा मनुष्य कदापि आदरणीय नहीं हो सकता। एक पुरुषका विवाह होनेवाला था कि एक दिन उसने अपनी होनहार स्त्रीको बाल खोले हुए और बिना पिन लगाये हुए अपने कमरेमें घुसते देख लिया। बस, उसी दिनसे उसके दिलमें यह बात जम गई कि यह स्त्री बड़ी बेपरवाह है—इसका छोटी छोटी चीज़ोंकी तरफ़ खयाल नहीं है। इससे विवाह करना कदापि उचित नहीं है।

एक बार किसी सौदागरने किसी अखबारमें एक मुंशीके लिए इश्तहार दिया। इश्तहारको देखकर बीसों आदमियोंकी दरख्वास्तें आईं। उसने सबको एक ही समय पर अपनी दूकान पर बुलाया और हर एकको एक एक पैसेकी नमककी पुड़िया बनानेको कहा। जब सब बना चुके, तो सौदागरने तमाम पैकटोंको अपनी मेजपर रक्खा और उनमें से उस आदमीको पसंद किया जिसने सबसे उमदा पैकट बनाया था। उसने जरासे कामसे ही उनकी योग्यताका पता लगा लिया।

छोटी छोटी चीजोंकी बेपरवाहीसे बड़ी बड़ी हानियाँ हो चुकी है और बड़े बड़े काम फेल हो गये है। जहाजकी तलीमें जरा सा छेद होजानेसे पानी उसमें भर जाता है और लाखों रुपयेका जहाज दमके दममें डूब जाता है। अँगरेजी कहावत है कि घोड़ेके पैरमें नालके न होनेसे उसका पैर टूट गया, पैर टूटनेसे घोड़ा गिर पड़ा, घोड़ेके गिरनेसे सरदार गिर गया, सरदारके गिरते ही शत्रुने उसको पकड़ लिया और मार डाला। सरदारके मारे जानेसे सारी सेना तितर बितर हो गई। देखिए जरासी लोहेकी नालके न होनेसे कितनी बड़ी हानि हुई।

इसके सिवा प्रायः लोग कहा करते हैं कि रहने दीजिए, यह ही काफ़ी होगा, क्यों फ़िजूल झगड़ेमें पड़ते हो। उनका यह कहना बड़ा हानिकर है। ऐसा कहनेसे कितने ही आदमी बिगड़ गये कितने ही जहाज डूब गये जिनकी कि कोई संख्या नहीं। ऐसा कहना सरासर भूल है। यह असफलताका मूल कारण है। हमको चाहिए कि 'इससे काम चल जायगा' ऐसे शब्द कभी न

कहें और इस बातकी कोशिश करें कि वही काम करें जो सबसे उत्तम और उपयोगी हो।

हमारा ज़रासा आलस हमारे सारे कामको बिगाड़ देता है। कभी कभी ज़रासी बेपरवाहीके कारण हमें सैकड़ों रुपयोंका घाटा उठाना पड़ता है। हमारे साथ बोर्डिंगमें एक महाशय रहा करते थे। वे सदा इस बातकी शिकायत किया करते थे कि हमारे कमरेमेंसे न जाने कौन हमारी चीज़ें चुरा लेता है। उन्होंने बहुत कुछ खोज की, परन्तु उन्हें कुछ भी पता न चला। सबने उन्हें यह सलाह दी कि तुम एक बड़ा लोहेका संदूक लाकर उसमें अपना सारा ज़रूरी सामान रक्खा करो। बेचारोंने उसी रोज़ १०) रु० की लागतका एक सन्दूक मँगाया मगर वे उसके लिए एक रुपयेका ताला मँगानेका आलस कर ही गये। नतीजा यह हुआ कि उसी चोरने मौक़ा पाकर उनका माल फिर निकाल लिया। उनके ज़रासे आलसने देखिए, कितना नुक़सान पहुँचाया? इसी तरह बहुतसे लोग चाबियोंको बेपरवाईसे इधर उधर डाल देते हैं। और जब कोई नौकर वग़ैरह मौका देखकर उनका माल निकाल भागता है तो हाथ मल मल कर पछताते हैं।

हमारे जीवनमें प्रतिदिन ही ऐसी घटनायें हुआ करती हैं। जिस घरमें छोटी छोटी चीज़ोंकी क़दर नहीं की जाती—उनको सावधानीसे नियत स्थानपर सुरक्षित नहीं रक्खा जाता, समझ लो कि उस घरका अन्त आनेवाला है। धनवान् वह ही हो सकता है जो परिश्रमी है। परिश्रमी पुरुष कभी किसी चीज़की बेक़द्री नहीं करता। छोटी छोटी चीज़ोंकी भी पूरी पूरी रक्षा करता है।

देखनेमें कोई चीज कितनी ही छोटी क्यों न हो, उसकी ओर हमें उतना ही ध्यान देना जरूरी है जितना बड़ी चीजकी तरफ। उदाहरणके लिए एक पैसेको लीजिए। देखनेमें यह एक जरासे ताँबेका टुकड़ा है परंतु यह कितना उपयोगी है, कितनी चीजें इससे खरीद सकते हैं और इसको ठीक तौरसे खर्च करनेसे हमें कितना आनंद प्राप्त हो सकता है? एक एक पैसेसे रुपया हो जाता है। यदि हम पैसोंकी बेकदरी करें, एक इधर एक उधर फेंक दें, एककी सिगरेट पीलें, एककी जरासी शराब चख लें, तो हमारी सारी आमदनी यों ही उड़ जायगी। परंतु यदि हम एक एक पैसेको उचित रीतिसे खर्च करें—कुछको सेविंगबेंकमें जमा करें और कुछको बीमा कम्पनीमें लगावें तो बिना किसी कठिनाईके हमारी सब जरूरतें पूरी हो जावेंगी और हमको किसी प्रकारकी चिन्ता न होगी।

थोड़ा थोड़ा बचानेसे बहुत जमा होजाता है। दाने दानेसे ढेर हो जाता है। एक एक तिनकेसे गट्ठा बन जाता है। पैसे पैसेसे रुपया हो जाता है। एक एक पैसा बचानेसे रुपये बच जाते हैं। रुपयेसे सुख, शान्ति, और स्वतंत्रता प्राप्त होती है, परंतु स्मरण रहे कि पैसा ईमानदारीसे कमाना चाहिए। ईमानदारीका कमाया हुआ एक पैसा दूसरेके दिये हुए एक रुपयेसे अच्छा है।

जो आदमी पैसेका उपयोग नहीं जानता वह सदा दूसरोंका मुँह ताकता रहता है। उसकी स्त्री और बच्चे टुकड़े टुकड़ेको तरसते रहते हैं। परन्तु जो पैसेको उत्तम रीतिसे खर्च करता है, वह सदा आनंदमें मग्न रहता है। उसकी स्त्री और बच्चे अच्छा खाते अच्छा

पहनते और अच्छी शिक्षा पाते हैं। वे कभी भूख, प्यास और गर्मी सर्दीके दुःख नहीं सहते ।

अतएव पैसा देखनेमें चाहे जरासा मालूम हो, परंतु इसकी शक्ति बहुत जियादह है। इंग्लैंडमें ऐसी अनेक सोसाइटियाँ है कि जिनमें केवल एक पैसा प्रति दिन जमा करनेसे बड़ी बड़ी रकमें मिलती हैं। जैसे यदि कोई आदमी जिसकी उम्र २० वर्षकी है ६० वर्षकी अवस्था तक एक पैसा प्रति दिन जमा करता रहे तो उसके मरने पर उसके कुटुम्बियोंको १०० रु० मिल जावेंगे चाहे वह कल ही क्यों न मर जाय। जिसकी आयु १९ वर्षकी हो यदि वह जीवन पर्यंत एक पैसा दिया करे तो उसके मरनेपर उसकी औलादको ३०० रु० मिल जावेंगे। यदि कोई आदमी अपने बच्चेके पैदा होनेके दिनसे एक पैसा रोज दिया करे तो १४ वें वर्षमें उसे १०० रु० मिल जावेंगे।

पैसेकी शक्ति कुछ कम नहीं। देखिए, एक एक पैसेसे सहायक फंड कितना काम कर रहे हैं। एक एक पैसा लेकर सैकड़ों रु० देते हैं फिर भी खूब लाभ उठाते है।

पैसेकी तरह ही मिनिट और सेकडको समझो; एक सेकंड भी कभी व्यर्थ न खोओ। जरूरतके वक्त एक सेकंड ही बड़ा काम देता है। जरा उस वक्तका अनुमान करो कि जब तुम्हे कहीं रेलमें बैठ कर जाना है और तुम उस समय स्टेशनपर पहुँचते हो जब गार्डने सीटी दे दी और हरी झंडी दिखला दी है। बस, एक सेकडमें गाड़ी चलनेवाली है। यदि उस समय एक सेकंडकी देर करते हो तो तुम गाड़ीमें नहीं बैठ सकते। समय बड़ा अमूल्य है। जो समय नष्ट हो

जाता है वह कभी फिर नहीं आसकता। क्या पैसा और क्या सेकंड संसारमें कोई वस्तु भी व्यर्थ नहीं है। छोटीसे छोटी चीज भी कामकी है। चाहे कितनी ही छोटी चीज हो परन्तु जरूरतके वक्त उसके न होनेसे बड़ी तकलीफ होती है। मान लो कि हमारे गलेका बटन टूट गया। हमको कचहरी जाना है। परन्तु हमको सुई नहीं मिलती। न जाने हमने उसे कहाँ रख दिया है। देखिए, सुई कितनी जरासी चीज है। परन्तु इसके भी न होनेसे ऐसे वक्तमें कितनी तकलीफ होती है। अथवा हमने दियासलाईको कहीं बे-परवाहीसे रख दी। आधीरातको जब सब सो रहे हैं, हमें कुछ डर मालूम हुआ। परन्तु दियासलाईके न होनेसे हम लेम्प नहीं जला सकते। इस वक्त रुपये काम नहीं आसकते। क्योंकि बाजार बंद है, सब जगह अँधेरा हो रहा है, हर कोई सो रहा है। बिना दियासलाईके लेम्प नहीं जल सकता, परन्तु दियासलाई मिलती नहीं। इस समय कष्टका कोई पार नहीं। यदि एक रुपयेमें भी एक सलाई मिल जाय, तो हम सहर्ष ले लें।

अतएव हमें किसी चीजको भी तुच्छ न समझना चाहिए। प्रत्येकको सावधानीसे नियत स्थान पर रखना चाहिए और उसका सदुपयोग करना चाहिए।

दशवाँ अध्याय ।

स्वामी और सेवक ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१—श्रमसे धन उत्पन्न होता है मितव्ययितासे बढ़ता है और सावधानीद्वारा सुरक्षित रहता है। जो मनुष्य अपने कार्यको श्रमसे करता है, किंतु सावधानीसे नहीं करता वह एक हाथसे कमाता है और दूसरे हाथसे फेंक देता है।

२—धन संचय करना हमारे अधिकारमें है। हमारी आय इतनी अधिक अवश्य है कि यदि हम बुद्धिपूर्वक व्यय करें और संयमका अभ्यास करें तो बहुत जल्द धनवान् बन सकते हैं।

३—कभी कभी कठिनसे कठिन मार्गद्वारा ही सफलता प्राप्त होती है।

*   *   *   *

स्वामी अपने सेवकोंकी बुरी आदतोंको बहुत कुछ सुधार सकता है। उनमें दूरदर्शिता और मितव्ययिता पैदा कर सकता है। यद्यपि मजदूर कारीगर यह नहीं चाहते कि कोई उनका संरक्षक हो, परन्तु यदि उनकी कोई सहायता करे तो इसमें उन्हें कोई शंका भी नहीं होती। यह हम पिछले अध्यायोंमें दिखला ही चुके हैं कि पृथक् पृथक् व्यक्ति भी बहुत कुछ कर सकता है। वह मितव्ययिताका अभ्यास कर सकता है और अपनी आमदनीमेंसे थोड़ा थोड़ा जरूरतके लिए बचा सकता है। परन्तु ऐसा करनेके लिए उसे उत्साह, सहायता और सहानुभूतिकी आवश्यकता है।

यह मालिकोंका काम है—उनका कर्तव्य है कि वे अपने आदमियोंकी उन्नति और लाभका सदैव विचार रक्खें और उनके प्रति यथाशक्ति प्रेम और सहानुभूतिका व्यवहार करें। इसमें खर्च कुछ नहीं होता और लाभ बहुत ज़ियादह होता है। जिस नौकरके साथ इस प्रकारका वर्ताव किया जाता है वह अपने मालिकके लिए प्राण तक देनेके लिए तैयार रहता है।

नौकर प्रायः कमसमझ हुआ करते हैं। शिक्षाके अभावसे उनमें विचारशक्ति नहीं होती, वे अपने हानि लाभको नहीं देख सकते। जहाँ चाहे खर्च कर डालते हैं। मालिकको चाहिए कि सदा इस बातका खयाल रक्खे कि मेरा नौकर सिगरेट तो नहीं पीता, शराबकी भट्टीपर तो नहीं जाता, इधर उधर वाहियात तो नहीं फिरता। यदि वह ऐसा करता है तो उसे इस तरह मना करना चाहिए कि जिससे उसके अंतरंगमें मालिककी ओरसे भय अथवा अरुचि पैदा न हो जाय, किंतु प्रेम तथा प्रतिष्ठाका अंकुर जम जाय। उन्हें संयम और दूरदर्शिताका अभ्यास करानेके लिए सेविंग बेंक और पैसा बेंक खोलने चाहिए, संशोधक समायें स्थापित करनी चाहिए और समय समय पर लेखों और व्याख्यानोंद्वारा उनको रुपयेका सदुपयोग बतलाना चाहिए, जिससे वे अपनी मजूरीको व्यर्थ न खो दें। जिस कारखानेका मालिक नौकरोंके साथ ऐसा वर्ताव करता है, उसका कारखाना सदा उन्नति करता जाता है। क्योंकि कारखानेकी उन्नति नौकरोंके हाथमें होती है। उस कारखानेके नौकर औरोंकी अपेक्षा कम मजूरी लेते हैं और अधिक काम करते हैं। उनको अपने मालिकसे एक तरहका

प्रेम हो जाता है और वे कारखानेको अपना निजी काम समझने लगते हैं। उनमें कभी हड़ताल वगैरहका नाम भी सुनाई नहीं देता।

इंग्लैंड आदि देशोंमें ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे, परन्तु भारतवर्षमें इस समय ऐसे उदाहरणोंकी बहुत कमी है। यहाँ स्वामी और सेवकका कोई सम्बन्ध ही नहीं मालूम होता। स्वामीको अपनी धुन है, सेवकको अपनी लगन है। न स्वामीको सेवकसे सहानुभूति है न सेवकको स्वामीसे प्रेम या प्रीति है। हरएकको अपनी फिक्र है। मालिक चाहता है कि जितना हो सके और जबतक हो सके इससे काम ले लूँ—चार पैसेका काम एक पैसेमें करा लूँ। नौकर चाहता है कि जितनी जल्दी हो सके इसकी बेगारसे अपना पीछा छुड़ा लूँ और एक पैसेकी मजूरीके चार पैसे ले लूँ। चाहे नौकर भूखके मारे मर रहा हो, चाहे उसे खाँसी जुकाम बुखार हो रहा हो, परन्तु मालिक उसे छोड़ना नहीं चाहता। और कितना ही जरूरी काम क्यों न हो, नौकर उसे करना नहीं चाहता। गरज यह कि यहाँ मालिक और नौकरका कोई सम्बन्ध ही नहीं। इस सम्बन्धके न होनेसे हमारे कार्योंमें बड़ी बाधा पहुँचती है। प्रतिदिन ही नये नये झगड़े देखनेमें आते हैं। स्वामी सेवकका सम्बन्ध केवल रुपयेका ही न होना चाहिए। दोनोंमें पारस्परिक प्रेम और सहानुभूति होना जरूरी है। अपने कुटुम्बियोंसे प्यार करो, अपने पड़ोसियोंसे प्यार करो, अपने जातिवालोंसे प्यार करो, अपने देशनिवासियोंसे प्यार करो, मनुष्य मात्रसे प्यार करो और प्राणी मात्रसे प्यार करो। इस तरह हमें सब सबसे प्यारकी सीमा बढ़ानी चाहिए।

नौकर चाहे कितने ही उद्दंड हों, पर वे मालिकके अधीन होते हैं; मालिकका उन पर बहुत कुछ अधिकार होता है। मालिकका काम है कि जहाँ तक हो सके उनका सुधार करे। सदा उनके अभीष्ट पर दृष्टि रक्खे। इंग्लैंडमें बहुतसी कम्पनियोंने अपने नौकरोंके लिए रातके स्कूल, दिनके स्कूल, पुस्तकालय, औषधालय, बैंक आदि खोल रक्खे हैं और उनके रहनेके लिए वहीं मकान बना दिये हैं। एक कम्पनीमें काम करनेवाले सब लोग प्रायः एक जगह रहते हैं और वहीं एक गाँव सा बसा लेते हैं। उनकी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए हरएक चीज़की दूकानें खोल दी गई हैं जिनमें उन्हें लागतके दाम पर शहरसे कहीं सस्ता माल मिलता है। वहाँके रहनेवालोंमें धीरे धीरे आपसमें खान पान और विवाहसम्बन्ध भी हो जाते हैं और वे सदा दुःख सुखमें एक दूसरेको सहायता करते हैं।

भारतमें भी रेलवे कम्पनियाँ अपने आदमियोंके साथ प्रायः ऐसा ही व्यवहार करती हैं। हरएक स्टेशन पर रहनेके मकान बने होते हैं। स्थान स्थान पर रेलवे-अस्पताल खुले हैं, जहाँ विना किसी फीसके इलाज किया जाता है और दवाई भी विना मूल्य दी जाती है। कम्पनीकी ओरसे प्रावीडेंट फंड होता है जिसमें समस्त कर्मचारियोंका रुपया धीरे धीरे जमा होता रहता है। बड़े बड़े शहरोंमें रेलवे स्कूल भी खुले हुए हैं। रेलवे कम्पनियोंके समान अन्य कम्पनियोंको भी अपने आदमियोंका खयाल रखना चाहिए और जहाँ तक बन सके उनकी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक

शक्तियोंको बढ़ाते रहना चाहिए। इसी तरह पृथक् पृथक् नौकर-की भी दशा सुधारनी योग्य है। बहुधा देखनेमें आता है कि हमारे घरोंमें जो नौकर काम करते हैं उनमें चुरट पीने, झूठ बोलने, मैला रहने और चोरी करनेकी बुरी आदतें होती हैं। उनकी देखादेखी हमारे बालक भी बिगड़ जाते हैं। यदि हमें नौकरों-की भलाईका ख़याल न हो तो न सही, परन्तु अपने बालकोंकी भलाईका ख़याल तो अवश्य होना चाहिए। इसी ख़यालसे ही उनकी बुरी आदतोंको छुड़ाना चाहिए। इसके अतिरिक्त उनको कुछ शिक्षा देनी भी ज़रूरी है। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि एक मोहल्लेके आदमी मिलकर उनके लिए रातका स्कूल खोल दें जिसमें उनको एक एक दो दो घंटे रोज़ पढ़ाया जाय। धीरे धीरे वे पढ़नालिखना सीख जावेंगे और बहुत कुछ उन्नति कर सकेंगे। उनके वेतनमेंसे एक आना रुपया काटकर तथा आधा रुपया अपने पाससे मिलाकर किसी बैंकमें उनके नामसे अपनी मार्फ़त जमा कराते रहना चाहिए। जब उनके पास थोड़ा सा रुपया जमा हो जाय, तब वह किसी व्यापार आदिमें लगा दिया जाय, अथवा उससे किसी कम्पनीका एकाधा हिस्सा ख़रीदवा दिया जाय। ऐसा करनेसे उनकी पूँजी धीरे धीरे बढ़ती जायगी और उनकी दशा बहुत कुछ सुधर जायगी। उनके विचार उच्च हो जावेंगे और उनसे देशको बड़ा लाभ पहुँचेगा।

ग्यारहवाँ अध्याय।

अपव्यय (आमदनीसे अधिक खर्च करना)।

(विद्वानोंके वाक्य)

१. कर्ज़ कभी मत लो, सदा हिसाबसे खर्च करो।

२. कर्ज़ लेकर खर्च करनेसे मनुष्यका गौरव कभी नहीं बढ़ता।

* * * * * *

आयसे अधिक व्यय करनेको अपव्यय कहते हैं। अमितव्यय, व्यर्थ-व्यय आदि इसीके पर्यायवाची नाम हैं। अपव्ययके कारण यह देश दिनों दिन निर्धन होता जाता है। यह एक ऐसी बुरी आदत है कि इसमें फँस कर लखपतीको भी भिखारी होते देर नहीं लगती। भारतमें केवल धनिक मनुष्य ही अपव्ययी नहीं होते किन्तु साधारण स्थितिके मनुष्य भी विवाहादिमें हज़ारों रुपये कर्ज़ लेकर खर्च कर डालते हैं।

जहाँ देखो वहाँ फ़िज़ूलखर्चीकी ही चर्चा है। इस फ़िज़ूलखर्चीने हज़ारों घरोंका सत्यानाश कर दिया, लाखोंको पैसे पैसेका भिखारी बना दिया। जो कभी सेठ साहूकार कहलाते थे, जिनके घर कभी हाथी घोड़े बँधे थे, जिनकी कभी बंधी बँधती थी और खुली खुलती थी, आज उन्हींकी संतान टुकड़े टुकड़ेको

तरसती है और मेरे तुम्हारे आगे हाथ पसारती फिरती है। यह आदत घटती नहीं, दिनों दिन बढ़ती ही जाती है। गाँवके आदमी शहरवालोंकी देखादेखी करते जाते हैं और फ़िजूलखर्चीमें ही अपना गौरव समझते है। इंग्लैंड आदि पश्चिमी देशोंमें तो केवल कपड़े और फ़ेशन वगैरहमें ही फ़िजूलखर्ची होती है, किन्तु भारतवर्षमें ज़ियादहतर विवाह शादियोंमें, उत्सवोंमें, मेला प्रतिष्ठाओंमें, जन्ममरणमें और धनिकोंके नाना प्रकारके भोग विलासोंमें होती है। गरीबसे गरीब भी अपने बेटे-बेटीकी शादीमें कर्ज लेकर खर्च करना जरूरी समझता है। गाँठमें चाहे कौड़ी न हो और न भविष्यतमें होनेकी आशा हो किन्तु शादीके खर्चके लिए वह ज़ेवर बेच देता है—घर दूकान तक गिरवी रख देता है। इसमें ही वह अपना गौरव समझता है। चाहे कुछ हो, परंतु भाई बन्धुओं और जाति बिरादरीमें सर नीचा न हो। अमुक व्यक्तिने अपने लड़केकी शादीमें ५००० रु० खर्च किये, मुझे भी उतना ही खर्च करना जरूरी है; नहीं तो लोग क्या कहेंगे? इस विचारने ही हमको अमितव्ययी और अपव्ययी बना रक्खा है।

दैनिक चर्यामें भी हमारा सदा यही विचार रहा करता है कि किसी तरह हम दूसरोंसे कम न समझे जावें। लोग हमारा उतना ही आदर करें जितना दूसरोंका करते हैं और हमारे पास उतनी ही इष्ट सामग्री हो जितनी दूसरोंके पास है। इन्हीं वस्तुओंके संग्रह करनेमें हम अपनी सारी आमदनी खर्च कर डालते हैं। कभी कभी ज़रासी चीज़के लिए भी कर्ज तक लेते नहीं डरते। न जाने हमारे अंदर यह बुरा विचार कबसे

पैदा हो गया है कि जैसा दूसरे करें वैसा हम भी करें । यदि हमारा दूसरा भाई घोड़े गाड़ी रखता है, बहुतसे नौकर रखता है, बड़े बढ़िया मकानमें रहता है, प्रतिदिन नये नये कपड़े बदलता है, अच्छे अच्छे खाने खाता है और दूसरोंको खिलाता है तो हमें भी ऐसा ही करना चाहिए—तब ही हमारी बात रहेगी। परन्तु यह कभी नहीं विचारते कि इतना खर्च करनेकी हमारी शक्ति भी है या नहीं ? उसकी आमदनीके बराबर हमारी आमदनी भी है या नहीं ? दूसरोंके समान हम प्रतिष्ठा पाना तो जरूरी समझते हैं किन्तु उसके कारणों और साधनों पर कभी विचार नहीं करते ।

चाहे हम कितने ही निर्धन हों, चाहे हमारी आमदनी कितनी ही थोड़ी हो, चाहे हम अपनी आमदनीसे कुटुम्बका अच्छी तरह पालन भी न कर सकते हों, परन्तु हम संसारमें अपनेको अमीर ही दिखलाना चाहते हैं । लोग यह कदापि न जानें कि हम गरीब हैं, इसीको हम अपने जीवनका उद्देश्य समझते हैं । इस दिखलावेके लिए ही हम कर्ज लेकर विलायती दूकानोंके बने हुए सूट पहनते हैं, यार दोस्तोंको अच्छे अच्छे खाने खिलाते हैं और कभी पैदल चलना पसंद नहीं करते । परन्तु जब कर्ज बढ़ जाता है, बाप दादाका जमा किया हुआ खतम हो जाता है, बैंकमें पैसा नहीं रहता, घर दूकान दूसरेकी हो जाती है और अदालतमें नालिशें होने लगती हैं, तब हमारा सारा मान भंग हो जाता है, सारे यार दोस्त कपूरके समान उड़ जाते हैं—कोई हमारी तरफ झाँक कर भी नहीं देखता ।

जिनमें स्वावलम्बन और आत्मबल है, जो आत्मगौरवके वास्तविक अर्थको जानते हैं, उन्हें गरीबी कभी नहीं सताती। थोड़ीसे थोड़ी आमदनीमें भी वे अपना निर्वाह कर सकते हैं। मजे उड़ानेवाले यार दोस्तोंसे प्रतिष्ठा होती है, यह समझना निरी मूर्खता है। वे तब ही तक आपके साथी हैं जब तक आपके पास रुपया है अथवा आपको उधार मिल सकता है। जिस दिन आपको उधार मिलना बंद हो गया, उसी दिन वे भी आपके यहाँ आना बंद कर देंगे। यह हाल केवल यार दोस्तोंका ही नहीं है, सम्बन्धियोंका भी यही हाल है। ऐसे लोगोंसे गौरव कदापि नहीं बढ़ सकता। गौरव स्वावलम्बन और चरित्रगठनसे बढ़ता है। प्रतिष्ठा रुपयेको मितव्ययिता और सावधानीसे खर्च करनेसे बढ़ती है न कि कर्ज लेकर अथवा उधार लेकर खर्च करनेसे।

हम बहुतसी रस्मों और रिवाजोंके दास बन रहे हैं। इन्होंने ही हमको चारों ओरसे जकड़ रक्खा है। हमको कोई काम उनके विरुद्ध करनेका साहस नहीं होता। जो कुछ हमारे बड़ोंने किया है अथवा हमारे कुटुम्बमें होता चला आया है वही हमको करना होगा, चाहे हम उसके योग्य हों या न हों। हम आपत्तिके भोगनेको तैयार हैं, घर बार बेचनेको मौजूद हैं; परंतु प्रचलित व्यर्थ प्रथाओंके रोकनेके लिए तैयार नहीं। हमारा दिल भले ही कहता हो कि ये प्रथायें बुरी हैं, इनको छोड़ना चाहिए, इनसे हमको बड़ी हानियाँ पहुँच रही हैं; किन्तु हम स्वयं अगुवा बनना नहीं चाहते। चाहते हैं कि पहले दूसरे लोग छोड़ें, पीछे हम देखेंगे। यदि कोई व्यक्ति साहस करके किसी रस्मको छोड़ भी देता है, तो जातिवालोंकी ओरसे

सका उत्साह बढ़ाया नहीं जाता है उल्टा वह हतोत्साहित किया ाता है। उसका प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपसे विरोध और अपमान किया जाता है। न उसके यहाँ कोई जाता है और न उसकी किसी प्रकारसे सहायता की जाती है। तमाम जाति उसको कृपण और दरिद्र कहकर पुकारती है। यह देखकर किसीका साहस नहीं होता कि कोई काम भी प्रचलित प्रथाओंके विरुद्ध करे। परंतु यदि विचारपूर्वक देखा जाय, तो यह हमारी निर्बलता और अज्ञानता है। हमको चाहिए कि हम किसीकी परवा न करें। दूसरे लोग हमसे क्या कहेंगे इसका विचार तक भी दिलमें न लावें। वे जो चाहें कहें, हमारा कुछ नहीं बिगड़ सकता। यदि वे हमारा साथ नहीं देते तो न सही, परंतु हमें कोई काम अपनी वितसे बाहर नहीं करना चाहिए। यह हमारा दृढ़ संकल्प होना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि इसके लिए बड़े साहसकी जरूरत है परंतु अंतमें हमारी ही विजय होगी, इसमें भी कोई संशय नहीं। आज अज्ञानताके कारण लोग हमारा भले ही विरोध करें; परंतु थोड़े दिनोंके बाद ही हमारा सत्य सब पर प्रगट हो जायगा और सब कोई हमारा अनुकरण करने लगेंगे। पहले हरएक कार्यमें बाधायें आती हैं परंतु बादमें सब काम सरल हो जाते हैं। इतिहास इस बातका साक्षी है। जितने नये नये काम हुए, प्रारम्भमें लोगोंने उनका घोर प्रतीकार किया, परन्तु अब सभी उनकी मुक्तकंठसे प्रशंसा करते है। केवल साहस और श्रद्धाकी आवश्यकता है।

संसारमें सब मनुष्य एकसे नहीं हैं। धनवान् भी हैं, निर्धन भी हैं, बलवान् भी हैं, निर्बल भी हैं। एकसे एक बढ़कर हैं।

यदि हम दूसरोंका ही अनुकरण करनेमें अपना गौरव समझते हैं तो कदापि गौरव प्राप्त नहीं कर सकते। गौरव बुरी चीज़ नहीं है; प्रत्येक मनुष्यका धर्म है कि गौरव प्राप्त करे। जिस मनुष्यका गौरव नहीं, उसका जन्म लेना ही संसारमें निष्फल है। भेद केवल इतना ही है कि हम गौरवके वास्तविक अर्थको नहीं समझते। हमारा विचार है कि अच्छे अच्छे कपड़े पहनने और बढ़िया बढ़िया मकानोंमें फेशनसे रहनेमें ही गौरव है। अँगरेज़ी लिबास और अँगरेज़ी ढंगमें रहना तो मानों गौरवकी उच्चतम सीढ़ीपर चढ़ जाना है। चाहे हमारा आचरण कैसा ही हो, चाहे हम दिनों दिन कर्ज़के भारसे दबते जाते हों; परंतु हमारी समझमें इन बातोंका गौरवसे कोई सम्बन्ध नहीं। गौरव केवल फेशन और इस्टाइल (Style) में है। इस अज्ञानताने ही हमारा सत्यानाश कर दिया और यहीं अब भी करती जाती है।

यह बाहरी फेशन और दिखलावा दिनोंदिन बढ़ता जाता है। फ्रांस और इंग्लेंड तो पहले ही इन बातोंमें प्रसिद्ध थे परन्तु अब भारत भी कुछ कम नहीं रहा। उन देशोंमें तो केवल कपड़े वगैरहमें ही फ़िज़ूलख़र्ची की जाती है, परन्तु भारतमें न केवल कपड़ेमें किंतु जेवरमें भी लाखों रुपया प्रतिदिन नष्ट किया जाता है। चाहे कोई आदमी कितना ही निर्धन हो परन्तु वह भी ज़ेवरको एक प्रकारकी आवश्यक चीज़ समझता है। प्रमाणके लिए इस देशके ग़रीबसे ग़रीब घरको ले लीजिए। अनाज उसमें भले ही न निकले, परन्तु ज़ेवर कुछ न कुछ अवश्य निकलेगा। विवाह शादियोंमें हज़ारों रुपये केवल ज़ेवर पर ही ख़र्च किये जाते हैं। बिना ज़ेवर-

के विवाह हो ही नहीं सकता। बेटीवाला पहले यह पूछ लेता है कि कितना जेवर चढ़ाओगे, पीछे मँगनी करता है। सैकड़ा पीछे आठ मनुष्य ऐसे निकलेंगे जिनको अपने बेटे-बेटियोंके विवाहमें कुछ न कुछ कर्ज लेना पड़ता है और दश ऐसे निकलेंगे जिनको अपनी जायदाद बेचनी अथवा गिरवी रखनी पड़ती है। इस तरह लोगोंको जेवरके लिए कर्ज लेना पड़ता है। फिर सुनारको घड़ाई देनी पड़ती है। सुनार कभी असली चीज नहीं बनाता, कुछ न कुछ खोट अवश्य मिला देता है। यदि न भी मिलावें, तो भी जेवर दिनों दिन घटता जाता है। पहननेसे घिसता है और रखनेसे खराब होता है। लाभ कुछ नहीं होता, पत्थरकी तरह रक्खा रहता है। यदि कभी बेचा जाय, तो घड़ाई और खोटके अतिरिक्त कम दाममें कम भावसे बिकता है। लाभके स्थानमें उल्टी हानि होती है और रुपयेका दुरुपयोग होता है। यदि इतना रुपया जेवरमें खर्च न करके किसी व्यापार आदिमें लगाया जाय अथवा बेंकमें जमा किया जाय, तो दिनों दिन बढ़ता जायगा और कुछ वर्षोंके बाद दूना हो जायगा।

जिस तरह पेरिसकी स्त्रियाँ उधार ले ले कर नये नये फेशनके कपड़े बनवाती है, उसी तरह यहाँकी स्त्रियाँ अपने पुरुषोंको तरह तरहके फेशनके जेवर बनवानेके लिए तंग करती रहती हैं। यदि पुरुष अपनी निर्धनताके कारण उनकी इच्छा पूर्ण नहीं करते, तो मानों घरमें युद्ध खड़ा कर लेते हैं।

इंग्लेंडमें जब कोई मर जाता है तब बड़ी सज धजके साथ उसका क्रिया कर्म किया जाता है और सैकड़ों रुपये खर्च कर दिये जाते हैं।

इसी तरह भारतमें जब किसीके पुत्र पैदा होता है अथवा कोई बड़ा आदमी मर जाता है, तब सैकड़ों रुपये नाच तमाशों, नुकतों और ज्यानारोंमें खर्च कर दिये जाते हैं। कहीं कहीं तो ऐसा रिवाज है कि चाहे जवान मरे चाहे बूढ़ा, चाहे छोटा चाहे बड़ा, सब भाईयोंको तेरहवीं खिलानी ही पड़ती है। विवाहोंमें पैसे पास न होते हुए भी भाजी देनी पड़ती है और दहेजमें सैकड़ों रुपयेका सामान देना पड़ता है।

इन प्रथाओंके कारण लोगोंको लाचार होकर कर्ज लेना पड़ता है, परन्तु यह उनकी निर्बलता है। वे कर्ज लेते डरते नहीं, उनको कर्ज लेते भय नहीं मालूम होता। वे समझते हैं कि कर्ज लेना अच्छा है परंतु जातिमें अपमानित होना अच्छा नहीं। उनके दिलमें कभी यह विचार ही नहीं होता कि विवाहादिक कार्यके लिए कर्ज लेना अनुचित है। वे इसको जरूरत समझे हुए हैं। यही उनकी भूल है। जातिमें जितनी प्रथायें हैं, वे सब मनगढ़ंत हैं। किसी नियम पर भी स्थिर नहीं है। हम क्यों उनकी नकल करें, यह समझमें नहीं आता। कुछ अमीरोंने फिजूलखर्ची करके उनको प्रचलित कर दिया है। हमारा काम है कि हम उन्हें हानिकर समझ कर तोड़ दें। इसमें कोई पाप नहीं। यह धर्मके विरुद्ध नहीं। सभ्यता और शिष्टाचारके प्रतिकूल नहीं। भविष्य जीवनके लिए बाधक नहीं। केवल कुछ लोगोंके भयसे वास्तविक गौरवको नष्ट करना, ऋण और चिन्ताका असह्य भार अपने सिर पर उठाना, अपनी स्वतंत्रताका नाश करना और अपनी संतानको उत्तम शिक्षासे वंचित रखना निरी मूर्खता है। यदि हम किसी विवाहमें १००० रु० खर्च न

करके १०० रु० में ही काम करलें, सारे शहरके खाते पीते लोगोंको न खिलाकर कुछ अपने इष्ट मित्रों और भूखोंको ही खिला दें, जेवरमें हजारों रुपये नष्ट न करके साफ़ और सादे कपड़ों पर ही संतोष कर लें, तो हमें कोई शहरसे नहीं निकाल देगा; न कोई धर्मसे पतित कर सकेगा और न कोई जातिसे बाहर कर देगा। कुछ दिन जातिके मूर्ख लोग भड़भड़ करके रह जावेंगे। हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी लड़कीके विवाहमें लड़केवालेसे जेवरका नाम भी न लें, किन्तु उसे यह समझावें कि जेवरमें रुपया लगाना रुपयेको बर्बाद करना है। हमको वे काम करने चाहिए जिनसे रुपया बढ़े और रुपयेको ऐसे कामोंमें लगाना चाहिए कि जो जीवनके लिए आवश्यक हों। जेवर जरूरी चीज कदापि नही है। पौष्टिक पदार्थ खाना, साफ़ सुथरे कपड़े पहनना, स्वच्छ मकानमें रहना, संतानको उत्तम और उच्च शिक्षा दिलाना, रोग शोक और अकाल मृत्यु आदिके लिए रुपया जमा करना और अनाथों विधवाओंकी सहायता करना, ये जीवनकी आवश्यकतायें हैं। पहले इनको पूरा करना हमारा सर्वोपरि कर्तव्य है। यदि इन सबसे रुपया बच जाय और इन सम्बन्धी कोई इच्छा न रहे, तो भले ही हम जेवरमें रूपया खर्च कर दें; परन्तु इन सब बातोंका विचार न करते हुए कर्ज लेकर जेवरमें रुपया लगाना अथवा और फ़िजूलखर्ची करना मानों अपनी नींवमें कुल्हाड़ी मारना है।

हमें तो कर्जको सुनकर भय मालूम होता है। इसके नामसे ही डर लगता है। यह वह बला है कि जिसके पीछे एक बार

लग जाती है फिर उसको कठिनाईसे छोड़ती है । कर्ज लेना क्या है अपनी ईमानदारीको बेचना और झूठ और बेईमानीको मोल लेना है । कर्जवाले सदा वादे किया करते हैं, परन्तु उन्हें पूरे कभी नहीं कर पाते । वे हरएककी निगाहमें गिर जाते हैं और सब गौरव खो बैठते हैं ।

अतएव हमें कदापि कर्ज न लेना चाहिए । भूखों मरना अच्छा है, परन्तु कर्ज लेकर पेट भरना अच्छा नहीं । हमारी जितनी आमदनी हो, उसीके अनुसार खर्च करें । आमदनीसे जियादह खर्च करनेका विचार तक भी कभी दिलमें न लावें । कोई चीज चाहे कितनी ही सस्ती मिले, उधार न लें । स्मरण रक्खो, उधारमें तुम्हें कभी कोई भी चीज सस्ती नहीं मिल सकती । दूकानदार इस बातको खयालमें रखता है कि तुम इतने दिनोंमें रुपया दोगे । वह उससे दूनी मुद्दतका सूद लगा लेता है । कुछ व्यापारी छह छह महीनेके उधार पर कपड़ा वगैरह बेचा करते है । लोग खुशी खुशी उनसे माल लेते हैं और समझते हैं कि इसमें हमको लाभ रहेगा, पर वे मितव्ययिताके नियमोंसे अपरिचित हैं । उन्हें एक रुपयेके मालके तीन रुपये देने पड़ते है । यदि वे अपनेको छह महीनेतक किसी तरह वशमें कर लेवें, तो छह महीनेके बाद वही चीज एक रुपयेमें बाजारसे नकद देकर खरीद सकते हैं और दो रुपया बचा सकते हैं । इसके लिए कठिनाई कोई नहीं है, केवल संकल्पकी आवश्यकता है । हम यह संकल्प कर लें कि हम कोई चीज उधार नहीं लेंगे चाहे हमें कोई कितना ही लोभ दे हम उसके लोभमें न आवेंगे और अपने विचार पर जमे रहेंगे ।

यह बात भी सदा याद रखनी चाहिए कि यदि हमारी आमदनी इतनी छोटी है कि हम कोई इच्छित पदार्थ नहीं ले सकते, तो हमें अपनेको वशमें करना चाहिए और इस बातका उद्योग करना चाहिए कि हम उस योग्य हो जावें। हमारे पास इतना रुपया हो जाय कि हम उस पदार्थ को ले सकें। ऐसा करनेसे अवश्य एक दिन हमारी मनोकामना पूर्ण हो जायगी। मान लो, हमारी आमदनी केवल १० रु० मासिककी है जिसमें हमारा बड़ी मुश्किलसे पूरा पड़ता है। ऐसी दशामें हमको कदापि विवाह न करना चाहिए। जब हम अपना ही निर्वाह इतनी थोड़ी आमदनीमें मुश्किलसे कर पाते हैं तब अपनी स्त्रीका कैसे कर सकेंगे? फिर थोड़े दिनों बाद यदि बच्चे हो गये, तो क्या करेंगे? न उनको खिला सकेंगे, न पढ़ा सकेंगे। परिणाम यह होगा कि वे घर घर भीख माँगते फिरेंगे, अन्तमें चोर और डाकू बनेंगे और कुल जाति और देशको कलंकित करेंगे। यदि हम देखते हैं कि हमारा लड़का मूर्ख है, कुछ कमाता धरता नहीं, तो हमारा धर्म है कि हम उसका भी कभी विवाह न करें। अभी तो वह स्वयं हम पर और देश पर भार है, उस दशामें उसकी स्त्री भी भारस्वरूप हो जायगी और उस बेचारीका जीवन बड़ा ही दुःखमय हो जायगा।

बारहवाँ अध्याय।

ऋण (कर्ज)।

(विद्वानोंके वाक्य)

१ हिसाब रक्खे बिना जीवन निरर्थक और दु खमय है।

२ *ऋण बुरी बला है। यह झूठ, नीचता, कुटिलता, चिंता और मायाचारकी जननी है।* प्रतिष्ठितसे प्रतिष्ठित व्यक्तिको भी क्षणभरमें अपमानित कर देना इसका एक साधारण काम है।

३ ससारभरके मनुष्योंको दो श्रेणियोंमें विभाजित कर सकते हैं, एक वे जो ऋण लेते है और दूसरे वे जो ऋण देते है।

* * * * * * * *

जब लोग कर्ज लेते हैं तब वे बेचारे यह नहीं जानते कि हम कर्ज लेकर अपनेको किन किन दु खों और आपत्तियोंमें डालते है। चाहे किसी कामके लिए कर्ज लिया जाय जबतक वह चुकाया नहीं जाता, चक्कीके पाटकी तरह कर्ज लेनेवालेके गलेमें लटका रहता है। एक सेकडके लिए भी उसको आराम नहीं लेने देता। रातको सोते हुए भी भूतकी तरह उसकी छाती पर सवार रहता है। न कभी वह भर पेट भोजन कर पाता है और न कभी अपने बालबच्चोंकी जरूरतोंको पूरा कर सकता है। कर्ज क्या लिया

मानो अपनेको बंधनमें डाल लिया और सारे घर गृहस्थीके सुख-को खो दिया।

जिनकी आमदनी अच्छी खासी है वे भी प्रायः कर्ज़के भारसे वर्षों दबे रहते हैं। न जाने यह कैसा रोग है कि पीछा ही नहीं छोड़ता और कैसा भूत है कि चढ़कर उतरना ही नहीं जानता। क्या तो कोई आगेके लिए बचावे और क्या कोई जान मालका बीमा करावे, इसके मारे चैन तो पड़ती ही नहीं। रूखा सूखा खाकर और फटा पुराना पहन कर जो कुछ बचता है, वह सब इसीकी भरतीमें भरा जाता है।

जिनके यहाँ बड़ी बड़ी रियासतें और जागीरें हैं, वे भी प्रायः कर्ज़के भारसे दुखी रहते हैं। किसी बुरी आदत अथवा फ़िज़ूल-खर्चीके कारण जागीरोंको गिरवी रखकर कर्ज़ लेते हैं। मगर जहाँ एक बार कर्ज़ लिया कि बस फिर उमर भर उससे छुटकारा नहीं पा सकते। कम होनेके स्थानमें कर्ज़ उल्टा दिनों दिन ज़ियादह हो जाता है और थोड़े ही दिनोंमें जागीरकी हैसियतसे भी बढ़ जाता है। इसका परिणाम यही होता है कि जागीरें हाथसे चली जाती हैं और जो कल बड़े अमीर कहलाते थे, वे आज भिखारी बन जाते हैं।

इतिहाससे पता लगता है कि बड़े बड़े आदमी भी कर्ज़दार रहते हैं। कर्ज़का बड़ाईसे घना सम्बन्ध है। संसार बड़े आदमियों पर भरोसा करता है, इसी कारण उन्हें कर्ज़ मिल जाता है। यही हाल बड़ी बड़ी जातियोंका है। उनकी बड़ाईके कारण उन्हें कर्ज़ देते कोई नहीं डरता। कर्ज़ किन्हें नहीं मिलता? जो छोटे हैं, जिनपर

कोई भरोसा नहीं करता। वे जैसे पैदा होते हैं वैसे ही मर जाते हैं; उनको कोई जानता भी नहीं। परन्तु कर्ज़दारोंका नाम सारी दुनियामें फैल जाता है। किताबों और समाचारपत्रोंमें लिखा जाता है। उनके विषयमें तरह तरहके विचार किये जाते हैं। सबकी आँख उनपर लगी रहती है। वे कैसे हैं, उनका स्वास्थ कैसा है, सदा ही ये सवाल होते रहते हैं और यदि वे कभी विदेशमें चले जाते हैं तो सब कोई उनके लौटनेकी बाट देखा करते हैं।

संसारकी कैसी अनोखी दशा है। बेचारे कर्ज़ देनेवालेकी ही आपत्ति है। हर कोई उसे ही कड़ा और कठोर ठहराता है। कर्ज़दारको सब कोई भला और सीधा कहते हैं। उसकी दशा पर शोक करते हैं और उससे सहानुभूति रखते हैं। जब कोई कर्ज़दार कर्ज़ नहीं चुका सकता और लेनदारका उसपर तकाज़ा होता है, तब कर्ज़दारसे कोई नहीं कहता कि तूने कर्ज़ क्यों लिया था, अब जिस तरह हो अदा कर। बेचारे साहूकारको ही सब कहा करते हैं कि इसको कर्ज़ क्यों दिया था? अब आधा चौथाई जो कुछ मिले उस हीपर संतोष कर। कर्ज़ देना बुरा है।

चाहे कुछ हो, लोग चाहें जो कहें, पर असली बातको कोई नहीं मेंट सकता। कर्ज़ लेना बुरा ही नहीं, किन्तु घृणा और नीचताका काम है। कर्ज़दारके घर पर सदा साहूकारका आदमी और दीवानीका चपरासी समन लिये खड़ा रहता है। ज्यों ही कोई उसके दर्वाज़ेको खटखटाता है, त्यों ही उसका चेहरा पीला पड़ जाता है। उसके यार दोस्त अब उसकी तरफ़ देखते भी नहीं और उसके रिश्तेदार उससे बोलते भी नहीं। उसकी सारी आबरू मिट्टीमें मिल जाती है।

उसको बाहर जाते शर्म मालूम होती है और घरमें रहते कोई आराम नहीं मिलता। वह कड़वा और मिज़ाज़का चिड़चिड़ा हो जाता है और जीवनका आनंद खो बैठता है। उसे सदा रुपयेकी जरूरत रहती है, परन्तु पिछला कर्ज़ न चुकानेके कारण कोई एक पैसा भी नहीं देता। वह सदा झूठे हीले और बहाने किया करता है। किसीको उसपर विश्वास नहीं रहता। वह अपनी स्वाधीनताको नष्ट कर देता है और उसकी दशा बड़ी ही शोचनीय हो जाती है। वह सदा यह चाहा करता है कि किसी दूसरेसे कर्ज़ मिल जाय जिससे पहिला कर्ज़ चुका दूँ। ऐसा करनेसे कुछ दिनोंके लिए जान बच जायगी। परन्तु कब तक? आज बची तो कल ख़ैर नहीं। एक न एक दिन अवश्य घर बार नीलाम हो जावेंगे और खुदको जेलखानेकी सैर करनी पड़ेगी।

अब सवाल यह है कि जब कर्ज़ ऐसी बुरी चीज़ है तब हमें इससे बचनेके लिए क्या करना उचित है और किस तरह हम अपनी स्वाधीनता और प्रतिष्ठाको सुरक्षित रख सकते हैं? इसका केवल एक उपाय है जो हम पिछले अध्यायमें बता चुके हैं, अर्थात् हमें अपने बितके अनुसार खर्च करना चाहिए। आमदनीसे एक कौड़ी भी अधिक खर्च करना अनुचित है। परन्तु इसी बातकी हममें कमी है। हम आमदनीकी कुछ परवा नहीं करते और खर्चका कोई हिसाब नहीं रखते। जितना चाहे उधार लेकर खर्च किये जाते हैं। झूठे नाम और दिखलावेके लिए कितना ही रुपया फ़िज़ूल कामोंमें बर्बाद कर देते हैं जिनसे कोई भी लाभ नहीं होता। हम अपनी मूर्खतासे समझते हैं कि सज धजसे रहने और लोगोंको

दावतें खिलानेसे नाम होता है। परन्तु एक अँगरेजी कहावत है कि " मूर्ख खिलाया करते हैं और चतुर खाया करते है। "

हमें कदापि कोई चीज़ उधार न लेना चाहिए और दूकानदारोंको भी कोई चीज़ उधार न देना चाहिए। उधारको जहाँ तक हो, बंद करना ही उचित है। हरएक चीजके लिए नक़द दाम देना चाहिए। जब दाम न होंगे तब ख़ुद ही कोई चीज़ न लेंगे। उधारमें कुछ ऐसा जादू है कि बिना ज़रूरतकी चीजें भी ले ली जाती हैं। यह ख़याल कि 'कौन दाम नक़द देना है, फिर दे देंगे,' हमारी बहुतसी फ़िज़ूल-ख़र्चियोंका कारण होता है। हरएक चीज़को नक़द दाम देकर लेनेसे सिर्फ़ वे ही चीजें ख़रीद सकेंगे जिनके बग़ैर काम चलता ही नहीं। ऐसा करनेसे कभी तकलीफ़ नहीं हो सकती।

उधार और कर्ज़ लेनेकी आदत मूर्ख और निर्धन लोगोंमें ही नहीं, उन लोगोंमें भी पाई जाती है जो बड़े विद्वान् और बुद्धिमान् कहलाते हैं। वे दूसरोंको उपदेश देते है किंतु स्वयं उससे उल्टा करते हैं। इतिहास ऐसे उदाहरणोंसे भरपूर है। विश्वविख्यात उपदेशक बेकनका नाम कौन नहीं जानता? उसके तत्त्व और सिद्धान्त कौन नहीं मानता? परन्तु उसकी जीवनीको सुनकर हृदय काँप उठता है। ऐसा विद्वान् शिक्षक और उपदेशक होने पर भी उसने मितव्ययिताका अभ्यास नहीं किया। सदा फ़िज़ूलख़र्चियोंके कारण कर्ज़ पर कर्ज़ लेता गया। कर्ज़ चुकानेके लिए तथा बढ़े चढ़े ख़र्चके लिए उसने अन्तमें घूँस तक लेना पसंद कर लिया। परन्तु पाप कभी छिपा नहीं रहता। उसका घूँस लेना किसी तरह उसके शत्रु-

ओं पर प्रगट हो गया । उन्होंने तुरन्त उसको दोषी ठहराकर बड़ा ही लज्जित और अपमानित किया और उसके जीवनको नष्ट भ्रष्ट कर दिया ।

बेचारा बेकन (Bacon) निरा तत्त्ववेत्ता विद्वान् था । हिसाब किताब और लेन देनके विषयमें अधिक न जानता था । उससे ऐसी भूल होना कोई अचंभेकी बात नहीं । अचंभा तो मिस्टर पिट (Mr. Pitt) का है । यद्यपि मिस्टर पिटने कठिनसे कठिन आपत्तिके समयमें भी राष्ट्रीय धनकी रक्षा की है और उसका यथेष्ट प्रबंध किया है, परंतु वे स्वयं सदा कर्जमें ही फँसे रहते थे । हजारों रुपयेकी आमदनी होते हुए भी वे कर्जसे छुटकारा न पा सके । उनके घरेलू खर्च इतने बढ़े चढ़े थे कि एक लाख रुपया सालनासे भी काम न चलता था । उनके मरने पर छह लाख ६००००० रु० का कर्ज उनकी तरफसे जातिने चुकाया ।

यही दशा लार्ड मेल्विल (Lord Melvile), फाक्स (Fox), शेरीडन (Sheridan), बाईरन (Byron), कूपर (Cowper), ग्रीन (Greene), पील (Peele), मारलो (Marlowe), बेनजानसन (Benjonson), बर्न्स (Burns), गोल्डस्मिथ (Goldsmith), सर वाल्टर स्काट (Sir Walter Scott) आदि अनेक बड़े बड़े विद्वानों, लेखकों और कवियोंकी थी । एक नहीं, दो नहीं, सैकड़ों उदाहरण उनकी असावधानी और फिजूलखर्चीके मिलते हैं । कर्जदारोंने इनके नाकमें दम कर दिया, तिस पर भी इन्होंने अपनी आदतोंको न सुधारा और मरते मरते भी फिजूलखर्चीको न छोड़ा । हमारे इस देशमें भी ऐसे उदाहरणोंकी कमी नहीं ।

यद्यपि ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत ऊँची है, परन्तु मितव्ययी पुरुषोंका भी सर्वथा अभाव नहीं है । हरएक देश और हरएक कालमें अमितव्ययी पुरुषोंके साथ साथ मितव्ययी भी होते रहे हैं । शेक्सपियरने (Shaskepeare) कभी कर्ज़का नाम भी नहीं लिया । डाक्टर जानसन (Dr. joanson) का जीवन मितव्ययिता और दूरदर्शिताका मानो एक स्पष्ट चित्र था । उसने रुपयेके अभावसे आपत्ति पर आपत्ति झेलना स्वीकार किया, बिना मकानके सड़कों पर ही रात बिता देना और भूखा रहना पसंद किया, किन्तु कर्ज़ लेना गवारा न किया । शुरूसे ही गरीबीने उसको दबा लिया था, परन्तु वह उसकी कोई परवा न करता था । उसको लोग क्या कहेंगे, दूसरे कैसे रहते हैं, ऐसी बातोंका उसे कभी स्वप्नमें भी ख़याल न होता था । वह अच्छी तरह जानता था कि मनुष्यको कभी अपने वित्तसे बाहर ख़र्च न करना चाहिए । इन प्रारम्भिक दुःखोंने ही उसके हृदयमें प्रेम और सहानुभूति पैदा कर दी थी । घोर आपत्तिमें भी वह अपनेसे जियादह गरीबोंकी सहायता करना अपना मुख्य धर्म समझता था ।

कर्ज़के बारेमें डाक्टर जानसनने एक बार अपने एक मित्रको लिखा था—" भूल कर भी कभी कर्ज़ न लो । इसको एक कठिनाई ही न समझो किन्तु एक विपत्ति जानो । सदा अपनी आमदनीसे कम खर्च करो । छोटे छोटे कर्ज़ छोटी छोटी गोलियोंके समान हैं जो चारों तरफ़से तुम पर आ रही है । तुम कदापि इनसे नहीं बच सकते । कहीं न कहीं तुम्हारे घाव ज़रूर हो जायगा । बड़े बड़े कर्ज़ गोलोंके समान है जो शोर तो बहुत करते हैं परन्तु हानि नहीं

पहुँचाते । पहले तुम्हें चाहिए कि छोटे छोटे कर्जोंको चुका दो। पीछे शांतिके साथ बड़ोंको चुकानेकी चिंता करो। यदि तुम शांति और संतोषके साथ रहोगे और कभी आमदनीसे जियादह खर्च न करोगे, तो कभी धोखा न खाओगे।"

प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि अपनी आमदनी व खर्चका ठीक ठीक हिसाब रक्खे। महीनेके अन्त में कुछ न कुछ बचाकर आगेके लिए किसी बैंकमें जमा कर दे। लेखकों और कवियोंको यह खास तौरसे याद रखना जरूरी है। यदि वे अंधाधुंध खर्च करेंगे, तो कर्जदार हो जावेंगे। फिर उनका समाज और कालको उलहना देना किसी मतलबका न होगा। जैसा करेंगे, वैसा फल पावेंगे। थेकरे (Thackeray) ने लिखा है कि "जो कोई अपनी आमदनीसे जियादह खर्च करे और उचापतका रुपया न चुकावे, उसे उसी दम जेलखानेमें भेज देना चाहिए चाहे वह कोई हो। वकील हो, चाहे लेखक और चाहे कवि।" थेकरेका यह कथन बहुतोंको बुरा मालूम हुआ होगा, परन्तु इसकी सचाईमें तनिक भी सन्देह नहीं।

लेखकोंको यह समझ कर कि हम समाज और देशका उपकार कर रहे हैं मनमाना खर्च न करना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि समाज उनका कृतज्ञ है, किंतु यह नहीं हो सकता कि वे सामाजिक अन्याय करते जावें और समाज मौन धारण किये रहे। समाजकी तथा स्वयं अपनी खातिर यह बड़ा ही जरूरी है कि आपत्ति कालके लिए कुछ जमा करते जावें। देशको और सर्व श्रेष्ठ पुरुषोंको उनकी सहायता अवश्य करनी चाहिए; किंतु सर्वोत्तम यह है कि उन्हें स्वयं अपनी सहायता करनी चाहिए।

तेरहवाँ अध्याय।

धन और दान।

(विद्वानोंके वाक्य)

१. संसारमें ऐसे बहुत से आलसी पुरुष हैं जिनको भीखका एक पैसा भी कमाईके एक रुपयेसे अच्छा लगता है।

२. यदि तुम्हारे पास धन है, परन्तु तुम उसको अच्छी तरह खर्च करना नहीं जानते, तो वह धन तुम्हारे सिर पर एक बोझा है जो मरते समय ही उतरेगा।

३. बुरी तरहसे पेदा करके दान देनेकी अपेक्षा न देना ही अच्छा है।

* * * * *

दानी और दयालु होनेके लिए कमखर्च होना जरूरी है। कम खर्च करनेसे अपनेहीको नहीं किंतु दूसरोंको भी बहुत कुछ लाभ पहुँचता है। इसकी ही बदौलत औषधालय, शिक्षालय, अनाथाश्रम और विधवाश्रम आदि सार्वजनिक संस्थाओंकी स्थापना होती है।

यदि रुपया न हो तो दूसरोंकी सहायता करना तो एक तरफ़ रहा, अपना भी निर्वाह नहीं हो सकता। ऐसी दशामें बेचारे अनाथों अपाहजों और विधवाओंका मरण ही समझना चाहिए। संसारमें कितने ही प्राणी ऐसे हैं जिन्हें एक बार भी भर पेट भोजन नहीं

मिलता । जिन्हें रहनेको मकान नहीं और पहननेको कपड़ा नहीं, ऐसे लोगोंकी सहायता करना, भूखोंको आहार दान देना, अन्धे, लूले, लँगड़े, भयभीत पुरुषोंको अभय दान देना, और अज्ञानियोंको ज्ञानदान देना मनुष्य मात्रका धर्म है । जिनके हृदयमें ज़रा भी प्रेमकी धारा बहती है, जिनको ईश्वर भक्तिमें किंचित् भी अनुराग है, वे कदापि दयालुता और परोपकारतासे मुँह नहीं मोड़ सकते । व्यक्तिकी और समाजकी अपेक्षा प्रत्येक मनुष्यका सर्वोपरि कर्तव्य है कि वह यथा-शक्ति दूसरोंकी सहायता करे । समाज अनेक व्यक्तियोंका समूह है । समाज तब तक उन्नतिशील नहीं कहला सकता, जबतक उसका पृथक् पृथक् व्यक्ति उन्नति न कर रहा हो । यदि समाजमें एक भी व्यक्ति निर्धन व असहाय है और समाजका उसकी ओर लक्ष्य नहीं है, तो समझना चाहिए समाज अभी अवनतिकी दशामें है । समाजोन्नतिके लिए समाजके प्रत्येक सदस्यको अपनी और अपने कुटम्बियों तथा अपने जाति भाइयोंकी उन्नति करना, उनके कार्योंसे सहानुभूति रखना परमावश्यक है ।

दूसरोंकी सहायता करनेके लिए यह जरूरी नहीं कि मनुष्यको धनवान् ही होना चाहिए । परोपकारके लिए धन सहायक अवश्य है किंतु आवश्यक नहीं । कितने ही व्यक्ति ऐसे हो गये हैं जिनके पास धनका नाम भी न था, परन्तु परोपकारमें वे लखपती और करोड़पतियोंसे भी बढ़ गये थे । उन्होंने पैसा पास न होते हुए भी वे वे काम किये है, जो अटूट लक्ष्मीके धनी भी न कर सके । ऐसे लोगोंकी इतिहासमें कमी नहीं । प्रत्येक युग, प्रत्येक काल और प्रत्येक देशमें ऐसे महात्माओंने जन्म लेकर अपने सदुपदेश तथा

उसे संसारका उपकार किया है। जहाँ कहीं जितने महात्मा परोपकारी पुरुष हुए, वे प्रायः सब धनहीन थे। उन्होंने धन देकर असहाय पुरुषोंकी ही सहायता नहीं की; किन्तु अपनी कोमल उपदेशभरी वाणीसे उनको वे वे मार्ग बतलाये जिनके द्वारा असंख्यात पुरुषोंने आलसको त्यागकर श्रम साहस और उद्योगकी शरण लेकर स्वावलम्बनका पाठ सीखा, तथा अपव्ययी असंयमी पुरुषोंने अपनी विषयवासनाओंको तिलांजुली देकर आत्मकल्याणके लिए सम्यक् चारित्रको धारण किया। ईसा, गौतम, महावीर आदि महापुरुष इन्हीं महात्माओंमेंसे थे। इसी प्रकार जितने बड़े बड़े तत्त्ववेत्ता, विद्वान्, विज्ञानवारिधि संसारमें हुए, वे सब धनहीन थे; परन्तु उन्होंने अपने बाहुबलसे सर्वसाधारणके हितार्थ अनेक विद्यालय, पुस्तकालयादि स्थापित करके तथा पुस्तकें निर्माण करके संसारको अपार लाभ पहुँचाया। वाट, न्यूटन, आचार्य हेमचन्द्र, कबीर, रामदास, तुकाराम, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, सर सैयद अहमद, दयानन्द सरस्वती आदि इन्हीं महापुरुषोंमेंसे थे। अब भी मिसेज एनी बेसेन्ट आदि अनेक व्यक्ति विद्यमान है जो अपनी विद्याद्वारा समस्त संसारका उपकार कर रहे हैं। कुछ समय पहले युरुपमें डाक्टर डान नामके एक पुरुष हुए है। वे पहले बड़े ही ग़रीब थे, परन्तु बादमें उनकी आमदनी कुछ बढ़ गई थी। उन्होंने अपने मनमें विचार किया कि मेरी आमदनी इस लिए नहीं बढ़ी कि मैं इसे फिज़ूलके कामोंमें खर्च कर दूँ, किंतु परमात्माने इस लिए मेरी आमदनी बढ़ाई है कि मैं इसके द्वारा-

अपने सहधर्मियों और सहजातियोंका कुछ भला करूँ। तदनुसार वे आमदनीमेंसे खर्चके लिए निकाल कर शेष सब गरीबोंके लिए खर्च कर डालते थे और खर्च भी इस तरह करते थे कि किसीको मालूम भी न होता था। उनका विचार था कि दूसरेसे कह कर किसीकी सहायता करना, सहायता नहीं किंतु केवल लोगोंमें अपनेको बड़ा कहलवाना है। जब दूसरोंकी सहायता करना हमारा धर्म है, तब यह समझमें नहीं आता कि हम क्यों झूठे नामकी खातिर लोगोंमें अपने तुच्छ कार्योंको प्रकट करके अपने किये हुए पर पानी डालें। ईश्वर उन्हीं लोगोंसे प्रसन्न होता है, जो बिना नाम व इच्छाके कुछ शुभ कार्य करते हैं। इसी अभिप्रायसे कितने ही कैदियोंको उन्होंने रुपया देकर कैदसे छुड़ाया, कितनोंहीको पढ़ा लिखा कर विद्वान् बनाया और कितने ही अनाथों विधवाओं और अपाहजोंको गुप्तदान देकर उनका पालन पोषण किया। उन्होंने एक नौकर खास इसी मतलबसे रख छोड़ा था कि जहाँ जिस किसीको जरूरत समझी जाय, तुरन्त सहायता दी जाय। एक बार उनका एक मित्र किसी कारणसे निर्धन हो गया। उनको किसी तरह यह बात मालूम हो गई। उन्होंने तुरन्त उसके पास १५०० रु० भेजे। मित्रने लेनेसे इन्कार किया, परन्तु उन्होंने आग्रहपूर्वक कहा कि "मित्रवर, मै जानता हूँ कि उदरपूर्तिके लिए तुम्हें जरूरत नहीं है; परन्तु मैं इस बातको सहन नहीं कर सकता कि मेरा एक मित्र जो पहले धनी रह चुका है और जिसने अपने धनसे अनेक असहायोंकी सहायता की है निर्धन अवस्थामें रहे। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप इसको सहर्ष स्वीकार कीजिए।"

यही हाल ईश्वरचन्द्र विद्यासागरका था । जहाँ कहीं उन्होंने सुना कि अमुक व्यक्ति ऋणके भारसे दब रहा है—वह ऋण नहीं चुका सकता—कि वे तुरन्त गुप्त रीतिसे उसकी ओरसे रुपया जमा कर दिया करते थे ।

देखा जाता है कि हम लोग रुपयेकी प्रशंसा करनेमें बहुत ही अत्युक्ति करते हैं । हम रुपयेको सर्व शक्तिमान समझते हैं । हमारा विचार है कि रुपयेकी बराबर संसारमें कोई भी चीज़ नहीं । सब कुछ रुपयेहीसे हो सकता है, इसी कारण हरएक कामके लिए रुपया जमा करते हैं । पापी दुराचारी पुरुषोंके सुधारनेके लिए भी चंदे किये जाते हैं, परंतु चंदोंसे कुछ नहीं हो सकता । बुरे लोगोंको सुधारनेके लिए रुपयेकी ज़रूरत नहीं । इसके लिए सदाचार और सच्चरित्रकी ज़रूरत है । धनके द्वारा जातिमें कदापि महान् परिवर्तन नहीं हो सकते । लोगोंको अधर्म, असंयम, अदूरदर्शितासे रोकनेके लिए और उनको उत्तम समीचीन उपायोंके द्वारा सुख सम्पादन करनेको उत्तेजित करनेके लिए शुद्ध अंतःकरण, निस्वार्थ आत्मसमर्पण और कठिन परिश्रमकी ज़रूरत है । रुपयेसे निस्सन्देह बहुत कुछ सहायता मिल सकती है, परन्तु रुपया स्वयं कर कुछ नहीं सकता । महात्मा पालने आधे रोम देशमें ईसाई धर्मका प्रचार किया था, तथापि वह स्वयं डेरे तम्बू बनाकर अपना निर्वाह करता था । उसने कभी एक पैसा भी चंदेका जमा नहीं किया । दान देनेवाले धनिकोंकी अपेक्षा सत्यपरायण, धर्मनिष्ठ और शुद्ध हृदय मनुष्योंकी अधिक आवश्यकता है।

जहाँ देखो, लोग रुपयेको सर्वोत्तम और श्रेष्ठ पदार्थ समझते हैं। कहीं कहीं तो रुपयेको साक्षात् देवी लक्ष्मी कह कर आराध्य देवके समान पूजते हैं। भारतवर्षमें तो घर घर दिवालीके दिन लक्ष्मीकी पूजा होती है। इसरायली और यूनानी लोग भी रुपयेकी पूजा करते थे। बच्चेसे लेकर बूढ़ेतक प्रत्येक व्यक्ति रुपयेका नाम सुनते ही मनमें फूला नहीं समाता। रात दिन रुपये पर ही दृष्टि रहती है। रुपया ही धन है। रुपया ही प्रतिष्ठाका कारण है। जिसके पास रुपया है वह अपनेको सब कुछ समझता है। जिसके पास नहीं, वह हरवक्त इसीकी धुनमें रहता है। जहाँ दो आदमी खड़े होते हैं और कोई सामनेसे गुजरता है, तो यही प्रश्न होता है कि यह कौन है—इसकी क्या आमदनी है? यदि तुम कहो कि यह एक सज्जन धर्मात्मा पुरुष है, तो कोई उसको देखेगा भी नहीं; जाने दो, सैकड़ों फिरा करते हैं। परन्तु यदि तुम यह कह दो कि यह बड़ा धनवान् है, इसके यहाँ लाखों और करोड़ोंकी सम्पत्ति है, तो हरएककी निगाह उसपर पड़ेगी। लोग आगे बढ़ बढ़ कर उसे देखेंगे। इंग्लैंडमें एक समय था, जब धनवान्‌को अपने सामनेसे निकलते हुए देखनेके लिए, सड़क पर सैंकड़ों आदमी इकट्ठे हो जाया करते थे। यही दशा इस देशकी अब तक है। जहाँ लोगोंने सुना कि आज अमुक राजा महाराजा निकलेंगे, घंटों पहले पैर जमा कर खड़ा होना शुरू कर देते हैं।

रुपयेका नाम सुनते ही लोगोंके मुँहमें पानी भर आता है। रुपयेके लिए झूठ बोलते चोरी करते लज्जा नहीं आती, तथा जीवनके सारे उद्देश्योंको और स्वयं जीवनको भी अर्पण करनेमें

शंका नहीं होती ।१०० पीछे ९० बल्कि इससे भी जियादह मनुष्य रुपयेकी जोड़में ऐसे बेसुध रहते हैं कि उन्हें संसारमें क्या हो रहा है, इसकी खबर भी नहीं। वे रातदिन अपनी धुनमें लगे हैं। उन्हें क्या मालूम है कि हमारे कितने भाई दाने दानेको तरस रहे हैं और कितने रुपयेके अभावसे अज्ञान अवस्थामें पड़े हुए हैं। उन्हें अपने भोगविलास प्रिय हैं। उनके जीवनका उद्देश्य (Eat, drink and be merry) अर्थात् खाना पीना मजे उड़ाना ही है। कोई ही ऐसा धनी होगा, जो धनका बोझ सिर पर उठाते हुए भी संयमी और परिश्रमी हो। नहीं तो प्रायः सब ही आलसी असंयमी और भोगविलासप्रेमी होते हैं।

एक अनुभवी विद्वान्का कथन है कि यदि धनके कारण मनुष्य मनुष्यको न भूले, तो संसारसे आधा पाप एकदम उठ जावे। यदि स्वामी सेवकसे सहानुभूति रक्खे और सेवक स्वामीसे प्यार करे, तो हमको कदापि शिकायत करनेका मौका न मिले। धनिकोंका काम है कि अपने नौकरोंकी भलाईके लिए उनसे जो कुछ हो सके उसमें कदापि ढील न डालें। अपनी बढ़ी चढ़ी आमदनीमें से कुछ भाग सर्व साधारण और विशेष कर अपने यहाँ काम करनेवालोंके हितार्थ विद्यालय, पुस्तकालय, औषधालय स्थापित करनेमें, अच्छे मकान अच्छी सड़कें बनानेमें व्यय करें। ऐसा करनेसे न केवल वे, किन्तु उनके पुत्र पौत्र भी जन्म जन्मान्तरों तक उनका आभार मानेंगे। साथमें, समाज और देशका भी कल्याण होगा।

चाहे मनुष्यके पास कितना ही अधिक रुपया हो जाय, परन्तु उसकी तृप्ति नहीं होती। वह रात दिन अधिकाधिक जोड़नेहीकी फिक्रमें रहता है। तन तोड़कर जिस तरह होता है पैसा पैसा जोड़ता है और पैसे पैसेके लिए तुच्छसे तुच्छ काम करते हुए भी नहीं शरमाता। चाहे उसके पास इतना रुपया हो जाय कि उसको वह अपने जीवनमें खर्च भी न कर सके, तो भी वह और ज़ियादह पैदा करनेके विचारको नहीं छोड़ता। जान पड़ता है कि इसका कारण शिक्षाका अभाव है। धनिकोंको उच्च शिक्षा नहीं मिलती। वे धनके नशेमें न स्वयं पढ़ते हैं और न अपनी सन्तानको पढ़ाते हैं। न उन्हें किसी पुस्तकसे शौक होता है और न किसी साहित्यसे प्रेम होता है। उनको केवल रुपयेकी लगन होती है। उसी पर वे आसक्त होते हैं। रुपया ही उनका धर्म और रुपया ही उनका आराध्य देव है।

उनके हृदयमें रुपयेका कुछ ऐसा महत्त्व होता है कि विद्या धर्म नीति आदि उनकी दृष्टिमें सब कुछ तुच्छ होते हैं। इसी कारणसे वे अपने बालकोंको शिक्षा दिलाना फ़िजूल समझते हैं। देखा जाता है कि अमीरोंकी औलाद प्रायः फ़िजूलखर्च होती है। बाप जैसे कंजूसीसे रुपया जोड़ता है, बेटा वैसी ही फ़िजूलखर्चीसे उसे उड़ा देता है। किसीने सच कहा है कि रुपयेके पर होते हैं। ऐसे हजारों उदाहरण मौजूद हैं कि पहली पीढ़ीने रुपया कमा कर जमा किया, दूसरीने फ़िजूल बर्बाद किया और तीसरी फिर ज्योंकी त्यों हो गई। दादाने कमाया, बापने उड़ाया. और बेटेने भीख और चोरी पर गुजर किया। व्यापारियोंका तो यह हाल

नित्य ही देखनेमें आता है। जो कल बड़े कोठी कारखानेवाले बन रहे थे, जिनके यहाँ लाखोंका लेन देन हो रहा था, कल शामको उनका दिवाला निकल गया और आज वे दीवालिया और कंगाल हो गये।

बुढ़ापेमें आनन्दसे जीवन बितानेके लिए यह जरूरी है कि जवानीमें समय और रुपयेका सदुपयोग किया जाय। प्रत्येक युवकका कर्तव्य है कि वह ज्ञान, विज्ञान, कला कौशलमें निपुणता प्राप्त करनेका उद्योग करे। हमारे जीवनमें कितना ही समय प्रति दिन व्यर्थ नष्ट होता है। यदि हम उसे इतिहासादिके पाठमें व्यय करें अथवा किसी नवीन अविष्कारके करनेमें लगाया करें, तो संसारका बहुत कुछ उपकार हो सकता है। रुपया पैदा करनेकी इच्छा जवानीमें ही पूर्ण हो जानी चाहिए। बुढ़ापेमें भी रुपया पैदा करते रहना और उसके लिए सर्व प्रकारके सुखोंको तिलाञ्जली दिये रहना मानों पशुवत् जीवन व्यतीत करना है। जिस तरह गधे बैल वगैरह पशु मरते समय तक लादे जाते हैं, उसी तरह उस मनुष्यकी दशा है जो मरते मरते भी रुपयेकी लालसा नहीं छोड़ता। जवानी कड़ा परिश्रम करके रुपया कमानेके लिए है, परन्तु बुढ़ापा शान्तिके साथ एकांतमें किसी ऐसे विषय पर विचार करनेके लिए है जिससे संसारका उपकार हो और आत्माका कल्याण हो। यदि कोई अमीर आदमी बुढ़ापेमें भी रुपयेकी लालसा नहीं छोड़ता, तो हम कह सकते हैं कि उसको कदापि सुख मिल नहीं सकता। उसका जीवन दुःखमय जीवन हो जाता

है। वह रात दिन चक्कीकी तरह पिसता रहता है। सम्भव है कि उसका धन प्रतिदिन बढ़ता जाय, परन्तु ऐसे धनसे क्या लाभ? वह उस धनको न तो खा सकता है और न खर्च कर सकता है। उसका धन लाभदायक होनेके स्थानमें उल्टा उसके लिए चिन्ता और आपत्तिका कारण हो जाता है। सचमुच ही वह मनुष्य लालचका गुलाम हो जाता है। लालचके वश नीचसे नीच कार्य करता हुआ भी नहीं लजाता। सब कोई उसे घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और वह स्वयं भी अपनी नीच अवस्थाका अनुभव करता है।

कहते हैं कि एक अमीर आदमीने मरनेसे कुछ दिन पहले बैंकसे कुछ रुपये और अशर्फ़ियाँ मँगाईं। जब वह मरने लगा, तब उसने अपने हाथ उन अशर्फ़ियोंसे भर लिये। उसके प्राण निकल रहे थे, परन्तु उसके हाथोंसे रुपये न छूटते थे। वह बे-होशीकी हालतमें भी रुपयोंको गिनता था और एक एकको चूमता था। वह मर गया, परन्तु रुपये उसके हाथमें ही रहे! एक दूसरे महाशय मरते मरते यही कहते रहे कि "मेरा रुपया मेरे साथ जायगा। मैं अपने रुपयेका अधिकारी हूँ। मुझसे मेरे रुपयेके विषयमें कोई कुछ नहीं पूँछ सकता।"

महमूद गजनवीके विषयमें प्रसिद्ध है कि उसने तमाम जीवन रुपया पैदा करनेमें ही व्यतीत किया। मरते समय उसे यह खयाल हुआ कि यह रुपया जिसे मैंने इतनी मार धाड़ और जुल्मसे पैदा किया, जिसके लिए मैंने अपने धर्म कर्म सबको नष्ट

कर दिया, शोक, यहीं छोड़कर जाता हूँ। हाय! मुझे क्या मालूम था कि एक दिन मेरा इससे वियोग हो जायगा। मैं समझता था कि मैं सदा ही जीवित रहूँगा और यह मेरा धन भी सदा मेरे साथ रहेगा। इसी कारण 'येन केन प्रकारेण' जिस तरह हुआ रुपया पैदा किया, परन्तु अब यह ज्ञात हुआ कि यह धन यह सम्पदा विनश्वर है और जीवनका उद्देश्य रुपया पैदा करना नहीं है।

धन उपयोगी अवश्य है परन्तु यह खयाल कि धन प्रतिष्ठाका कारण है, मिथ्या है। मूर्ख और गँवार लोग ही धनकी प्रशंसा किया करते हैं। विद्वान् विद्याके सामने धनको तुच्छ समझते हैं। कितने ही लखपती धनाढ्य ऐसे हैं जिन्हें कोई जानता नहीं और भूल कर भी पूछता नहीं। संसारमें प्रतिष्ठा उसीकी होती है, जिससे संसारका कुछ भला होता हो। जिनसे कुछ भला नहीं होता, चाहे वे कोट्याधीश ही क्यों न हों, न होनेके बराबर हैं। इस विषयमें इतिहास हमारे कथनका साक्षी है। कहीं भी आजतक किसी निरे धनवान्का कोई स्मारक चिन्ह नहीं बनाया गया। विद्वानोंके, परोपकारी राजाओंके, देशहितैषियों और जाति-नेताओंके सर्वत्र ही चिन्ह चरित्र और स्मारक मिलते हैं, परन्तु निरे धनवान्का कहीं कोई चिन्ह ढूँढे भी न मिलेगा। किसीने सच कहा है कि यश कहीं बाजारमें नहीं बिकता। यह केवल उत्तम कार्योंके सम्पादनसे प्राप्त होता है।

धन और सुखका एक दूसरेसे कोई सम्बन्ध नहीं। कभी कभी तो धन दुःख और आपत्तिका कारण होता है और सुख निर्धनता-में ही देखनेमें आता है। महापुरुषोंके जीवनचरित पढ़नेसे मालूम

होता है कि सबसे जियादह सुख उनको उस समय मिला, जब वे निर्धनतासे धीरता और वीरताके साथ युद्ध कर रहे थे। उसी समय उन्होंने दूसरोंके हितार्थ अपने स्वार्थका त्याग किया, भावीमें स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए मितव्ययिताका अभ्यास किया, अपने मन और हृदयको विषयवासनाओंसे रहित पवित्र किया और ज्ञान विज्ञानके द्वारा अपना, तथा देशका उपकार किया। एक विद्वान् लिखते हैं, कि "मैं अपनी युवावस्थाको कभी नहीं भूल सकता। उस समयका स्मरण होते ही मैं अंगमें फूला नहीं समाता, जब मेरे पास एक पैसा भी न था और मैं एक दानशालामें रहकर पढ़ा करता था।"

धनी और निर्धन दोनोंकी दशा एक सी नहीं है। दोनोंमें बड़ा अंतर है। धनीको धनी होनेके कारण कितना ही रुपया निर्धनसे जियादह खर्च करना पड़ता है। हर एककी निगाह उस पर रहती है—हर कोई उसे ठगना चाहता है। उसे स्वयं अपनी स्थिति रखनेके लिए अधिक खर्च करना होता है; परन्तु उसे अपने धनकी रक्षाकी सदा चिन्ता रहती है। चोर वगैरहका सदा भय रहता है। इसी चिंतामें उसे रातको नींद नहीं आती; रात दिन जागते ही बीतते हैं। उसका मन सदा इसी झंझटमें परेशान रहता है।

देखा जाता है कि प्रायः धनिक पुरुष तरह तरहके रोगोंमें ग्रसित रहते हैं। मोटापा और अजीर्ण तो कभी उनका पीछा ही नहीं छोड़ते। वे रात दिन गद्दे तकिये लगाये पड़े रहते है, देरमें पचनेवाले बढ़िया बढ़िया खाने खाते हैं और श्रम कुछ भी नहीं करते। इसी कारण सदा पेटकी शिकायत किया करते हैं। श्रम और पाचन-

शक्तिका गहरा सम्बन्ध है। श्रमसे पत्थर भी हज़म हो जाता है; परन्तु निठल्ले एक जगह पड़े रहनेसे और शरीरसे कुछ भी काम न लेनेसे हल्कीसे हल्की चीज़ भी हज़म नहीं होती। एक विद्वान्का कथन है कि "प्रकृतिके नियमोंमें ज़रा भी रिआयत नहीं होती। उसका व्यवहार सबके साथ एकसा होता है। यदि धनी पुरुषको धनद्वारा सुख मिलता है, तो अजीर्णके कारण कष्ट भी उसे ही सहना पड़ता है और यदि निर्धन पुरुष निर्धनताके कारण कष्ट सहता है, तो हाज़मे और निरोगताके कारण आराम भी उसे ही मिलता है। संसारमें ऐसा एक भी पुरुष नहीं जिसको सब तरहसे सुख ही सुख हो। न कोई ऐसा ही पुरुष है, जिसे दुख ही दुख हो।"

बहुतसे आदमी दूसरेके धनको देखकर जला करते हैं, पर यह उनकी नीचता है। धन कोई आसान चीज़ नहीं। इसका प्राप्त करना कठिन काम है। इसके लिए अनेक दुःख और कष्ट उठाने पड़ते हैं। जिन्होंने धन कमाया है, उन्हें बड़ी बड़ी तकलीफें उठानी पड़ी है। पग पग पर आपत्तियोंका सामना करना पड़ा है। अनेक बार इन्द्रियोंको दमन करना और इच्छाओंको वशमें रखना पड़ा है। मोटा खाना, मोटा पहनना, और पैदल चलना पड़ा है। ऐसी ऐसी अनेक आपत्तियोंको सह कर उन्होंने धन कमाया है। परन्तु देखा गया है कि उन्होंने तो इतने कष्ट सहकर कमाया, पर उनकी औलादने इने गिने दिनोंमें ही सबका सब मटियामेट कर दिया।

अनेक व्यक्ति निर्धनताको बहुत बुरा समझते हैं; परंतु यह भी उनकी भूल है। निर्धन होना पाप नहीं। निर्धनतामें कोई निंदा या अपमान भी नहीं। बल्कि बहुतोंने निर्धनताकी प्रशंसा तक की है।

जो मनुष्य कोई पापकार्य नहीं करता और रुपयेके लोभके वशमें आकर आत्मसम्मानको नष्ट नहीं करता, वह निर्धन होते हुए भी महान् प्रतिष्ठित है । वह पुरुष निर्धन ही नहीं कहा जाता, जो अपना खर्च चलाकर कुछ बचा सकता है और हरएक चीज़को नकद दामोंसे खरीदता है । वह उस आलसी धनी महाशयसे जियादह सुखी है, जो सदा मोदी और दर्जीका कर्ज़दार रहता है । एक विद्वान्का कथन है कि " वह आदमी गरीब नहीं जिसके पास कुछ नहीं; किन्तु वह आदमी गरीब है जिसके पास कुछ काम नहीं, या जो, कुछ कर नहीं सकता । जो आदमी काम करनेके योग्य है और काम करता है, वह उससे कहीं अच्छा है जिसके पास हजारों रुपये हैं परन्तु कुछ काम करनेको नहीं है । "

निर्धनतासे मनुष्यकी बुद्धि बढ़ती है । जितने बड़े बड़े पुरुष हुए, उनमें बहुतसे शुरूमें निर्धन थे । निर्धनतासे आचरण सुधरते हैं और चरित्र गठित होता है । साहसी आदमियोंको कठिन काम ही प्रिय होते हैं । इतिहास इस बातका साक्षी है कि जितने परोपकारी दयालु और सत्यवक्ता पुरुषोत्तम हुए हैं, वे प्रायः निर्धन थे । एक धर्मोपदेशकने एक बार कहा था कि " ईश्वरने निर्धनताको पैदा किया है, परंतु दीनताको पैदा नहीं किया । इन दोनोंमें बड़ा अंतर है । निर्धनता आदरणीय और दीनता घृणित है । निधनतासे मान-हानि नहीं होती, किन्तु दीनतासे मानहानि होती है । "

संसारमें गरीब ही सबसे जियादह सुखी हैं । धनवान् रातदिन चिन्ताओंमें फँसा रहता है । गरीबको अपनी थोड़ीसी आमदनी पर संतोष होता है और उसीके अनुसार वह खर्च करता है; परन्तु

अमीरको कभी संतोष ही नहीं होता। वह धनका अनुचर बना रहता है। धनके कारण वह अभिमानके शिखर पर चढ़ा रहता है और धनके लिए झूठ भी बोल देता है। एक विद्वान्का कथन है कि " संतोषी आदमीका एक रुपया असंतोषीके हजारसे कहीं अच्छा है। "

अब प्रश्न यह है कि दानका धनसे क्या सम्बन्ध है और दानमें धन कहाँतक उपयोगी हो सकता है? आज कल जिधर देखो उधर दानकी ही चर्चा है। हर कोई अपने उपदेशमें किसी न किसी दानशालाके लिए ही अपील किया करता है। जहाँ देखो वहाँ भिखारियोंका झुंड दीख पड़ता है। यद्यपि प्रतिदिन हजारों लाखोंके चन्दे होते हैं, तथापि भिखारियोंकी संख्यामें कोई कमी नजर नहीं आती—दिन दिन बढ़ती ही होती जाती है। अबसे दश वर्ष पहले जितने भिखारी थे अब उनसे दुगने तिगुने हो गये हैं। इसका मूल कारण यदि विचार कर देखा जाय तो यह मालूम होगा कि हमारे देशमें जो लाखों रुपया सदावर्त आदि कामोंमें भूखे नंगोंको दिया जाता है, वह ही मूर्खोंकी संख्या बढ़ानेवाला है। जबतक सड़क पर फिरनेवालों और पैसा माँगनेवालोंको पैसे मिलते रहेंगे और सदावर्तमें बेपूछ भोजन मिलता रहेगा, इनकी सख्या कदापि कम न होगी। इन पर जो रुपया खर्च किया जाता है, वह कदापि दान नहीं हो सकता—वह कुदान है। इससे पुण्य नहीं होता, उल्टा पाप बढ़ता है। लोगोंको श्रम संयम और साहससे घृणा होती है और आलस और असंयमसे प्रेम होता जाता है।

इस देशमें भीख माँगना एक पेशा हो गया है । यहाँ भिख-मंगोंकी संख्या ५२ लाखसे भी अधिक है । आठ आठ नौ नौ वर्षके बच्चे भी दूसरोंकी देखादेखी भीख माँगने लगते हैं । यदि ये लोग कुछ काम करते, तो इनसे संसारको कितना लाभ पहुँचता ? परन्तु जब इनको बिना मेहनत किये और बिना पढ़े लिखे ही रुपया मिल जाता है, तब फिर क्या ज़रूरत है कि मेहनत करें । इनकी देखा-देखी बहुतसे मेहनती लोग भी मेहनतको छोड़ देते हैं और इन्हींका पेशा करने लगते हैं । मेहनती दिनभरमें कहीं दो चार आने ही कमा पाता है, परन्तु यदि इनका दाव लग जाय तो ये कभी कभी रुपया रुपया रोज़ भी कमा लेते हैं ।

ये भिखमंगे दो तरहके होते हैं । कुछ तो ऐसे होते हैं जो अपने रुपयेको जोड़ते जाते हैं, कौड़ी भी खर्च नहीं करते । यहाँ तक कि कई कई दिनके फाके तक कर लेते हैं, पर पैसा खर्च नहीं करते । इनको रुपयेसे एक प्रकारका तीव्र मोह होता है । ऐसे कितने ही भिखारियोंके पास मरने पर बड़ी बड़ी रकमें निकली हैं । कुछ भिखारी ऐसे होते हैं कि वे दिनभरमें जो कुछ माँग कर कमाते हैं, रातको सबका सब फ़िज़ूल उड़ा देते हैं । खोज करनेवालोंने पता लगाया है कि ये लोग शराबी और विषयी होते हैं । ये भीखके पैसेसे ऐसे ऐसे काम करते हैं जिनको कहते हुए लज्जा आती है । दुनियाभरके अवगुण और विषय इनके अंदर मौजूद हैं । दिनमें तो ये भेड़की भोली भाली ग़रीब शकल बनाये रहते हैं, परन्तु रातको भेड़ियेका रूप धारण कर लेते हैं । दिनमें फटे पुराने चीथड़े लपेटे रहते हैं, परन्तु रातको नवाब बन जाते हैं । ऐसे ही लोगों-

के कारण पाप और दुराचार दिन दिन बढ़ते हैं। हिंसा झूठ चोरी कुशीलके ये ही नेता और उत्तेजक होते हैं। इन बहुरूपियोंने संसारको खूब ही ठग रक्खा है।

यदि विचार कर देखा जाय, तो इनके कारण हम ही लोग हैं। यदि हम इनको पैसा न दें, तो ये कुछ नहीं कर सकते। हमारा यह खयाल रहता है कि ये भूखे हैं। इनके देनेमें बड़ा पुण्य होगा। आहार दानकी बराबर कोई दान नहीं। इसी विचारसे हम इनको कुछ न कुछ दिये बिना नहीं रहते। परन्तु यह हमारी भूल है। इनके देनेमें कोई पुण्य नहीं होता, उल्टा पाप होता है। इनको देना दान नहीं, किंतु कुदान है। ये दानके पात्र नहीं, किन्तु कुपात्र हैं। कुपात्रोंको देनेसे कई हानियाँ होती हैं। एक तो फिजूलखर्ची, दूसरे लोगोंको कामसे हटाकर आलसी बनाना, तीसरे पाप कार्य और दुराचारका प्रचार। शास्त्रकारोंने जो दानका उपदेश दिया है, उसका यह अभिप्राय है कि आहारदान उन लोगोंको दिया जाय जो वास्तवमें भूखे हैं। अर्थात् जो ऐसे रोगी अपाहिज और निर्बल हैं कि जिनसे कुछ काम नहीं हो सकता। ऐसे आदमी बहुत ही कम निकलेंगे और उनको भरपेट भोजन करानेमें अथवा उनकी औषध आदिका प्रबन्ध करनेमें बहुत ही कम खर्च होगा। उनके लिए स्थान स्थान पर अस्पताल और औषधालय बने हुए हैं, जहाँ उनको खाना कपड़ा दिया जाता है और बिना कुछ लिए उनका इलाज किया जाता है।

इसके सिवाय आजकल सबसे उत्तम दान विद्यादान है। विद्यासे मनुष्यको अपने कर्तव्य और अधिकार मालूम होते हैं। यथा

हेय है और क्या उपादेय है, इसका ज्ञान विद्यासे ही होता है। विद्यासे ही मनुष्य सभ्य और प्रतिष्ठित कहलाता है और विद्यासे ही वह अपने आत्मगौरवको सुरक्षित रख सकता है। ऐसी विद्याका प्रकाश करना और जिस तरह हो सके उसका सर्व साधारणमें प्रचार करना धनिकोंका कर्तव्य है। विद्यावृद्धिके लिए स्कूल पाठशालायें खोलना, वाचनालय और पुस्तकालय स्थापित करना, उत्तमोत्तम पुस्तकों मासिकपत्रों और समाचारपत्रोंका निकालना सर्वोत्तम दान है। यदि प्रत्येक मनुष्य एक बार एक पैसा भी देवे, तो ३० करोड़ भारतवासियोंसे ९० लाख रुपया एकदम एक मिनिटमें जमा हो जावें। किसी भिखारीको शराब और भगके लिए पैसा देनेके स्थानमें यदि विद्याके लिए पैसा दिया जाय, तो कितना उपकार हो सकता है ?

आज कल चारों ओर अज्ञानान्धकार फैल रहा है। इसके कारण इस देशमें अनेक हानिकारिणी प्रथाओंने अधिकार जमा रक्खा है। इस अज्ञानको दूर करनेके लिए प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि अपनी आमदनीमेंसे कुछ भाग दानके नामसे निकालकर विद्याप्रचारमें व्यय करे। धनिकोंको इस ओर विशेष लक्ष्य देना चाहिए। उन्हें अपनी लक्ष्मीको इस कार्यमें लगाकर सदाके लिए यशका भागी बनना उचित है। इसके समान संसारमें कोई पुण्यकार्य नहीं। इतना यश और कीर्ति भी किसी दूसरे कार्यमें नहीं। जिन लोगोंने अपने रुपयेको ऐसे कार्योंमें लगाया, चाहे आज उनका शरीर इस संसारमें विद्यमान न हो; परन्तु उनका नाम इतिहासमें अजर अमर है। बम्बईके स्वर्गवासी सेठ रायचन्द्र प्रेमचन्द्रका नाम सर्वत्र विख्यात

है। जबतक कलकत्ता विश्वविद्यालयका अस्तित्व है, तबतक उनका नाम सूर्यके समान प्रकाशित रहेगा। जबतक मोहमडन कालेज अलीगढ़ और मुसलमान जातिकी सत्ता है, तबतक सर सैयद अहमदका नाम इतिहासके पृष्ठोंमें सुनहरे अक्षरोंमें लिखा रहेगा। जगत्प्रसिद्ध धनी कारनेगीका नाम क्यों इतना मशहूर है? इसी कारणसे कि उसने अपनी अतुल्य लक्ष्मीको जहाँ तहाँ विद्या-प्रचारमें व्यय किया। इसी प्रकार जिन्होंने अपने रुपयेको विद्याके कार्योंमें लगाया, वे महान् पुण्य और यशके भागी हुए।

भारतवर्षमें विद्याकी बड़ी जरूरत है। स्वयं हमारे महाराजा-धिराज राजराजेश्वर जार्ज पंचमने भी यही समझकर शिक्षार्थ अतुल्य दान दिया है। अब धनिकोंका काम है कि जैसे बने तैसे वे भी शिक्षार्थ दान देकर महाराजका अनुकरण करें। असमर्थ दीन छात्रोंको छात्र-वृत्तियाँ देकर पढ़ाया जाय, उनके हितार्थ छात्रालय, पुस्तकालय, औषधालय, और व्यायामशालायें स्थापित की जावें। सर्व साधा-रणका कर्तव्य है कि ऐसे भिखारियोंको जो अपने हाथसे कमा सकते हैं, एक पैसा भी न दें, किन्तु उनको यही उपदेश दें कि मेहनत करके कमाओ। इसी कारण सरकार दुर्भिक्षादिके अवसर पर लोगोंके लिए कोई काम खोल दिया करती है। यदि इन लोगोंको काममें न लगाया जाय, तो इन सबकी भिक्षावृत्ति हो जाय। जो लोग वास्तवमें अपाहज हैं और अपने हाथसे कमा-नेको असमर्थ हैं, उनके लिए ऐसे अपाहजखाने बनाये जावें जहाँ उनको भरपेट भोजन मिले। सदाव्रतमें हरकोई आकर

ले जाता है, परन्तु अपाहजखानेमें केवल उन्हींको मिल सकेगा जो वास्तवमें पात्र है। अनाथों, विधवाओंके लिए अनाथाश्रम और विधवाश्रम, खोलने चाहिए। जहाँ पर उन्हें सर्व प्रकारकी शिक्षा दी जाय। पश्चिमी देशोंमें भिखारी लोग सड़कों पर नहीं माँगने पाते। वहाँ अपाहजखाने और अनाथालय बने हुए है। वहाँके अनाथालयोंके लड़के बड़े बड़े विद्वान् होकर निकलते हैं। इस देशमें भी ऐसे ही कार्योंमें दान देनेकी ज़रूरत है।

चौदहवाँ अध्याय ।

निरोग घर ।

(विद्वानोंके वाक्य)

१. सभ्यताका सर्वोत्तम साक्षी वह घर है, जिसमें हम रहते हैं ।
२ सफाई तन्दुरुस्तीकी जड है अर्थात् स्वच्छता स्वास्थ्यका मूल है ।
३ दुर्गंध और मैलेपनसे सद्गुण कोसों दूर भागते हैं ।

*　　*　　*　　*　　*

स्वास्थ्यको लोग धन कहा करते हैं । उर्दूमें भी कहावत है कि " तन्दुरुस्ती हजार न्यामत है । " वास्तवमें स्वास्थ्यके बिना सारी सम्पत्ति व्यर्थ है । हरएक आदमी—चाहे वह मस्तकसे काम करता हो चाहे हाथ पाँवसे—स्वास्थ्यको एक बहुमूल्य पदार्थ समझता है । निस्सन्देह स्वास्थ्यके बिना जीवन निष्फल और भारस्वरूप है । प्रकृतिने हमारे शरीरको कुछ इस तरहसे बनाया है कि यदि किसी अंग या उपांगमें जरा भी विकार हो, तो हमको कभी सुख नहीं मिल सकता । सुख ही जीवनका मूल अभीष्ट है ।

सुख उसी समय मिल सकता है, जब हमारी सारी इन्द्रियाँ और सारे अंग निरोग अवस्थामें हों । यद्यपि केवल शारीरिक सुख ही जीवनका उद्देश्य नहीं है, किन्तु यह बात अवश्य है कि शारी

रिक सुख अर्थात् स्वास्थ्य पर ही जीवन निर्भर है । जितना जिसका स्वास्थ्य अच्छा है उतना ही ज़ियादा वह जीता है और जितना जिसका स्वास्थ्य ख़राब है उतना ही शीघ्र वह मौतका ग्रास बन जाता है । दूसरे शब्दोंमें, मनुष्योंकी शारीरिक सुखकी बढ़तीसे आयु बढ़ती है और घटतीसे आयु घटती है ।

सुख स्वास्थ्यका सूचक है और दुःख मौतका हल्कारा है । परन्तु याद रहे कि दुःख बिल्कुल बुरी चीज़ नहीं है । यह एक प्रकारसे हमारा बड़ा हितैषी है । यदि हमको कोई शारीक दुःख अथवा कष्ट होता है, तो हम तुरन्त जान जाते है कि हमने अवश्य किसी नियम-का उलंघन किया है और किसी प्राकृतिक सिद्धान्तकी अवज्ञा की है । रोग क्या है ? एक प्रकारसे हमारा निरीक्षक है, जो सदा हमारी अवस्थाकी जाँच करता रहता है । जहाँ हमने कोई गड़बड़ की, ज़रा भी असावधानी की; तुरन्त आकर हमें घेर लेता है और ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाकर कहता है कि "यदि तुम सुख चाहते हो, तो अपनी अवस्थाको ठीक करो । प्रकृति माताकी शरणमें आओ, उसकी आज्ञाका और शिक्षाओंका पालन करो ।" इससे मालूम होता है कि दुःख और रोग भी एक अपेक्षासे स्वास्थ्यके लिए उपकारी और हितकर हैं ।

अत एव शारीरिक सुख अथवा स्वास्थ्यके लिए यह ज़रूरी है कि प्रकृतिके नियमोंका पूरी तरहसे पालन किया जाय । अब प्रश्न यह है कि वे नियम कौनसे है ? उनके जाननेके लिए प्रकृतिने हमको विवेक और बुद्धि दी है । यदि हम इनको काममें न लावें और अंधा-धुंधीसे रहें, तो परिणाम यही होगा कि हमको बीमार पड़ते देर न

लगेगी। प्रकृति हमारी जरासी भी असावधानीको सहन नहीं कर सकती। यदि राज्यका कोई अपराध हमसे हो जाय, तो शायद हमको क्षमा भी मिल जाय; परन्तु प्रकृतिके दर्बारमें माफ़ीका नाम नहीं। लाख चिल्लाओ, कोई सुननेवाला नहीं। कोई भी अपराध बिना दंडके खाली नहीं जाता। कुसूर करते देर लगती है, परन्तु सज़ा मिलते देर नहीं लगती। पाठकोंको यह पढ़कर आश्चर्य होगा, परन्तु इसमें बाल बराबर भी झूठ नहीं। प्रतिदिन हम इसे अपनी आँखोंसे देखते हैं। जहाँ किसी आलसी—निरुद्योगी पुरुषने ज़रा अधिक खा लिया कि कब्ज़ और मन्दाग्निरोग उसे तत्काल दबा लेते हैं। कोई चिकनी चीज़ खाकर पानी पीलो, तुरन्त खाँसी हो जायगी। एक रात भी ओसमें सो जाओ, तमाम बदनमें पीड़ा होने लगेगी। इसी तरह और अनेक रोग हो जाते हैं और इनकी बदौलत एक दिन मरना पड़ता है।

जिस तरह स्वास्थ्यसम्बन्धी नियमोंका पालन न करनेसे हमारे शरीरको दुःख पहुँचता है, उसी तरह हमारी सोसाइटी या समाजको भी हानि पहुँचती है। प्लेग, हैज़ा वगैरह महामारियाँ प्रायः उन्हीं पिचपिच मोहल्लों और गलियोंमें शुरू होती हैं, जो गन्दी और घिनावनी होती हैं। जहाँ न कभी धूप पहुँच पाती है और न साफ़ हवा। ऐसा बहुत कम सुननेमें आया होगा कि अमुक शहरमें प्लेग पहले उस मोहल्लेमें हुई, जहाँ अँगरेज़ लोग रहा करते हैं। जहाँ कहीं देखा और सुना होगा पहले उन्हीं मोहल्लोंमें हुई, जहाँ कसाई, चमार वगैरह गन्दा काम करनेवाली जातियाँ रहती हैं, अथवा जो इतने तंग और अँधेरे हैं कि वहाँ धूप और हवाका प्रवेश भी नहीं होने पाता। इन बीमारियोंसे जितने आदमी मरते

हैं, उन सबके कारण हम ही लोग हैं। यदि हम सफ़ाईका खयाल रक्खें, तो इतने आदमी कभी नहीं मर सकते।

स्वास्थ्यके लिए सबसे आवश्यक चीज़ हवा है। हवाके बिना एक मिनिट भी जिन्दा रहना असम्भव है। खाना और पानी चाहे न मिले, परन्तु हवाकी हर समय ज़रूरत रहती है। जहाँ ज़ियादह आदमी रहते हैं, वहाँ यदि ताजी हवा हरघड़ी आती जाती न रहे, तो वहाँकी हवा विषैली हो जाती है। यदि हवाके आनेके लिए काफ़ी खिड़कियाँ और दरीचे नहीं हैं, तो वहाँकी हवा कारबोनिक हो जाती है। जो हवा शरीरमेंसे एकबार निकलती है, यदि वही फेंफड़ोंमें से होकर दोबारा चली जाय, तो विषरूप हो जाती है। इस कारण साफ़ हवाकी बड़ी भारी आवश्यकता है। कितने ही आदमी साफ़ हवाके न मिलनेसे घबड़ाकर मर जाते हैं। कलकत्तेकी 'कालकोठरी' का हाल आप लोगोंने इतिहासमें पढ़ा ही होगा। वहाँके नवाब सिराजुद्दौलाने एक रातको १४९ अँगरेजोंको एक छोटीसी कोठरीमें ठूँस दिया था। प्रातःकाल जब कोठरीका दर्वाजा खोला गया, तब केवल २३ आदमी जिन्दा निकले। वे भी अधमरे हो रहे थे। बाकी सब हवा न मिलनेके कारण घुटकर मर गये। ऐसे और भी बहुत उदाहरण मिलेंगे। इनकी सत्यतामें कुछ भी सन्देह नहीं। एक चूहेको एक बोतलमें बन्द कर दो, ऊपरसे ऐसी डाट लगा दो कि बोतलमें बिल्कुल हवा न जाने पाय। थोड़ी देरके बाद चूहा मर जायगा।

अत एव साफ़ हवाका खयाल रखना प्रत्येक मनुष्यका सबसे पहला

नियम और सबसे पहला कर्त्तव्य है। साफ़ हवा उसी समय मिल सकती है जब हमारे रहने, सोने, खाने, पीनेके मकान बड़े और खुले हुए हों। हरएक आदमीके लिए काफ़ी जगह हो और प्रकाशके लिए काफ़ी द्वार हों। खानेमें चाहे हम गेहूँ खावें चाहे चने, परन्तु रहनेके लिए वही मकान चाहिए जो साफ़ और सुथरा हो। चाहे हमें कितना ही किराया देना पड़े, पर मकान स्वास्थ्यप्रद हो। अच्छे घरसे ही हम मनुष्य कहला सकते हैं। सच पूछा जाय तो घर ही संसारमें सबसे अच्छा स्कूल है। यहीं पर बच्चा पैदा होता है और यहीं पर पलकर बड़ा होता है। यहाँकी प्रत्येक वस्तुका उस पर प्रभाव पड़ता है। यहाँके जलवायुसे उसका जीवन बनता है। यहाँकी सभ्यता और यहाँके आचरणसे ही उसका चरित्र गठित होता है। यदि यहाँकी हवा खराब है, मकान छोटा और गन्दा है, पड़ोसमें नीच जातिके मनुष्य रहते हैं, तो यहाँ पर जिस बच्चेका पालन होगा, वह कदापि स्वच्छ और निरोगी नहीं रह सकता। उसको मैले और गन्देमें रहनेका अभ्यास पड़ जायगा। वह रातदिन कारबोनिक हवाका ही सेवन करता रहेगा। परन्तु जैसा हम ऊपर कह आये हैं, दण्डसे वह कभी नहीं बच सकता। वह जबतक जीता रहेगा, किसी न किसी रोगसे ग्रसित रहेगा। परन्तु इसके विपरीत जो बच्चा साफ़ सुथरे मकानमें पैदा होगा, जिसका स्वच्छ और निरोगी मनुष्योंसे सम्बन्ध होगा, सभ्य और शिक्षित मातासे पालन होगा, वह कभी गन्दा और मैला न रहेगा। वह सदा शुद्ध जल वायुके कारण स्वस्थ और निरोगी रहेगा। कहनेका तात्पर्य यह है कि अच्छे घरमें रहनेसे स्वास्थ्य अच्छा रहता है, आचरण सुधरते हैं और आयु

दीर्घ होती है। परन्तु बुरे घरमें रहनेसे रोग सताते हैं, आचरण बिगड़ता है और आयु घटती है।

बच्चा घरमें माताकी गोदमें जो कुछ सीख लेता है, वह उम्र भर कभी नहीं भूलता। जितनी आदतें होती हैं, वे सब उसी वक्त पैदा हो जाती हैं। हमको यह कहनेमें ज़रा भी संकोच नहीं होता है कि बच्चेमें जो बुरी आदतें बालकपनमें हो जाती हैं, उनको छुड़ानेका उद्योग करना बिल्कुल व्यर्थ जाता है। बच्चोंके चरित्रका सुधारना स्कूलमास्टरोंके हाथ नहीं। उनका एक प्रकारसे इस विषयमें कोई सम्बन्ध ही नहीं। बालकोंके चरित्रगठनका काम केवल उनके माता, पिता और उनके पास रहनेवाले भाई बहनों तथा अड़ोसियों पड़ोसियोंका है। स्कूलमें बच्चेको चाहे कितनी ही उच्चशिक्षा दी जाय, उच्चसे उच्च कक्षा क्यों न पास करा दी जाय; परन्तु यदि वह स्कूलसे पढ़कर शामको गन्दे, मैले, तंग और अन्धेरे घरमें जाता है, तो उसकी सारी शिक्षा निरर्थक है। स्वास्थ्य और आचरण घरकी शिक्षा पर निर्भर हैं। यदि शुद्ध जलवायुके अभावसे अथवा असभ्यता और दुराचरणके कारण स्वास्थ्य और आचरण बिगड़ जाय, तो स्कूलमें प्राप्त की हुई शिक्षा भी लाभके स्थानमें हानिकर ही सिद्ध होगी। अत एव घरको केवल खाने और सोनेहीकी जगह न समझना चाहिए, किन्तु वह स्थान समझना चाहिए जहाँ आत्मगौरवकी रक्षा होती है और सांसारिक सुखोंकी प्राप्ति होती है। घरमें सुख उसी समय मिल सकता है और कुटुम्बियों और विशेषकर बालकोंपर उसी समय अच्छा प्रभाव पड़ता है जब वहाँ पर स्वच्छता और बुद्धिमत्ताका खयाल रक्खा जाता हो। इनका खयाल

तब ही रक्खा जा सकता है, जब घरकी प्रबन्धिका गृहिणी स्वयं स्वच्छ, नियमबद्ध, परिश्रम करनेवाली और शिक्षिता हो। घरका सुख दुःख केवल गृहिणी पर निर्भर है। यदि गृहिणी स्वच्छ है, तो घर अवश्य स्वच्छ रहेगा। परन्तु इसके विपरीत यदि गृहिणी मूर्खा और गन्दी है, तो लाख यत्न करने पर भी घर स्वच्छ नहीं रह सकता। घर पूर्ण रूपसे स्त्रीके अधिकारमें है। पुरुष २४ घंटे घरमें नहीं रहते, परन्तु स्त्री आठों पहर वहीं रहती है। वह चाहे तो बिना किसी कष्टके बड़ी आसानीसे प्रत्येक वस्तुको साफ़ और सुथरी रख सकती है।

जबतक पृथक् पृथक् घर उन्नति न करें, तबतक कोई जाति उन्नति नहीं कर सकती और घरकी उन्नति स्त्रीके हाथमें है। अतएव स्त्रियोंके लिए यह जानना बड़ा जरूरी है कि किस तरह अपने घर अच्छे रक्खे जा सकते हैं। यह जाननेके लिए शिक्षाकी ज़रूरत है। उनको शुरूसे ही स्वास्थ्यरक्षा और गृहप्रबन्धकी शिक्षा दिलाना अवश्यक है, जिससे वे बड़ी होकर योग्य रीतिसे अपने घरका प्रबन्ध कर सकें। परन्तु खेद है कि भारतवर्षमें इसकी ओर लोगोंका लक्ष्य ही नहीं है। यहाँके लोग कुछ दिन पहले तो स्त्री-शिक्षाके कट्टरविरोधी थे। अब कुछ दिनोंसे विरोध तो प्रायः जाता रहा, परन्तु प्रचारके लिए यथेष्ट उद्योग नहीं होता। कहनेके लिए अनेक कन्या पाठशालायें हैं, परन्तु वास्तविक शिक्षा शायद ही कहीं दी जाती हो। जो अवस्था शिक्षाके लिए योग्य होती है, उस अवस्थामें यहाँ विवाह कर दिया जाता है। विवाह होते ही शिक्षा-का द्वार एकदम बन्द कर दिया जाता है। उस समय तक जो

दो चार पुस्तकें पढ़ली जाती हैं, उन्हीं पर सन्तोष कर लिया जाता है। यही कारण है कि भारतवर्षमें अशिक्षित स्त्रियोंकी अज्ञानता और असावधानीसे सैकड़ों घर दुःखमय हो रहे हैं, हजारों बच्चे गर्भहीमें मर जाते हैं और प्लेग, हैजा आदि महामारियाँ पीछा नहीं छोड़तीं।

यद्यपि स्त्रियोंकी अज्ञानतासे कितने ही कष्ट उठाने पड़ते हैं, परन्तु यदि विचार किया जाय तो स्त्रियोंकी अज्ञानताका कारण बेचारी स्त्रियाँ नहीं हैं, किन्तु पुरुष हैं। वे ही इस ओर लक्ष्य नहीं देते। साधारण स्थितिके लोग यदि कुछ न करें, तो आश्चर्य नहीं, आश्चर्य तो उन पर है जो उच्च शिक्षा प्राप्त किये हुए हैं, सब कुछ सामर्थ्य रखते है, देश और समाजके नेता बनते हैं, परन्तु स्वयं अपनी लड़कियोंकी ८-१० सालमें ही शादी कर देते हैं। वे इस बात पर कभी विचार तक नहीं करते कि ये लड़कियाँ जिनको हम दूसरे घरोंमें वहाँका भार उठानेके लिए भेज रहे हैं, उस भारके उठानेके लिए समर्थ भी हैं या नहीं। परिणाम यह होता है कि वे दूसरे घरोंमें जाकर अज्ञानताके कारण हास्य और निन्दाकी पात्र बनती हैं और घरका कुछ भी प्रबन्ध नहीं कर सकतीं। न स्वयं करना जानती हैं और न दूसरोंसे कराना जानती हैं। थोड़ी ही अवस्थामें उन्हें प्रायः गर्भका असह्य भार उठाना पड़ता है। गर्भरक्षा और सन्तानपालन जैसे महान् कार्य उनके सिर पर आजाते हैं, जिनसे वे सर्वथा अनभिज्ञ हैं।

सन्तानपालन और स्वास्थ्यरक्षा साधारण काम नहीं है। इनके लिए बड़ी चतुर बुद्धिमती और शिक्षिता स्त्रियोंकी आवश्यकता है। हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी लड़कियोंको शुरूसे ही

इन बातोंकी शिक्षा दें और उनको स्वच्छ जलवायुका सेवन करावें तथा अच्छे मकानोंमें रक्खें। चाहे किराया कितना ही अधिक देना पड़े, चाहे कुछ हो, परन्तु रहनेका मकान जैसा हम ऊपर कह आये हैं साफ सुथरा और हवादार होना चाहिए।

बहुतसे आदमी बढ़िया मकानमें रहनेको फ़िजूलखर्ची समझा करते हैं, परन्तु यह उनकी बड़ी भूल है। जियादह किराया देकर अच्छे मकानमें रहना फ़िजूलखर्ची नहीं, किन्तु कमखर्ची है और इसके विपरीत थोड़े किरायेके गन्दे मकानमें रहना फ़िजूलखर्ची है और ऐसी फ़िजूलखर्ची है कि जिसमें रुपया भी नष्ट होता है, चिन्ता भी रहती है और जानके भी लाले पड़े रहते हैं। उदाहरणके लिए मान लो कि यदि खराब हवा और बदबूके कारण बीमारी आ गई, तो अच्छे मकानके किरायेसे कितना ही जियादह दवा और डाक्टरकी फीसमें लग जायगा।

इसके सिवा गन्दी हवामें रहनेसे एक और बड़ी भारी खराबी होती है। वह यह है कि कारबोनिककी अधिकतासे शरीर शिथिल पड़ जाता है और इन्द्रियाँ निर्बल हो जाती हैं। इनको उत्तेजित करनेके लिए—शरीरसे कड़े काम लेनेके लिए प्रायः लोग अफीम गाँजा शराब वगैरह नशेकी चीजोंका सेवन करने लगते हैं जिनसे तन, मन, धन, तीनों नष्ट होते हैं। एक दिनमें जितनेकी शराब या अफीम खर्च हो जाती है, उतना जियादह किराया देनेसे अच्छा मकान मिल सकता है। परन्तु इसपर कोई विचार नहीं करता। लोग रुपयेके लोभके कारण खराबसे खराब मकानमें रहना पसन्द कर लेते हैं, चाहे परिणाम कुछ भी हो। इस लोभका मुख्य कारण अज्ञानता है।

अज्ञानताके कारण ही यहाँके लोग ऐसे मकान बनाते है कि जिनमें हवा और धूप भूलकर भी नहीं आने पाती। हम नहीं समझते कि ऐसे मकानोंके बनानेमें क्या लाभ होता है। खर्च कुछ कम नहीं होता, मेहनत भी कम नहीं लगती। यदि अच्छे खुले हवादार मकान बनाये जायँ, कुरसी ऊँची दी जाय, हर एक मकानमें हवाके लिए दरवाजे और खिड़कियाँ रक्खी जायँ, तो जहाँतक हिसाब लगा कर देखा गया है एक पाई भी ज़ियादह खर्च न हो। कारण कि हवा और रोशनी जिनकी कि जरूरत है, बिन मूल्य ही मिलती हैं।

यद्यपि स्वास्थ्यरक्षाके नियमोंका पुस्तकों और व्याख्यानोंद्वारा बहुत कुछ प्रचार किया गया है, परन्तु अभीतक लोगोंका इसकी ओर पूरा पूरा ध्यान आकर्षित नहीं हुआ। इसका कारण यदि विचार करके देखा जाय तो यही मालूम होगा कि यहाँके ग्रामीण लोग प्रायः इसके लाभोंसे अपरिचित है और इसके नियमोंको बहुत कठिन समझते है। पर यह उनका केवल भ्रम है। स्वास्थ्यरक्षाके लिए कुछ खर्चकी जरूरत नहीं और कोई कठिनाई भी नहीं। केवल शुद्ध जलवायुकी जरूरत है और ये दोनों चीजें बिना मूल्य मिलती है। जहाँ कहीं मैल और गन्दगी हो, तुरन्त पानी डाल कर साफ़ कर दो। जिस मकानमें हवाका मार्ग न हो, वहाँ एक दीवारमें छोटासा छेद कर दो। मकानके समान अपनी गली, अपने शहर और अपने बदनका भी खयाल रक्खो। शरीरको साफ़ न रखनेसे सिरमें जूँ पड़ जाती हैं, बदनमें दाद और खुजली हो जाती हैं और गलियोंके साफ़ न रखनेसे प्लेग वगैरहके

कीड़े पैदा हो जाते हैं अथवा मलेरिया बुखार फैल जाता है, जिससे हजारों आदमी प्रतिवर्ष मर जाते हैं।

बुरी गन्दी गलियोंमें रहनेसे केवल मलेरिया आदिका ही भय नहीं, किन्तु और भी बहुतसी बुराईयाँ पैदा हो जाती हैं। देखनेसे मालूम होता है कि ऐसी जगहमें रहनेवालोंको गन्दगी और बदबूसे घृणा नहीं रहती। उन्हें रातदिन बुरे बुरे शब्द सुनने और लोगोंको शराब पीकर बकते हुए देखनेका अभ्यास पड़ जाता है। उनके चारों ओर वे लोग रहते हैं, जिनका पेशा दुराचार है। ऐसी दशामें रहनेसे उनका आचरण कभी ठीक नहीं रह सकता और उनका चरित्रगठन कदापि नहीं हो सकता। ऐसी जगहमें रहना मानो बालकों और स्त्रियोंके चरित्रको जान बूझकर बिगाड़ना है।

शरीररक्षा और चरित्रगठन तथा गृहसुख और सार्वजनिक (Public) सुखमें घनिष्ट सम्बन्ध है। बुरी गन्दी जगहमें रहनेसे चरित्र पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। वह प्लेगसे भी अधिक हानिकर है। ताजी हवाके न मिलनेसे अथवा बदन साफ न रहनेसे बदन ही कमजोर नहीं होता, किन्तु दिल भी गिर जाता है और कोई मानसिक उन्नति नहीं हो सकती। आत्मसम्मान नष्ट हो जाता है। बुरी बुरी वासनायें चित्तमें पैदा होने लगती हैं, आचरण बिगड़ जाते हैं। मन चंचल हो जाता है। कभी शराब पीनेको जी चाहता है और कभी व्यभिचारकी इच्छा होती है। इसी तरह पाप और दुराचार दिन दिन बढ़ता जाता है।

स्वास्थ्यरक्षाके नियमोंका पालन न करनेमें क्या अमीर क्या गरीब प्रत्येकको आर्थिक दण्ड भी भोगना पड़ता है। अमीरोंको

उन अनाथों विधवाओंकी रक्षार्थ चन्दे देने पड़ते हैं जिनके माता पिता और रक्षक हैजे वगैरहमें अचानक मर गये हैं। बीमारीमें भी उनका बहुत खर्च पड़ता है। क्योंकि रोग गरीबोंके घरोंसे निकलकर अमीरोंके घरोंमें आता है और किसी न किसीको उसकी भेंट होना पड़ता है। इसके अतिरिक्त कितना ही रुपया औषधालयों, अनाथाश्रमों और विधवाश्रमोंमे खर्च करना पड़ता है। गरीबोंको भी कुछ कम खर्च नहीं करना पड़ता। यदि अमीरोंका धन खर्च होता है तो गरीबोंकी जान जाती है। यही उन बेचारोंके लिए सबसे बड़ा धन है। यही उनका सर्वस्व है। इसी पर सब कुछ निर्भर है और यदि यह ही चला गया, तो उनका सब कुछ खो गया।

इस पर भी यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि लोग स्वास्थ्य-रक्षाकी कोई चिन्ता नहीं करते। यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा और आरोग्यताके लिए बड़े बड़े शहरोंमें म्यूनिसिपिल्टियाँ हैं, लेकिन म्यूनीसिपिल्टियों-की गलियों और सड़कों तक ही पहुँच है। वे गलियोंकी गन्दगी और मैलापन तो दूर करा सकती हैं; परन्तु अन्दर घरोंमें उनकी पहुँच नहीं। घरोंमें जो मल मूत्रके स्थान हैं, अथवा गाय भैंस बाँधनेके मकान हैं, अथवा वर्तन, भाँडे साफ़ करनेके स्थल हैं, वे इतने गन्दे और मैले रहते हैं कि यदि कोई अच्छे साफ़ हवादार मकानमें रहनेवाला मनुष्य वहाँसे निकल जाय, तो दुर्गन्धिके कारण उसका साँस घुट जाय। इन स्थलोंकी सफ़ाई म्युनिसिपि-ल्टियोंके अधिकारसे बाहर है। इनका साफ़ रखना वहाँके रहनेवालोंका काम है। यदि वे इस ओर ध्यान न दें, तो केवल

अपनेको ही हानि नहीं पहुँचाते, किन्तु तमाम मोहल्लेवालों और धीरे धीरे तमाम शहरवालोंको हानि पहुँचाते हैं। एक शहरमें बीमारी होनेसे दूसरे शहरमें फैल जाती है। दूसरेसे तीसरेमें और तीसरेसे चौथेमें, इस तरह एक आदमीकी असावधानी और गन्देपनसे सारे समाज और सारे देशको हानि पहुँचती है। परन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति सफ़ाई और तन्दुरुस्तीका ख़याल रक्खे, तो कहीं बीमारीका नाम भी सुनाई न दे। बीमारीके कारण हम ही हैं। जितने भयंकर रोग हैं, उन सबके छोटे छोटे कीड़े होते हैं जो शरीरमें प्रवेश करके शरीरको विपरूप कर देते हैं। संसार भरके डाक्टर इस बात पर सहमत हैं कि ये कीड़े गन्दी, बदबूदार हवासे पैदा होते हैं। गन्दगी और बदबू हमारी ही बेपरवाई और मैलेपनसे फैलती है। यदि हम हरएक चीजको सफ़ाईसे रक्खें, बदनको, कपड़ोंको, मकानको, माल असबाबको साफ़ रक्खें, कहीं कूड़ा करकट इकट्ठा न होने दें, बदबू न होने दें, कोई चलितरस, अभक्ष्य पदार्थ न खायँ, तो कहीं भी बीमारी न हो।

इन बातोंका ख़याल रखना कोई कठिन बात नहीं। यह केवल हमारी इच्छा और प्रतिज्ञा पर निर्भर है। यदि हम दृढ़ संकल्प कर लें, तो कुछ भी कठिन नहीं। बिना संकल्प और प्रतिज्ञाके कुछ नहीं हो सकता। चाहे हमको कितना ही अच्छा मकान मिले, साफ़ सुथरा और हवादार भी हो, परन्तु यदि हमारी आदत सफ़ाईकी नहीं, हमको स्वच्छतासे प्रेम नहीं, हमारी स्त्री मैली और फूहड़ है, तो हम उसको भी थोड़े ही दिनोंमें ख़राब कर देंगे। शराबी, जुआरी, फ़िज़ूलख़र्च आदमी अच्छेसे अच्छे महलको

भी डरावना और घिनौना बना देगा, परन्तु इसके विपरीत यदि खराबसे खराब मकान भी उस आदमीको दिया जाय जो कमखर्च और मेहनती है और जिसकी आदतमें सफ़ाई है, तो वह उसे भी अपनी मेहनत और शौक़से साफ़ सुथरा और उत्तम बना लेगा।

जब मकानका अच्छा बुरा बनाना उसमें रहनेवालोंके हाथमें है, तब उनका कर्तव्य है कि अपने और दूसरोंके फ़ायदेके लिए मैलेपनकी आदतको छोड़कर सफ़ाईकी आदत डालें। इसमें सन्देह नहीं कि जिन लोगोंकी आदत शुरूसे मैलेपनकी पड़ गई है, उनको सफ़ाई एकदम नहीं भासकती; परन्तु यह अवश्य है कि यदि वे उद्योग करें तो बहुत जल्दी सीख सकते हैं। शुरूमें कठिनाई होगी, परन्तु थोड़े दिनोंमें ही सफ़ाईका शौक़ हो जायगा—ज़रासा मैलापन भी न देखा जायगा।

सबसे ज़ियादह ज़रूरी यह है कि बच्चोंको शुरूसे ही सफ़ाईका अभ्यास कराया जाय। इसके लिए पुस्तकोंकी ज़रूरत नहीं, केवल नमूनेकी ज़रूरत है। कोई बुरी मैली और गन्दी चीज़ उनके सामने न आना चाहिए, वे स्वयं मैलेपनसे घृणा करने लगेंगे। बच्चोंको बोलना कौन सिखाता है? इंग्लैंडके बच्चे अँगरेज़ी और हिंदुस्थानके बच्चे हिन्दुस्थानी किस भाँति सीख जाते हैं? जैसा उनके माता, पिता, भाई, बहिन बोलते हैं, वैसा ही वे भी बोलने लगते हैं। इसी प्रकार यदि वे आपको साफ़ सुथरा देखेंगे, मैल और बदबूसे घृणा करते देखेंगे, हररोज़ कपड़ों और घरोंको साफ़ होते देखेंगे, आपको स्नान करते हाथ पैर धोते हुए देखेंगे, तो वे भी आप जैसे हो जावेंगे।

किसीने क्या ही अच्छा कहा है कि " सफ़ाई तन्दुरुस्तीकी जड़ है। मितव्ययिता, सदाचार और आत्मसम्मानकी कल है। जिस घरमें सफ़ाई है, वह सदा सुखी और निरोगी है और जिसमें मैलापन है, वह दुःखी और रोगी है। सफ़ाईमें भलाई और आराम है, मैलेपनमें बुराई और तकलीफ़ है। सफ़ाई सभ्यताका चिन्ह है और उन्नतिका द्वार है। मैलापन असभ्यताका सूचक है और अवनतिका कारण है। सफ़ाईसे मन पवित्र होता है और मैलेपनसे अपवित्र हो जाता है। "

शरीर आत्माका मन्दिर है। उसमें आत्मा विराजमान है। आत्माकी पवित्रताके लिए शरीरका पवित्र होना आवश्यक है। बिना शरीरकी पवित्रताके आत्माका शुद्ध होना दुस्साध्य है। इसी कारण देवदर्शन पूजा पाठ आदिके पूर्व शौचादिसे निवृत्त होना आवश्यक है। जहाँ देखिए वहींके मन्दिरों मसजिदोंमें कुए बने हुए हैं। ये इसी लिए बनाये गये हैं कि पूजा प्रार्थना करनेके पहले शरीरको शुद्ध करना योग्य है। कोई हिन्दू बिना स्नान किये पूजा नहीं कर सकता और कोई मुसलमान बिना हाथ, मुँह, पैर धोये नमाज नहीं पढ़ सकता। धर्मशास्त्रोंमें आत्मशुद्धताके लिए शरीरशुद्धताकी आवश्यकता दिखलाई है। क्योंकि बिना शरीरकी शुद्धिके मन शुद्ध नहीं हो सकता और मनकी शुद्धिके बिना आत्माकी शुद्धि नहीं हो सकती।

इस लिए अन्तमें फिर कहा जाता है कि सफ़ाई एक मुख्य चीज़ है। स्वास्थ्यरक्षा, सन्तानपालन, आत्मसम्मान, तथा गृहप्रबन्धके लिए प्रत्येक मनुष्यको और विशेष कर प्रत्येक गृहिणीको इसका अभ्यास करना चाहिए। रहने, सहने, खाने, पीने वगैरह

हर काममें इसका खयाल रखना चाहिए। इसके बिना स्वप्नमें भी सुख नहीं मिल सकता।

परन्तु इस देशमें स्त्रियोंको बहुत ही तुच्छ दृष्टिसे देखा जाता हैं। उनके पढ़ाने लिखानेमें एक पैसा भी खर्च नहीं किया जाता। यह सरासर भूल है। शिक्षा क्या स्त्री क्या पुरुष सबको जरूरी है, बल्कि स्त्रियोंको तो और भी जरूरी है। पुरुष यदि न पढ़ें तो अधिक हानि नहीं, परन्तु यदि स्त्रियाँ न पढ़ें तो वे कदापि गृहप्रबन्ध और सन्तान पालन जैसे महत् कार्योंका सम्पादन योग्य रीतिसे नहीं कर सकतीं। शिक्षित स्त्रियोंकी सन्तान स्वच्छ और निरोग रह सकती है और संसारमें वह ही कुछ करके दिखला सकती है। यह प्रत्यक्ष देखनेमें आता है कि शिक्षित माताओंकी सन्तान प्रायः शिक्षित होती है। उनको प्रारम्भसे ही शिक्षा विद्या और स्वच्छतासे स्वाभाविक प्रेम होता है। परन्तु इसके विपरीत अ-शिक्षित माताकी सन्तान बहुत कम सभ्य और शिक्षित होती है।

पन्द्रहवाँ अध्याय।

सुखी जीवन।

(विद्वानोंके वाक्य)

१—गुण कर्मसे मनुष्यको ऊँच नीच समझो। उत्तम कुलमें उत्पन्न होनेसे कोई उत्तम नहीं कहला सकता। उत्तम वही है, जो उत्तम कार्य करता है—चाहे नीच कुलमें ही उत्पन्न हुआ हो।

२—उत्तम स्वभाववाले मनुष्यकी सेवा करना श्रेष्ठ है, चाहे वह दरिद्र ही क्यों न हो। वह समय अवश्य आयगा, जब वह तुम्हें तुम्हारे कामोंका बदला देगा।

३—जो चीज तुम्हें नहीं मिल सकती, ऐसा प्रयत्न करो कि उसका अभाव तुम्हारे हृदयके उलासको नष्ट न करे।

* * *

जिस तरह संसारमें और अनेक कार्य हैं, उसी तरह सुखपूर्वक जीना भी एक महान् कार्य है। इसका करना उतना ही कठिन है, जितना किसी गूढ़ विषयका अध्ययन करना अथवा और कोई चातुर्यका कार्य करना। प्रत्येक वस्तुका सदुपयोग करना और जीवनके उच्चतम उद्देश्यकी पूर्ति करना सुखी जीवन पर ही निर्भर है।

सुखपूर्वक रहनेके लिए कुछ कम बुद्धिकी जरूरत नहीं है। यद्यपि यह गुण किसी किसी मनुष्यमें स्वभाविक होता है, तथापि अभ्यास इसका प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। माता पिता तथा अध्यापकोंके द्वारा बालकोंके हृदयमें इसका संस्कार बाल्यावस्थामें

ही करा दिया जा सकता है और अभ्यास और आचरण द्वारा समय पाकर इसका पूर्ण ज्ञान हो सकता है। परंतु बिना बुद्धिके यह ज्ञान कदापि स्थिर नहीं रह सकता।

संसारमें सुख चिन्तामणि रत्नके समान ऐसा दुर्लभ नहीं है कि इसके लिए इच्छा करना अथवा इसकी प्राप्तिके लिए उद्योग करना ही निष्फल हो। नहीं, यह ऐसे अनेक छोटे छोटे रत्नोंका संग्रह है, जो एक साथ जुड़े हुए है और देखनेमें सुंदर मालूम होते है। हमारे जीवन मार्गमें चारों ओर पग पग पर जहाँ देखिए वहाँ ही साधारणसे साधारण घटनाओंमें भी सुख व्याप्त है। उससे आनंदित होना ही परम सुख है। परन्तु हम किसी महान् सुखकी प्राप्तिकी जोहमें लगे रहते है और उन साधारण पदार्थोंमें रहनेवाले सुखकी ओर ध्यान ही नहीं देते। इसका परिणाम यह होता है कि हमको कोई भी सुख नहीं मिलता है। इसी कारण हम सदा दुखी रहते हैं। वास्तवमें छोटे छोटे कार्मोको कर्तव्य और आनंदका कारण मानकर करनेमें ही सुख है।

जो मनुष्य जीवनको आनंदपूर्वक व्यतीत करना जानता है, उसको कभी दुःख नही होता। वह सदा हर्षित और प्रसन्न-चित्त रहता है। प्रकृति उसके लिए सदा सुंदरतासे परिपूर्ण रहती है। वह वर्तमानको देखकर, भूतका स्मरण करके, और भविष्यका अनुमान करके प्रसन्न होता रहता है। वह अच्छी तरह जानता है कि जीवन अमूल्य पदार्थ है। उसको सार्थक बनानेके लिए विवेकानुसार आनंदपूर्वक कर्तव्यपालनकी जरूरत है। वह निरन्तर अपनी उन्नति करता रहता है। पतित और असहाय मनुष्योंको

उपदेशद्वारा उत्साहित करता और यथाशक्ति धनसे उनकी सहायता करता रहता है । वह प्रत्येक उन्नतिके कार्यमें योग देता है और परोपकारसे मुँह कभी नहीं मोड़ता । उसका सम्पूर्ण समय अपनी और दूसरोंकी उन्नतिके विचारमें ही व्यय होता है। वह कभी हताश नहीं होता। वह आपत्तियोंको प्रसन्नतासे सहन कर लेता है। आपत्तियाँ उसके कार्यमें बाधक नहीं होतीं, उल्टा उसको सदा उत्तेजित करती रहती हैं । उसकी बुद्धिका दिनोंदिन विकाश होता जाता है और उसका अनुभव बढ़ता जाता है। वह प्रत्येक पदार्थमें प्रतिदिन एक अपूर्व आनंदका अनुभव करता है। चौबीस घंटोंमें उसको क्षणभरके लिए भी दुःख नहीं होता। उसका जीवन सच्चा सुखी जीवन है। न उसे इस बातकी इच्छा है कि लोग मेरी प्रशंसा करें, न इस बातकी चाह है कि मरने पर लोग मेरे लिए स्मारक स्थापित करें। मृत्युका उसे डर नहीं। वह बड़ी प्रसन्नतासे उसका स्वागत करता है और मृत्युके आने पर हर्षपूर्वक उसकी गोदमें सो जाता है। लोग उसके उपकारोंका स्मरण किया करते हैं और वह स्मरण ही मानो उसका स्मारक होता है। उसके आदर्श जीवनसे लोगों पर जो प्रभाव पड़ता है, वही मानो उसकी प्रशंसा है।

एक वह मनुष्य है जिसका जीवन दुःखसे परिपूर्ण है। रात दिनमें क्षण भरको भी उसे सुख नहीं। समस्त संसार उसकी दृष्टिमें शून्य है। किसी चीजसे भी उसको आनंद नहीं मिलता। उसकी आनंदानुभवकी शक्ति ही मानो सर्वथा नष्ट होगई है। यद्यपि रुपया बहुत है, तो भी उसका मन प्रसन्न नहीं होता। भ्रमण उसके

अच्छा नहीं लगता और प्रकृतिके दृश्य उसको प्यारे नहीं लगते। यदि उसको कभी पहाड़ों या जंगलोंमें जानेका अवसर मिलता है, तो वह एक बेगारसी समझता है और यह खयाल करके कि यह सफर तो काटना ही है ज्यों त्यों करके समयको बिता देता है। जब जवानीमें ही उसका यह हाल है, तब बुढ़ापेके विषयमें तो कहा ही क्या जाय। उस समय तो जिन्दगी उसको भारी मालूम होती है, परंतु फिर भी वह मरना नहीं चाहता—मौतसे वह सदा ही डरता रहता है। अचानक मौत आजाती है और उसकी अतुल्य लक्ष्मी-की कुछ भी परवा न करके उसको हवाकी तरह उड़ा ले जाती है। इस तरह यद्यपि उसके पास धन बहुत था, तो भी सुखी जीवन-के सिद्धांतोंसे अपरिचित होनेके कारण उसको सफलता न हुई।

जीवनको आनन्दमय बनानेके लिए रुपयेकी जरूरत नहीं। इसके लिए प्रत्येक पदार्थको देखकर उससे आनन्द प्राप्त करनेकी शक्ति होना चाहिए। हमारे सामने ऐसे सैकड़ों पदार्थ विद्यमान हैं, जिनसे हम आनन्दानुभव कर सकते है। परन्तु हमारे नेत्र और हमारा हृदय उक्त शक्तिसे शून्य है और इस कारण वे हमारी दृष्टिमें रूखे और फीके मालूम होते हैं। आनन्दानुभव शक्तिके होते हुए एक क्षण भी दुःख और चिंतामें नहीं बीत सकता। निर्ध-नसे निर्धन भी अपनेको महान् सुखी समझता है। वास्तवमें सुखी वे ही हैं जिनको कोई चिंता नहीं, जो प्रत्येक पदार्थमें एक अनुपम सौन्दर्यका अनुभव करते है और जो सदा पवित्र विचार और उच्च वासनाओंसे अपने मनको प्रसन्न रखते है। ऐसे मनुष्य बड़े परिश्रमी साहसी और उद्योगी होते है। वे अपने अथक उद्योगसे घरकी छोटी

छोटी चीजोंको भी ऐसी अच्छी तरह रखते हैं कि सदा उन्हें देखकर प्रसन्न होते रहते हैं। उनके घरमें जाकर देखिए, सब चीजें ठीक ठीक जगह पर सफ़ाईसे रक्खी होंगी। कहीं कूड़ा करकट नामको भी न होगा। कपड़े साफ़ और सुफ़ेद होंगे। वर्तन चाँदी सोनेके समान चमकते होंगे। सम्भव है कि उनके कमरोंमें दस बीस तसबीरें न हों, बढ़िया बढ़िया मेज़ कुरसियाँ न हों, नीचे दरी गलीचे न बिछे हों, परन्तु जो कुछ भी होगा, वह साफ़ सुथरा होगा। यदि एक भी तसवीर होगी, तो वही देखनेमें सुंदर और प्रिय मालूम होगी। फर्श यदि बोरिये या चटाईका भी होगा, तो भी वह साफ़ होगा।

सुखी जीवन घरकी छोटी छोटी बातों पर निर्भर है। खाना सादा और जल्दी पचनेवाला हो, गरिष्ठ न हो। हवा साफ़ आती हो। मकानोंमें नमी न हो, धूप आती हो। कूड़ा करकट न पड़ा हो, सफ़ाई रहती हो।

जैसा हम पिछले अध्यायोंमें कह आये है, सुख और स्वास्थ्यके लिए सफ़ाई बहुत ही ज़रूरी चीज़ है। सफ़ाईमें ज़ियादह रुपया खर्च नहीं होता, सिर्फ़ ख़याल रखनेकी ज़रूरत है। देखा जाता है कि बहुतसे आदमी जिनकी आमदनी पचास रुपयेकी भी नहीं, उनसे कहीं अच्छे रहते है जिनकी आमदनी डेढ़सौ या दोसौ रुपयोंकी है। इसका कारण यही है कि पहले आदमीके घरमें सफ़ाईका ख़याल रक्खा जाता है, परन्तु पिछलेके घरमें इसकी कोई परवा नहीं की जाती। पहलेके बच्चे सदा अच्छा खाते पीते हैं, साफ़ सुथरे रहते हैं और उत्तम शिक्षा पाते हैं। वह स्वयं आनन्दपूर्वक रहता

है, कभी कोई चीज़ उधार नहीं लेता, कभी बेज़रूरी चीज़ नहीं खरीदता, उपयोगी सार्वजनिक कार्यमें योग देता है, अनेक संस्थाओंका सभासद है और अनेक समाचारपत्रोंका ग्राहक है। परन्तु पिछला पुरुष अधिक आमदनी होते हुए भी सदा तंगहाल रहता है। महीनेकी बीस तारीख़ होने नहीं पाती कि उसकी जेब खाली हो जाती है और किसी तरह जल्दी जल्दी, समय जैसा अमूल्य पदार्थ पूरा हो जाय, इसीका खयाल रखता है। उसके बच्चे बुरे हाल रहते हैं। यद्यपि उन्हें कपड़े बढ़िया बढ़िया पहिनाये जाते हैं; परन्तु सफ़ाईकी ओर ध्यान न होनेसे वे उन्हें जल्द खराब कर देते हैं। यद्यपि मकानोंमें दरियाँ बिछाई जाती हैं, परन्तु जल्द मैली कुचैली हो जाती हैं। लेम्प जलाये जाते हैं, परन्तु असावधानीके कारण उनकी चिमनियाँ हररोज़ टूटा करती हैं। इन्हीं बातोंमें फ़िजूल खर्च होता है। इस फ़िजूलखर्चीका कारण एक मात्र बेपरवाही है। ऐसे आदमी संसारमें कभी बड़े नहीं हो सकते। चाहे उनकी आमदनी कितनी ही हो जाय, परन्तु वे सदा दुखी रहेंगे। सुख उन्हें स्वप्नमें भी नहीं मिल सकता। संसारमें सुख तो सभी चाहते हैं, परन्तु असल बात यह है कि सुखी रहनेके उपाय सब नहीं जानते। सुखपूर्वक रहना कोई आसान बात नहीं है। इसके लिए गहरे ज्ञान और अनुभवकी ज़रूरत है। परंतु यह कोई कठिन बात भी नहीं है मनुष्य मात्रका कर्तव्य है कि वह सुखी रहनेके उपाय सीखे।

लोगोंका यह खयाल कि संसारमें दुःख है; ठीक नहीं है। सुख दुःख हमारे अधीन हैं। हम चाहें तो स्वर्गको नरक कर दें और नरकको स्वर्ग बना दें। सुखदुःखका अनुभव करना मन

का काम है और मन हमारे अधिकारमें है। हम चाहें तो अपने विचारोंको शुद्ध रख सकते हैं, इंद्रियोंको वशमें कर सकते है, हृदयको पवित्र कर सकते है, कषायोंको शमन कर सकते हैं, शिक्षासे अव्यक्त गुणोंका विकाश कर सकते हैं, समीचीन ग्रन्थोंका स्वाध्याय कर सकते है और सद्गुणोंकी प्राप्ति भी कर सकते हैं।

सुखी जीवनका सच्चा सबसे अच्छा दृष्टान्त घरमें मिल सकता है। वह घर कदापि फला फूला नहीं कहला सकता—उस घरकी कभी बढ़ती नहीं हो सकती, जिसमें सुख और शान्ति न हो। जहाँ सदा झगड़ा टंटा रहता हो, मैला कुचैला पड़ा रहता हो और आलस फैला रहता हो, वहाँ न तो पुरुष ही सुखी रह सकता है और न स्त्री ही। दोनोंका जीवन निष्फल और दुःखमय होता है। वह पुरुष—जो दिन भर दफ्तर या कारखानेमें कड़ा परिश्रम करता है—यही आशा करता है कि शामको घर पर आराम मिलेगा और इसी आशा पर उस श्रमकी कोई परवा नहीं करता। बड़ेसे बड़ा आराम जो उसकी पत्नी उसको दे सकती है यही है कि उसके घर आनेसे पहले पहले उसके लिए मकानको साफ और सुथरा करके रक्खे और अच्छा खाना बना कर तैयार रक्खे। यही गृहिणीका कर्तव्य है। इसीका नाम गृहप्रबन्ध है। इसीको मितव्ययिता कहते है। इसीसे वह घर ऐसा सुखी हो जाता है कि गृहस्वामी घर पर आते ही सब दुख भूल जाता है और अपने मनमें समझता है कि मानो मैं स्वर्गमें आ गया। फिर उसे कोई भी क्षोभ वहाँसे नहीं हटा सकता।

ऐसे घरको ही सुखी घर कहते हैं। वे लोग बड़े दुखी हैं, जिनके घर नहीं। परन्तु उनसे भी ज़ियादह दुखी वे हैं, जिनके घरमें सुख नहीं। घरके लिए सुख ऐसा ही जरूरी है जैसे शरीरके लिए आत्मा। जैसे बिना आत्माके शरीर नहीं रह सकता, वैसे ही बिना सुखके घर नहीं रह सकता।

केवल बढ़िया सामान और अच्छे अच्छे खाद्य पदार्थोंसे ही सुख नहीं होता। सुखके लिए स्वच्छता और मितव्ययिता चाहिए। संक्षेपमें गृहशासन और गृहप्रबन्ध भी सुखके लिए बहुत आवश्यक हैं। सुख वह भूमि है जिसमें मनुष्य वृद्धिको प्राप्त होता है और शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकारकी उन्नति करता है। सुख वास्तवमें अनेक गुणोंकी जड़ है।

ऐसे सुखके लिए धनकी जरूरत नहीं। भोगविलासके लिए रुपयेकी जरूरत हुआ करती है, किंतु सुख और भोगविलासमें आकाश पातालका अन्तर है। वह घर सुखी है, जिसमें जरूरतकी तमाम चीजें पाई जाती हों और जिसका प्रबन्ध किसी स्वच्छ स्वस्थ मितव्ययी गृहिणीके द्वारा होता हो—चाहे वह किसी साधारण पुरुषका ही क्यों न हो। प्रायः रुपयेके अभावसे इतना दुःख नहीं होता, जितना गृहप्रबंधकी अनभिज्ञतासे होता है।

यह निश्चय करके नहीं कहा जा सकता कि सुख किन किन चीजोंसे होता है। जिस चीज़से एकको सुख होता हो सम्भव है कि उसीसे दूसरेको दुःख होता हो। सुख मनुष्यों पर भी उतना ही निर्भर है, जितना कि पदार्थों पर।

सुखी मनुष्य सरलस्वभावी और दयालु होते हैं। दयालुता सुखका एक आवश्यक अंग है। क्षमा, शान्ति, सहानुभूति और प्रत्येक पदार्थको उपयोगमें लानेकी शक्ति उसके साधारण उपांग है। कहावत है कि जहा प्रेम है, वहाँकी सूखी रोटी भी उस जगहके माल मलीदोंसे अच्छी है जहाँ अरति और द्वेष हैं। सुखी मनुष्य विचारशील, दूरदर्शी और मितव्ययी होते हैं। उनको न्याय और सत्यसे स्वभावतः प्रेम होता है। वे कदापि ऋण नहीं लेते। सदा आमदसे कम खर्च करते हैं और आगेके लिए कुछ बचाकर रख छोड़ते हैं। वे जरूरी चीजोंके लिए कंजूसी नहीं करते और समय आने पर पीछे नहीं हटते। वे जो कुछ करते हैं, वह किसी दिखलानेके लिए नहीं करते। वे सदा नियमपूर्वक कार्य करते हैं। सुखपूर्वक खाते पहनते हैं। न जाड़में ठिठुरते हैं और न गर्मियोंमें पसीनोंसे सराबोर होते हैं। स्वास्थ्यरक्षाके लिए जिस चीजकी जरूरत होती है चाहे वह कितने ही मूल्यकी हो, उसे खरीद लेते हैं। परन्तु फिजूल चीजको चाहे वह सस्ती ही क्यों न हो, कभी नहीं खरीदते। स्वास्थ्योपयोगी खाने पहननेमें उन्हें खर्च करते बुरा नहीं मालूम होता, किन्तु फिजूलकी नुमायशी चीजों पर एक पैसा खर्च करते हुए भी उनका दिल दुखता है।

घरका प्रबन्ध प्रायः स्त्रीके हाथमें होता है। वह घरकी मालिकिन होता है। घरका सुख उस पर अर्थात् उसके स्वभाव उसके प्रबन्ध और उसके कार्य पर निर्भर रहता है। अतएव इस बातकी बड़ी जरूरत है कि स्त्री पुरुषका आपसमें मेल हो। वे एक दूसरेके सहायक हों। एकके विचारों और कार्योंका दूसरा अनुमोदक

और समर्थक हो । अकेला पुरुष कुछ नहीं कर सकता । वह भले ही मितव्ययी हो, परन्तु उसकी मितव्ययिता कुछ भी कार्यकारी नहीं हो सकती, यदि उसकी स्त्री भी उसके समान मितव्ययी न हो । कहावत है कि कोई पुरुष उन्नति नहीं कर सकता, जब तक उसकी स्त्री उसको उन्नति नहीं करने देती ।

यह कहनेकी जरूरत नहीं कि गृहप्रबन्ध कितना उपयोगी और लाभदायक है । इससे अनेक पुरुषोंको सुख मिलता है । पृथक् पृथक् व्यक्तिको लाभ होता है और परम्परासे समस्त जातिको लाभ पहुँचता है । सुख सम्पादनके लिए इससे बढ़ कर और कोई उपाय संसारमें नहीं । इसके बिना समस्त नियम, उपनियम, दान और उदारता व्यर्थ और निष्फल हैं ।

वह मनुष्य कितनी प्रसन्नतासे अपने काम पर जाता है और कितना आनन्दित होता हुआ वहाँसे शामको घर लौटता है, जिसके घरमें एक चतुर विदुषी और प्रबन्धिका स्त्री है—जो घरकी आमद खर्चका ठीक ठीक हिसाब रखती है और प्रत्येक कार्यको देख भाल कर करती है । ऐसी स्त्रीसे केवल उसी घरको लाभ नहीं पहुँचता; किन्तु समस्त मोहल्लेवाले उसका अनुकरण करने लगते हैं और उसको आदर्शस्वरूप समझते हैं । उसके बच्चोंकी आदतें ठीक उसहीके सदृश होती हैं और उनका जीवन उसीके जीवनके आधार पर बनता है । क्योंकि कहनेसे कर दिखाना जियादह असर रखता है । यद्यपि वह किसीसे कुछ नहीं कहती, तथापि उसका जीवन ऐसा नियमपूर्वक और शांतिसे बीतता है कि लोग उसे देखकर स्वयमेव उसका अनुकरण करने लगते हैं ।

अतएव स्त्रीके लिए सबसे प्रथम और आवश्यक बात यह है कि वह अपने हाथों और अँगुलियोंको ठीक ठीक तौरसे काममें लाना सीखे। क्योंकि बहुतसे काम उसे इन्हींसे करना होते हैं। यह सर्व साधारणको विदित है कि गृहसुखके लिए चतुर प्रबन्धिका स्त्रीकी कितनी आवश्यकता है। एक विद्वानका कथन है कि स्त्रीकी आधी शिक्षा उसके हाथों द्वारा होती है। अर्थात् सीना पिरोना खाना बनाना वगैरह जितने कार्य स्त्रियोंको करने होते हैं, वे प्रायः हाथोंसे ही होते है। इसके कहनेकी कोई ज़रूरत नहीं कि बुद्धि और मितव्ययिताका साथ साथ रहना आवश्यक है। स्त्रीको केवल हाथोंके काममें ही चतुर न होना चाहिए, किन्तु उसमें गृहप्रबन्धकी योग्यताका होना भी ज़रूरी है।

दूसरा गुण जो स्त्रियोंके लिए ज़रूरी है वह यह है कि प्रत्येक कार्यके करनेके लिए कोई विधि या व्यवस्था होनी चाहिए। स्त्रियाँ प्रायः इस गुणसे शून्य होती है। वे काम तो बहुत करती है किन्तु किसी नियम व आधार पर नहीं। जो करती है, अंधाधुंध करती हैं। वे समयकी भी कोई कदर नहीं करतीं। अमुक काम कितनी देरमें होना चाहिए, अमुक काम कब होना चाहिए, पहले कौन काम करना चाहिए, किस समय क्या करना चाहिए, इत्यादि बातोंका उन्हें कोई विचार नहीं होता। यद्यपि ये बड़े भारी दोष हैं, परन्तु ये सब शिक्षा और अभ्याससे दूर हो सकते हैं। प्रत्येक पिता और पतिका मुख्य कर्तव्य है कि जितनी जल्दी हो सके वह अपनी कन्या और स्त्रीमेंसे इन दोषोंको दूर कर दे।

घरके प्रबन्धके लिए व्यवस्थाकी बड़ी भारी जरूरत है। घर ही क्या संसारके सभी कार्योंके लिए व्यवस्थाकी जरूरत है। बिना व्यवस्थाके कोई काम ही नहीं चल सकता। कामका विभाग करनेसे, हरएक कामको ठीक समय पर करनेसे बहुतसा काम हो सकता है और बहुतसा समय बच सकता है। बिना व्यवस्थाके काम करनेमें बहुतसा समय नष्ट हो जाता है और काम भी होता नहीं दीखता—आलस कुछ भी नहीं करने देता। परन्तु जब प्रत्येक कार्यके करनेका नियम बँधा हो और समय नियत हो, तो वह कार्य स्वयमेव हो जाता है। समय उसको बिना प्रेरणाके स्वयं करा लेता है। रुपयेके जमा खर्च करनेमें भी नियमकी जरूरत है। नियम न होनेसे किसी किसीके हाथमेंसे तो रुपया इस तरह उड़ता है जैसे पारा। हम पहले बतला चुके हैं कि पुरुष कितने फ़िज़ूलखर्च होते हैं। स्त्रियाँ भी कुछ कम फ़िज़ूलखर्च नहीं होतीं। १०० पीछे १० को भी यह मालूम नहीं होता कि हम अपनी आमदनीको किस तरह खर्च करें। हमको क्या चीज़ खरीदना चाहिए और किस चीज़की आशा हमें छोड़नी चाहिए, कौन चीज़ हमको मिल सकती है और कौनसी चीज़ हमारे लिए जरूरी है। हमारे देशकी स्त्रियोंको प्रायः इस बातका ख़याल भी नहीं होता। चाहे किसीके स्वामीकी पचास रुपयेकी आमदनी हो, किसीके स्वामीकी सौकी और किसीके पतिकी दशकी, परन्तु उनकी स्त्रियाँ प्रायः यही चाहती हैं कि हम समान रूपसे रहें। यदि अमुक स्त्रीके पास सोनेके कड़े हैं—अमुक स्त्रीके गलेमें जड़ाऊ गुलूबन्द है, तो मेरे पास भी वे ही चीज़ें होनी चाहिए। यदि अमुक स्त्रीने अपनी लड़कीके विवाहमें इतना दहेज़ दिया,

तो मैं भी इतना ही दूँ। इस फिजूलखर्चीके कारण यह देश दिनों दिन निर्धन होता जाता है।

स्त्रीके लिए परिश्रम जरूरी चीज है। परिश्रम कामकी जान है। परन्तु बिना व्यवस्थाके परिश्रम कुछ कार्यकारी नहीं है। यह स्त्री जो निरा परिश्रम ही करती है, कभी कभी घबरा जाती है, परन्तु जो परिश्रमके साथ साथ व्यवस्थाका भी ध्यान रखती है और नियमानुसार चलती है वह बिना किसी घबराहटके शान्तिके साथ हरएक कामको कर लेती है।

गृहप्रबन्धके लिए परिश्रमके अतिरिक्त और भी कई बातोंकी जरूरत है। दूरदर्शिताका होना बड़ा जरूरी है। यह गुण बड़े विचार और अनुभवसे प्राप्त होता है। इसका अर्थ ही बुद्धिमत्ता है। इसके द्वारा ही हमको योग्य अयोग्य, हेय उपादेयका ज्ञान होता है। क्या करना चाहिए और कैसे और कब करना चाहिए, ये बातें इसीसे मालूम होती हैं। यह प्रत्येक कार्यके लिए समय और व्यवस्था नियत कर देता है। यह गुण ज्ञान और अनुभवसे बढ़ता है। इसका अभ्यास करना प्रत्येक गृहिणीका कर्तव्य है।

दूसरा गुण जो स्त्रीके लिए आवश्यक है वह यह है कि हरएक काम नियत समय पर किया जाय और एक मिनिट भी व्यर्थ न खोया जाय। यदि इस नियमकी ओर तनिक भी लक्ष्य दिया जाय, तो अनेक आपत्तियाँ जो देरमें खाने, देरमें सोने, देरमें उठने वगैरह असमय काम करनेसे होती हैं, बहुत जल्द दूर हो जावें। जो स्त्री समयका आदर नहीं करती, वचनोंको पूरा नहीं करती, वह सबकी दृष्टिमें गिर जाती है। उसके कारण उसके घरवालोंको

बहुतसा समय नष्ट होता है। वह उनके कार्यों, उनके और उनके विचारोंमें बाधक होती है और उनके लिए दुःखका कारण बन जाती है। समय कोई साधारण वस्तु नहीं। समय अमूल्य वस्तु है। इसका आदर करना—इसको उपयोगमें लाना स्त्री मात्रका कर्तव्य है। यह सुख, शांति और वृद्धिका मूल कारण है।

स्त्रीमें साहस और दृढ़प्रतिज्ञाकी भी अत्यन्त आवश्यकता है। जिस बातका निश्चय करो, जो नियम स्थिर करो और जो व्यवस्था स्थापित करो, उसपर सदा दृढ़ रहो। बिना कारणके कदापि उससे विमुख न होओ। चाहे शुरूमें कठिनाई मालूम हो, परन्तु इसकी कोई परवा न करो। धीरताके साथ उसे किये जाओ और शुद्ध अंतःकरणसे उसका पालन किये जाओ। एक दिन तुमको उसका फल अवश्य मिलेगा।

जीवनको आनन्दमय बनानेके लिए और भी कई उपाय हैं। अपने स्वभावको वशमें करना यह भी एक महान् उपाय है। ऐसा करनेसे जितनी बुरी वासनायें हैं, वे सब नष्ट हो जावेंगी और वासनाओंका नष्ट होना हा वास्तविक सुख है। व्यर्थ वासनाओंने ही हमको दुखी कर रक्खा है।

क्षमा, प्रफुल्लता, और दयालुतासे हम जब चाहें तभी आनन्दित हो सकते हैं। इच्छामात्रकी देरी है। केवल इनसे हम अपने ही लिए नहीं किन्तु हम अपने चारों ओर औरोंके लिए भी आनन्दवृष्टि कर सकते हैं। हम अपनेमें और अपने निकटवर्तियोंमें आनन्द-दायक विचारोंका प्रकाश कर सकते हैं, अपनी इच्छाओंको शुद्ध कर

सकते है और सभ्य भाषा और सभ्यताके नियमोंका प्रचार कर सकते हैं।

सभ्यता भी एक अमूल्य गुण है। जिस व्यक्तिमें इसका अभाव है, मानो उसमें मनुष्यत्वका भी अभाव है। सभ्यतासे ही मनुष्यकी पहचान है। यद्यपि और गुण भी आवश्यक हैं; परन्तु सभ्यताके विना सब व्यर्थ हैं। असभ्य पुरुष चाहे कितना ही शुद्धहृदय और सदाचारी हो; परन्तु सभ्यताके अभावसे उसके सर्व गुण ढँक जाते है। सभ्यतासे मनुष्य सर्वप्रिय और प्रसन्नचित्त रहता है। अतएव गृहिणीके लिए इस बातकी बड़ी आवश्यकता है कि वह सभ्यतासे विभूषित हो। उसके भाव, उसके शब्द और उसके कार्य सम्पूर्ण सभ्यतानुकूल हों। यह स्मरण रखना चाहिए कि सच्ची सभ्यता वही है, जिसमें शिष्टाचार और प्रीतिपूर्ण व्यवहार हो।

सभ्यतासे ही Gentleman या सभ्य पुरुषकी पहचान होती है। जो सभ्यताका व्यवहार करता है, वह इस बातका प्रमाण देता है कि मै उच्चकुलमें उत्पन्न हुआ हूँ। परन्तु इसका धन सम्पदासे कुछ सम्बन्ध नहीं है। एक धनवान् निर्धनसे निर्धनके साथ भी इसका व्यवहार कर सकता है। इसमें कुछ खर्च नहीं होता। बिना कौड़ी पैसा खरचे इसका व्यवहार किया जासकता है। परन्तु बात यह है कि इसको सीखना पड़ता है। कुछ आदमी तो जन्महीसे सभ्य पैदा होते हैं। परन्तु अधिक आदमी इससे शून्य होते हैं। अतएव बाल्यावस्थामें ही बालकोंको इसका अभ्यास करा देना आवश्यक है और इसके लिए सबसे उत्तम उपाय यह है कि बालकके माता पिता, भाई बन्धु तथा गुरु स्वयं उदाहरणस्वरूप बनकर

उसे सिखलावें। इस विषयकी कोई किताब पढ़ानेकी आवश्यकता नहीं है। केवल नमूना बनकर उसको दिखा देनेकी जरूरत है।

केवल धनिकोंके लिए ही सभ्यताका अभ्यास करना आवश्यक नहीं है; इसकी आवश्यकता मनुष्य मात्रके लिए है। हमको सदैव दूसरोंके साथ—चाहे वे किसी स्थिति और किसी जातिके मनुष्य हों—शिष्टतापूर्वक व्यवहार करना उचित है। इस विषयमें हमको फ्रान्सनिवासियोंसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। वहाँके लोग एक दूसरेसे केवल मित्रताका ही व्यवहार नहीं करते—उनके भावोंका ही आदर सत्कार नहीं करते, किन्तु एक दूसरेकी चीजकी रक्षा करना भी अपना कर्त्तव्य समझते हैं। वहाँके बालकोंको प्रारम्भसे ही शिष्टताका अभ्यास कराया जाता है। क्या स्वदेशी क्या विदेशी वे सबके साथ मित्रके समान व्यवहार करते है। भूलकर भी कभी किसीसे कठोर शब्द नहीं कहते। वहाँकी भूमि मानो सभ्यताकी खानि है। ऊँचेसे नीचे तक, बूढ़ेसे लेकर बच्चे तक प्रत्येक व्यक्तिमें सभ्यता कूट कूट कर भरी रहती है। उनके भाव, उनके वचन, उनके काम सम्पूर्ण सभ्य और परिष्कृत होते हैं। शोक है कि भारतवर्षमें इस गुणकी बहुत कमी हो गई है। जो देश कभी सभ्यशिरोमणि समझा जाता था, वहीं अब सभ्यताकी ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। स्वयं माता पिता ही अपने बालकोंको असभ्यताका पाठ पढ़ाया करते हैं। किसीका आदर करना, किसीके प्रति मैत्रभाव रखना, किसी असहाय मनुष्यकी रक्षा करना, किसीके साथ मीठे शब्द बोलना, किसीका जी न दुखाना इन गुणोंकी प्रायः शिक्षा ही नहीं दी जाती। बालक प्रारम्भमें

अपने घरोंमें अपने माता पिता, भाई बन्धुओंको इन गुणोंके विपरीत करते देखते हैं, इसलिए वे भी बड़े होकर उन्हींके अनुयायी हो जाते हैं। इसी कारण हमारी दिन पर दिन अवनति होती जाती है। यदि हमको अपनी उन्नति अभीष्ट है, तो हमें चाहिए कि हम सभ्यताको ग्रहण करें और प्रारम्भसे ही अपनी सन्तानको इसका अभ्यास करावें।

सभ्यताका हम अपने जीवनमें समय समय पर उपयोग कर सकते हैं। खाते पीते, उठते बैठते, चलते फिरते, घर पर, स्कूलमें, आफिसमें, अदालतमें सर्वत्र प्रत्येक कार्यमें इसका व्यवहार हो सकता है। यदि हमारे अन्तरंगमें दूसरोंको अपने प्रिय शब्दों और भावोंसे प्रसन्न करनेकी तनिक भी इच्छा हो, तो प्रत्येक कार्यमें सभ्यताका प्रयोग करनेकी सहजहीमें आदत हो जायगी। दूसरोंके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करनेसे केवल उनको ही प्रसन्नता नहीं होती, किन्तु उससे दशगुणी अधिक प्रसन्नता स्वयं प्रेमपूर्वक व्यवहार करनेवालोंको होती है। यदि हम कोई जरासा भी दयालुता व सभ्यताका कार्य करते हैं, तो हमारे हृदयमें उसी समय एक प्रकारका आह्लाद होता है। यदि कोई वृद्ध पुरुष आ जाता है और हम नम्रतासे खड़े होकर उसको आदर सत्कारसे स्थान देते हैं, तो यद्यपि यह देखनेमें एक तुच्छ कार्य है, किन्तु इससे हमारे हृदयमें स्वयमेव एक अपूर्व आनन्द उत्पन्न होता है। दूसरोंको भी हमारी सभ्यतासे आनन्द होता है और वे हमारा आदर करने लगते हैं।

केवल छोटोंको बड़ोंके साथ अथवा सेवकको स्वामीके साथ किंवा शिष्यको गुरुके साथ ही इस शिष्टताका व्यवहार न करना चाहिए, किन्तु

मनुष्यमात्रको मनुष्यमात्रके साथ इसका अभ्यास करना चाहिए। साधारण स्थितिके लोगोंको तो—जिन्हें सदैव एक दूसरेसे काम पड़ता रहता है—इस पर पूरा ध्यान देना चाहिए। सभ्य मनुष्यका सब कोई आदर करेंगे और शनैः शनैः उसका अनुकरण करने लगेंगे। बेंजिमन फ्रेंकलिन (Benjamin Franklin) का नाम प्रायः सबने सुना होगा। वे शुरूमें एक कारखानेमें एक साधारण पद पर नियत थे। उन्होंने उस अवस्थामें ही अपनी सभ्यतासे सम्पूर्ण कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओंको मुग्ध कर लिया था।

सभ्यता और शिष्टाचारके अतिरिक्त भाँति भाँतिके आमोद प्रमोदोंसे भी पवित्र और निष्पाप आनन्दकी प्राप्ति होती है। एक ही कामको कोई व्यक्ति सदा नहीं किये जा सकता। मनोविनोद विश्राम और व्यायामके लिए भी कुछ समय अवश्य होना चाहिए। लोग प्रायः विनोद अथवा दिल बहलावके समझनेमें भूल किया करते हैं। इसी कारण इस पर कोई ध्यान नहीं देता। वास्तवमें यदि विचारपूर्वक देखा जाय, तो यह बड़ा पवित्र और निष्पाप कर्म है। यह शिक्षाका एक मुख्य अंग है। इसके बिना शिक्षा अधूरी है। यह विचार कि यदि लड़का किरकिट कबड्डी फुटबाल वग़ैरह खेल रहा है तो समयको नष्ट कर रहा है, सर्वथा भ्रमयुक्त है। किसी प्रकारके भी दिल बहलावके काममें—चाहे वह शारीरिक हो, चाहे मानसिक—समय नष्ट नहीं होता, उसका यथेष्ट उपयोग होता है।

यदि तुमको उत्तम स्वास्थ्यकी इच्छा है, यदि तुमको शारीरिक सुखकी अभिलाषा है, तो विश्राम और व्यायामको कभी मत छोड़ो। मानसिक श्रमके पश्चात् व्यायाम करो और व्यायामके पश्चा

विश्राम करना ही स्वास्थ्यका मूल मंत्र है। यदि तुम ऐसा न करोगे- विश्राम न लोगे और व्यायाम न करोगे, तो शारीरिक व्याधियाँ तुम पर चिपट जावेंगी और मरते दम तक तुम्हारा पीछा न छोड़ेंगी। प्रायः देखा जाता है कि विद्यार्थीगण जब परीक्षा निकट आती है, तब रातदिन पढ़ने लिखनेमें लगे रहते हैं–न विश्राम लेते हैं, न व्यायाम करते हैं और न रातको सोते ही हैं। उनको इन कामोंके लिए समय ही नहीं मिलता। इस विषयमें एक बड़े भारी अनुभवी विद्वान्‌का कथन है कि "जिनको विश्राम और व्यायामके लिए समय नहीं मिलता, उनको रोग और व्याधिके लिए बहुत जल्दी समय मिल जाता है।"

श्रमके पश्चात् मनुष्यको स्वभावतः विश्राम करने और दिल बहलानेकी इच्छा होती है। मनुष्यमें यह इच्छा बड़ी बुद्धिमानीसे उत्पन्न की गई है। यह दब नहीं सकती। किसी न किसी रूपमें अवश्य प्रगट हो जाती है। यदि तुम सुखोंसे लाभ उठानेके लिए समय नहीं देते, तो तुम्हारी हानिकर कार्योंमें प्रवृत्ति हो जायगी- वह रुक नहीं सकती। इसीकी पुष्टिमें एक अनुभवी विद्वानका कथन है कि यदि तुम बुराईको दूर करना चाहते हो, तो उसके स्थानमें कोई भलाईको प्रचलित करो।

आजकल शराबकी क्यों बढ़ती हो रही है? क्यों इसका दिन पर दिन प्रचार बढ़ता जा रहा है? इसका मूल कारण यही है कि मनुष्योंको अन्तरङ्गकी इच्छाकी पूर्तिके लिए कोई पवित्र और उपयोगी अवसर दिल बहलानेका नहीं है। इसके कारण साधारण स्थितिके मनुष्योंकी वह अन्तरंग इच्छा प्रायः सफल नहीं

होती और शराब वगैरहकी तरफ़ झुक जाती है। किसी समय जर्मनीमें शराबका प्रचार बहुत बढ़ गया था, परन्तु अब विशेषकर शिक्षा और संगीत शास्त्रके फैलावसे बिल्कुल घट गया है और वहाँके निवासी बड़े ही संयमी समझे जाने लगे हैं। भारतवर्षसे भी यदि शराबको दूर करना है, तो समस्त देशहितैषियोंको शिक्षादि उत्तम उपयोगी बातोंका प्रचार करना उचित है। मद्यनिवारिणी सोसाइटियोंको भी इस ओर ध्यान देना चाहिए। यद्यपि उनके उपदेशसे लोग नशा छोड़ते जाते है; परन्तु यदि पाँच छोड़ते है, तो सात ग्रहण भी करते जाते हैं। कमी कुछ नहीं होती। पीनेवालोंकी संख्या दिनपर दिन बढ़ती जाती है, दूकानें नित्य नई नई खुलती जाती है और ठेके भी बढ़ते जाते हैं। अत एव उनका कर्त्तव्य है कि वे शिक्षा संगीतादिका प्रचार करें, जिससे जनसाधारण अवकाश मिलने पर अपने समयको गाने बजाने और समाचारादि पढ़नेमें लगा सकें।

संगीतविद्याका पारिणाम बड़ा ही कोमल और हृदयग्राही होता है। जनसाधारणके आचरण सुधारनेके लिए इस विद्याका अभ्यास करना आवश्यक है। यह प्रत्येक गृहमें आनन्दका कारण है। इससे घरमें एक प्रकारका नया जीवन आ जाता है। गोदका बालक भी इसकी मधुर तान और सुरसे फूल उठता है और गद्गद होकर हँसने लगता है। युद्धमें ऐसा बाजा बजता है कि मुर्देसे मुर्देके दिलमें भी जोश आ जाता है और वह एकदम कमर कस कर खड़ा हो जाता है। बाबा मत्ती Taltrer Mathew के विषयमें लिखा है कि वे गायनविद्याके द्वारा ही लोगोंसे नशा

छुड़ाया करते थे। उन्होंने समस्त आयर्लेंड देशमें सङ्गीतसभायें स्थापित की थीं। उनका विचार था कि जब हम लोगोंसे शराब लेते अर्थात् छुड़ाते हैं, तब उसके स्थानमें कोई उपयोगी मनोरंजक उत्तेजन भी उन्हें देना चाहिए। अतएव उन्होंने लोगोंको संगीतविद्या सिखलाई और स्थान स्थान पर संगीतकक्षायें खुलवाईं। हमारा भी कर्त्तव्य है कि हम उनका अनुकरण करें और उनके समान संगीतविद्याका प्रचार करें। प्रत्येक पाठशाला-में इसको शिक्षाक्रममें रक्खें। बालकोंको प्रारम्भसे ही इसका अभ्यास करावें। प्रत्येक घरमें इसकी ध्वनि सुनाई दे। जिस प्रकार जर्मननिवासी अपने अवकाशके समयको गाने बजानेमें व्यय करते हैं, उसी प्रकार हमको भी करना चाहिए। इससे सारा समय आनन्दमें ही व्यतीत होगा—क्षण मात्रको भी उदासी न होगी। परन्तु शोक है कि इससे भारतवासियोंकी रुचि हट गई है। आज-कलके शिक्षितोंका विचार है कि संगीतविद्या हानिकर है। परन्तु यह उनकी सर्वथा भूल है। संगीतविद्या एक बहुत ही उत्तम विद्या है। पहले यहाँ भी इसका बहुत आदर और प्रचार था। राज दर्बारोंमें बड़े बड़े संगीतरत्न गान्धर्व रहा करते थे। इस विद्यामें निपुणता प्राप्त करना महान् प्रतिष्ठाका कारण समझा जाता था। स्त्रियोंको तो इसकी शिक्षा खास तौरसे दी जाती थी। आजकल इसका एक तरहसे अभावसा हो गया है। इसी कारण जनसाधारण इसके लाभोंसे अनभिज्ञ हो गये हैं। इसके सिवा कुछ मूर्खोंने इसके वास्तविक गुण न समझकर इसका दुरुपयोगकर रक्खा है, जिसका परिणाम वास्तवमें हानिकर हो रहा है। वास्तवमें

यह सर्वश्रेष्ठ विद्या है। देवों द्वारा भी यह पूज्य है। हर्षका विषय है कि कुछ समयसे अब यहाँ भी इसकी चर्चा चली है। भारतगौरव गायनाचार्य पंडित विष्णु दिगम्बर इस विषयमें पूर्ण रूपसे उद्योग कर रहे हैं। आशा है कि भारतवासी उनकी शिक्षासे यथेष्ट लाभ उठावेंगे।

इस आनन्दके अतिरिक्त प्रकृतिने हमारे चारों ओर ऐसे अनुपम सुन्दर पदार्थोंको उत्पन्न कर रक्खा है कि उनके देखने मात्रसे हमारे हृदयमें आल्हाद हो आता है। शोभा किसको प्यारी नहीं? सुन्दरता किसको मोहित नहीं कर लेती? हम जिधर दृष्टि पसार कर देखेंगे, सुन्दर सुगन्धित पुष्पोंके ढेरके ढेर मिलेंगे। साधारणसे साधारण फूलमें एक निराली ही छटा होगी। गुलाब कितना साधारण फूल है; परन्तु इसको सब कोई फूलोंमें सर्वश्रेष्ठ कहते हैं। कवियोंने गुलाबके फूलको हँसता हुआ फूल कहा है। वास्तवमें है भी यह ऐसा ही। इसको देखते ही हृदय खिल उठता है। यह सुन्दरताकी साक्षात् मूर्ति है। इसी प्रकार और भी एकसे एक बढ़कर पुष्प हैं। प्रकृतिने सारी सुन्दरता इन्हींमें रख दी है। संसारमें इनसे अधिक सुन्दर शायद ही और कोई पदार्थ हो। यदि ये न होते, तो संसार सुन्दरतासे विहीन रहता। किसी साधारण फूलको ले लीजिए। ज़रा उसकी पत्तियों और पँखुरियोंको देखिए। कितने रंग हैं, कैसी सुगन्धि है और कैसी कोमलता है। एकको बागमेंसे तोड़कर कमरेमें ले आइए। जान पड़ेगा कि मानो आप सूरजकी एक किरणको उठा लाये हैं। उसे ज़रा किसी बीमारको दिखलाइए। देखते ही उसका उदास और अशान्त चित्त प्रसन्न हो जायगा। फूल क्या हैं मानो

आनन्द-वृष्टिके बूँद हैं। मानो वे उद्यानके पहरेदार हैं और यह कहते मालूम होते हैं कि यहाँ चलो जहाँ हम रहते हैं—जहाँ हम फले फूले हैं, हमें देखकर तुम्हारा हृदय प्रफुल्लित हो जायगा।

फूलोंसे ज़ियादह पवित्र कौन होगा? वे नन्हें नन्हें निष्पाप बालकोंके सदृश हैं, पवित्रता और सत्यताके चिन्ह हैं और पवित्र, निष्कपटहृदय मनुष्योंके लिए आनन्दके द्वार हैं। जिसको फूलोंसे आल्हाद नहीं होता और बच्चोंकी बोली मीठी नहीं लगती, उसका हृदय ही शून्य है, वह जीवित अवस्थामें ही मानो मृतक है। राजासे रंकतक, बूढ़ेसे बच्चे तक, कोई भी हो—जिसमें तनिक भी जीवन है, वह प्रत्येक फूलको देखकर अपने मनमें फूला नहीं समाता। प्रसिद्ध कवि वर्डसवर्थ (Wordsworth) ने लिखा है "कि तुच्छसे तुच्छ फूल भी हमारे लिए शिक्षा और नीतिका भाण्डार है।"

फूल कोई बहुमूल्य पदार्थ नहीं। उसमें खर्च अधिक नहीं होता; परन्तु उससे जो आनन्द होता है, वह बहुत अधिक, अकथनीय है। उससे वायु शुद्ध होती है, स्थान सुन्दर मालूम होता है, आँखें ठंडी होती हैं और सूर्यका प्रकाश दुगुना हो जाता है। फूलोंसे कभी घृणा नहीं होती। वे सदा ही प्रसन्नताके कारण होते हैं। अत एव फूलोंको कभी तुच्छ दृष्टिसे न देखो, उनका सदुपयोग करो। प्रकृतिने उनको तुम्हारे आनन्दके लिए उत्पन्न किया है, अतएव उनसे यथेष्ट लाभ उठाओ। इस विचारसे कि वे सस्ते हैं—उनमें कुछ खर्च नहीं होता, उनका दुरुपयोग मत करो। संसारमें ऐसे अनेक पदार्थ हैं जिनमें कुछ खर्च नहीं होता, परन्तु वे बड़े उपयोगी और आवश्यक होते

हैं। यदि प्रकृति हम पर दया करके उनको अधिकतासे उत्पन्न न करती, तो हम लाखों रुपयोंमें भी उनका मिल जाना सस्ता समझते। प्रकृतिमें अनेक पदार्थ ऐसे सुन्दर शोभाशाली हैं कि उन्हें देखकर हम बहुत कुछ आनन्द प्राप्त कर सकते हैं । परन्तु दुःखके साथ लिखना पड़ता है कि हम उनसे आधा भी आनन्द प्राप्त नहीं करते। यद्यपि हमारे नेत्र खुले रहते हैं, परन्तु सच पूछो, तो वे बन्दसे भी गिरे हुए हैं। हम जहाँ जाते हैं, आँख मीचकर जाते हैं। सुन्दर पदार्थोंको भी नहीं देखते । हममें देखने और देखकर आनन्दित होनेकी मानो शक्ति ही नहीं है। यदि हम ज़रा भी आँख खोलकर देखें, तो चारों तरफ़ आनन्ददायक पदार्थ दिखाई देंगे । संसारमें ही स्वर्गका आनन्द प्राप्त हो जायगा । हममें प्रेम और ज्ञानकी बड़ी आवश्यकता है। इन्हींके अभावसे हमें आनन्दानुभव नहीं होता। नहीं तो प्रत्येक पदार्थ आनन्दसे परिपूर्ण है। साफ़ सुथरा मकान-चाहे छोटा ही क्यों न हो, उसमें दो चार ऐसी खिड़कियाँ हों कि जिनमेंसे सूर्यकी किरणें पहुँच सकें—दस बीस नीति या उपदेशकी पुस्तकें, महापुरुषोंके जीवनचरित और देश देशान्तरोंके इतिहास, इन सब आनन्ददायक पदार्थोंको प्रत्येक गृहस्थ आसानीसे इकट्ठा कर सकता है। ये ही उसके लिए हर्ष और आनन्दके कारण हो सकते हैं।

प्रकृतिकी सुन्दरतामें तो किसीको सशय नहीं। प्रत्येक विचारशील मनुष्य प्रकृति देवीका हृदयसे उपासक होता है। कृति (Art) में भी कुछ कम सुन्दरता नहीं होती। आज कल ज्ञान विज्ञानके बलसे अनेक साधन ऐसे निकल आये हैं कि जिनके द्वारा भाँति भाँतिके चित्र

सुलभतासे तैयार हो जाते हैं । ये चित्र कुछ कम सुन्दर नहीं होते। इनसे कुछ कम शिक्षा नहीं मिलती । विचारशीलके लिए ये बड़े उपयोगी और शिक्षाप्रद होते हैं । इन चित्रोंसे मकानोंको अवश्य सजाना चाहिए । इनको देखकर मन प्रफुल्लित हो जाता है और हृदय आनन्दसे भीग जाता है । किसी सज्जन महापुरुषका चित्र देखते ही हमें उसका ही तत्काल स्मरण हो आता है। मानो उसके गुणोंकी मूर्ति बनकर हमारे आँखोंके आगे फिरने लगती है। किसी वीर पुरुषका चित्र देखकर हममें वीरताका भाव पैदा हो जाता है । किसी त्यागी विरागी महात्माका फोटू देखते ही हमारे परिणाम भी वैराग्यरूप हो जाते है । बच्चों पर चित्रोंका बड़ा प्रभाव पड़ता है । यदि उनको प्रारम्भसे वीर पुरुषोंके चित्र दिखलाये जावें और उनके चरित सुनाये जावें, तो वे बड़े होकर अवश्य उनका अनुकरण करेंगे । यदि इसके विपरीत उनको कायर और निर्बल पुरुषोंके चित्र दिखलाये जावें, तो वे बड़े होकर वैसे ही कायर और निर्बल हुए बिना न रहेंगे ।

अतएव प्रत्येक घरमें विद्वान्, बलवान् और सज्जनपुरुषोंके चित्र तथा प्रकृतिके सुन्दर दृश्योंके फोटू अवश्य होने चाहिए । वे हमारा चरित्र सुधारनेमें बहुत बड़ी सहायता देंगे । उन्हें देखकर किसी बुरे कामके करनेका कभी साहस ही न होगा । यह जरूरी नहीं है कि चित्र बहुमूल्य हों; नहीं, केवल सुन्दर और उत्तम हों। ये दोनों गुण एक पैसेकी तसवीरमें भी पाये जाते हैं ।

जीवन इसीप्रकार और भी अनेक उपायोंसे आनन्दपूर्ण बन सकता है । साराश यह है, कि प्रत्येक पदार्थको उपयोगमें

लाओ। किसीको भी तुच्छ न समझो। साधारणसे साधारण पदार्थ भी अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक है। प्रकृतिकी हृदयसे उपासना करो। उसके सुन्दर, अनुपम दृश्योंको आँख खोलकर देखो। कृतिका भी यथेष्ट आदर करो। प्रेम और प्रीतिका व्यवहार करो। ऐसा करनेसे तुमको भी आनन्द मिलेगा और दूसरोंको भी प्रसन्नता होगी। तुम अधम मनुष्योंकी श्रेणीसे निकलकर उच्च श्रेणी पर चढ़ जाओगे, उच्चतम परमब्रह्म परमात्माके सदृश होनेकी भावना करने लगोगे और अन्तमें संसारसे निकलकर मोक्षमें जा विराजोगे—जहाँ किसी भी प्रकारकी आकुलता नहीं, केवल उत्कृष्ट सुख और आनन्दकी परिपूर्णता है।

———

हृदयमें लिख रक्खो।

१. कभी निराश मत होओ।

२. जो अपनी सारी आमदनी खर्च कर डालता है, वह बहुत जल्दी भूखों मरने लगता है।

३. 'गया वक्त फिर हाथ आता नहीं।'

४. श्रम, संयम और मितव्ययिताका अभ्यास करो।

५. अगर तुम एक रुपया कमाते हो, तो उसमेंसे बारह आनेसे ज़ियादह कभी खर्च मत करो।

६. ईश्वर उन्हींकी सहायता करता है, जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं।

७. आजका काम कल पर मत छोड़ो।

८. सत्यको कभी न छोड़ो। असत्यको मनवचनकायपूर्वक बिल-कुल छोड़ दो।

वहुमूल्य वचन ।

(१)

If thou art rich, thou'st art poor;
For, like an ass whose back with ingots bows,
Thou bear'st thy heavy riches but a journey,
And death unloads thee-Shakespeare.

यदि तुम्हारे पास धन है परन्तु तुम उसको अच्छी तरह खर्च करना नहीं जानते, तो यह धन तुम्हारे सिर पर एक तरहका बोझा है जो मरते समय ही उतरेगा ।

शेक्सपियर ।

(२)

I care not much for gold or land;
Give a mortgage here and there,
Some good bank stock—some note of hand,
Or trifling railway share·
I only ask that Fortune send,
A little more than I can spend.

(Olmer Wendell Holmes)

चाहे जो मिले और चाहे जितना मिले, मुझे इसकी परवा नहीं । मैं केवल यह चाहता हूँ कि मुझे खर्चसे कुछ ज़ियादह मिल जाया करे ।

ओलीनर वेंडल होल्मेज ।

(३)

Be thrifty, but not covetous, therefore give
Thy need, thine honor and thy friend his due,
Never was scraper brave man. Get, to live,

Then live, and use it, else it is not true
That thou hast gotton Surely use alone
Make money not a cotemptible stone.

George Herbert.

मितव्ययी बनो, पर कंजूस कभी मत बनो। अपनी आवश्यकताको पूरी करो, प्रतिष्ठाको सुरक्षित रक्खो, मित्रोंके साथ भलाई करो, रुपया पैदा करो और उसका सदुपयोग करो। सदुपयोग ही रुपयेको कार्यकारी और अच्छा बना देता है, नहीं तो रुपया बहुत ही घृणित और तुच्छ पदार्थ है।

जार्ज हर्बर्ट।

(४)

To catch Dame Fortunes golden simle
Assiduous wait upon her,
And gather gear by every wile
Thats justified by Honour:
Not for to hide it in hedge
Not for a train attendant:
But for the glorious privilege
Of being Independent.

Robert Burns.

रुपयेको ईमानदारीके साथ जिस तरह हो सके उत्तम उपायोंसे ही पैदा करो; परन्तु यह सदैव याद रक्खो कि वह रुपया जमीनमें गाड़नेके लिए अथवा बाहरी टीमटाममें फ़िज़ूल खर्च करनेके लिए नहीं है, वह है स्वतन्त्रतासे सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करनेके लिए।

(५)

अर्थदूषणः कुवेरोऽपि भवति भिक्षाभाजनम् ।
अतिव्ययोऽपात्रव्ययश्च भवत्यर्थदूषणम् ।

—नीतिवाक्यामृत ।

अपार धनशाली कुबेर भी यदि आमदनीसे अधिक खर्च करे और अपात्रोंमें खर्च करे, तो एक न एक दिन भिखारी हो जाय ।

(६)

यस्य हस्ते धनं स जयति ।
धनहीनः कलत्रेणापि परित्यज्यते किं पुनर्नान्यैः ।

—नी० वा० ।

जिसके हाथमें धन है दुनियामें उसीकी जीत है । धनहीनको औरोंकी तो बात ही क्या उसकी स्त्री भी छोड़ देती है ।

(७)

स सदैव दुःखद् स्थितो यो मूलधनमसंवर्द्धयन्ननुभवति ।

नी० वा० ।

जो मूलधन या पूँजीको, बिना बढ़ाये हुए खाता है वह सदा ही दुखी रहता है—उसकी स्थिति कभी नहीं सुधरती ।

एक बार अवश्य पढ़िए !

हिन्दीग्रंथरत्नाकर–सीरीज ।

हिन्दीसाहित्यको उच्चश्रेणीके ग्रन्थोंसे विभूषित करनेके लिए इस ग्रन्थमालाका प्रारंभ किया गया है । हिन्दीमें अपने ढंगकी यह सर्वोत्तम ग्रन्थमाला है । हिन्दीके प्रधान प्रधान विद्वानोंकी सम्मतिसे इसके लिए ग्रन्थ चुने जाते हैं और नामी नामी लेखकोंसे ग्रंथ लिखवाये जाते हैं । राजनीति, विज्ञान, सम्पत्तिशास्त्र, नीति, सदाचार, धर्म, समाज, काव्य, नाटक, उपन्यास, मनोरंजन, आदि सभी विषयोंके ग्रंथ इसके द्वारा प्रकाशित किये जावेंगे । प्रत्येक ग्रंथ सुन्दर छपाई, कीमती कागज और बढ़िया जिल्दोंसे सज्जित होकर प्रकाशित होता है । अभी तक इसमें जितने ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं प्रायः सब ही पत्रसम्पादकोंने उनकी प्रशंसा की है । प्रत्येक हिन्दीहितैषीको इसके ग्राहक बनना चाहिए और हमारे उत्साहको बढ़ाना चाहिए । यदि इसके सिर्फ ५०० ही स्थायी ग्राहक हो जावेंगे, तो थोड़े ही समयमें हम सैकड़ों ग्रन्थरत्नोंको प्रकाशित करके हिन्दी साहित्यकी आशातीत उन्नत कर सकेंगे । देखते हैं, हिन्दीप्रेमियोंसे इस कार्यमें हमें कितनी सहायता मिलती है ।

स्थायी ग्राहकोंके नियम ।

१ जो सज्जन प्रारंभमें एक बार सिर्फ आठ आना प्रवेशफी जमा करा देंगे, वे स्थायी ग्राहक समझे जावेंगे ।

२ स्थायी ग्राहकोंको वे सब ग्रन्थ अवश्य लेना पड़ेंगे, जो उनके ग्राहक होनेके बाद 'हिन्दीग्रन्थरत्नाकरसीरीजमें निकलेंगे । इनके पहलेके ग्रन्थ लेना न लेना ग्राहकोंकी मर्जी पर है । वर्ष भरमें अधिकसे अधिक छह और कमसे कम चार ग्रन्थ प्रकाशित होंगे ।

३ स्थायी ग्राहकोंको सब पुस्तकें पौनी कीमतमें दी जावेंगी । डाँक खर्च जुदा । प्रत्येक पुस्तक तैयार होते ही वी. पी. से भेजी जायगी । जिनका वी. पी. वापिस आयगा, उनका नाम स्थायी ग्राहकोंकी सूचीसे अलग कर दिया जायगा ।

४ प्रत्येक पुस्तकके स्वरूपकी और मूल्य आदिकी सूचना उसके तैयार होनेके १५ दिन पहले दे दी जायगी ।

नीचे लिखे ग्रन्थ तैयार हैं:—

१–२ स्वाधीनता–इंग्लेण्डके सुप्रसिद्ध विद्वान् जॉन स्टुअर्ट मिलके 'लिबर्टी' नामक ग्रन्थका अनुवाद। अनुवादक; सरस्वतीपत्रिकाके सम्पादक पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी। इसके साथमें मिल साहबका ६० पृष्ठका जीवनचरित और मिल तथा द्विवेदीजीके दो चित्र भी हैं। मूल्य दो रुपया। मिलका जीवन चरित चार आनेमें जुदा भी मिलता है।

३ प्रतिभा—बंगभाषाके सुप्रसिद्ध लेखक बाबू अविनाशचन्द्रदास, एम. ए. बी. एल., के बंगला उपन्यासका अनुवाद। अनुवादक, हितैषीसम्पादक नाथूराम प्रेमी। हिन्दीमें इसकी जोड़का शायद ही कोई शिक्षाप्रद उपन्यास हो। मूल्य पक्की जिल्दका सवा रुपया, सादीका एक रुपया।

४ फूलोंका गुच्छा—लेखक, नाथूराम प्रेमी। इसमें अतिशय सुन्दर और भावपूर्ण ११ गल्पोंका संग्रह है। इसके प्रत्येक पुष्पकी सुगन्धि, सौन्दर्य और माधुर्यसे आप मुग्ध हो जावेंगे। प्रत्येक कहानी जैसी सुन्दर और मनोरंजक है वैसी ही शिक्षाप्रद भी है। मूल्य दश आना।

५ आँखकी किरकिरी—जिन्हें अभी हाल ही सवालाख रुपयेका सबसे बड़ा पारितोषिक (नोबेल प्राइज) मिला है और जो संसारके सबसे श्रेष्ठ महाकवि समझे गये हैं, उन बाबू रवीन्द्रनाथ ठाकुरके प्रसिद्ध बंगला उपन्यास 'चोखेर बाली' का यह हिन्दी अनुवाद है। इसमें मानसिक विचारोंके, उनके उत्थान पतन और घात प्रतिघातोंके बड़े ही मनोहर चित्र गये खींचे हैं। भावसौन्दर्यमें इसकी जोड़का दूसरा कोई उपन्यास नहीं। इसकी कथा भी बहुत ही सरस और मनोहारिणी है। मूल्य पक्की जिल्दका १॥) और सादीका १।) रु०।

६ चौबेका चिट्ठा—बंगभाषाके सुप्रसिद्ध लेखक बाबू बंकिमचन्द्र चटर्जीके लिखे हुए 'कमलाकान्तेर दप्तर' का हिन्दी अनुवाद। अनुवादका पं० रूपनारायण पाण्डेय। हँसी दिल्लगी और मनोरंजनके साथ इसमें ऊँचेसे ऊँचे दर्जेकी शिक्षा दी गई है। देशकी सामाजिक धार्मिक और राजनैतिक बातोंकी इसमें बड़ी ही मर्मभेदी आलोचना है। हिन्दीमें तो इसकी जोड़का परिहासमय किन्तु शिक्षापूर्ण ग्रन्थ है ही नहीं, पर दूसरी भाषाओंमें भी इस श्रेणीके बहुत कम ग्रन्थ हैं। एकबार पढ़ना शुरू करके फिर आप इसे मुश्किलसे छोड़ सकेंगे। मूल्य ग्यारह आने।

७ **मितव्ययिता**—यह प्रसिद्ध अँगरेज़ लेखक डा० सेमुएल स्माइल्स साहबकी अँगरेज़ी पुस्तक ' थिरिफ्ट ' का हिन्दी अनुवाद है। लेखक, बाबू दयाचन्दजी गोयलीय बी. ए.। मूल्य चौदह आने।

नीचे लिखे ग्रन्थ तैयार हो रहे हैं:—

८ **स्वदेश**—डा० रवीन्द्रनाथ ठाकुर कृत बंगला निबन्धावलीका हिन्दी अनुवाद। अनुवादक, बाबू महावीरप्रसादजी गहमरी। इन निबन्धोंसे हमें भारतवर्षका असली स्वरूप, उसकी भीतरी बाहरी रचना, उसका महत्त्व और हमारी वर्तमान परिस्थितियोंका ज्ञान होगा। मूल्य लगभग दश आना। (जुलाईके अन्तमें प्रकाशित होगा)

९ **शिक्षा**—डा० रवीन्द्रनाथकृत निबन्धावलीका अनुवाद । अनुवादक, नाथूराम प्रेमी। इन निबन्धोंमें शिक्षाकी वैज्ञानिक ढंगसे मीमांसा की गई है। इसे पढ़नेसे हमें मालूम होगा कि हमारी वर्तमान शिक्षाप्रणाली हमारे निजत्वको किस तरह तरह भुला रही है। (जुलाईके प्रारंभमें तैयार हो जायगी) मूल्य लगभग आठ आना।

१० **स्पेन्सरकी फिलासोफी**—प्रसिद्ध पाश्चात्य पण्डित स्पेन्सर साहबके सिद्धान्तोंका स्पष्टीकरण। अनुवादक, साहित्याचार्य पं० रामावतारशर्मा, एम. ए. प्रोफेसर पटना कालेज। चार जिल्दोंमें पूर्ण होगा। पहला भाग सितम्बरके लगभग निकलेगा।

और कई ग्रन्थोंके लिखानेका प्रबन्ध किया जा रहा है।

निवेदक—

मैनेजर—हिन्दीग्रन्थरत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग-पो० गिरगाँव, बम्बई।

समालोचनाओंका सार:—

स्वाधीनता।

—स्वाधीनता पर मिलका यह निबन्ध जगतमें प्रसिद्ध हुआ है। इसमें विचार-स्वातंत्र्यकी यौक्तिकता व आवश्यकता अखण्डनीय प्रमाणोंसे सिद्ध की है।... यह अनुवाद बहुत ही अच्छा हुआ है। —भारतमित्र।

—इस पुस्तकके पढ़नेसे लोगोंकी आँखें खुलेंगी और वे समझेंगे कि सब प्रकारकी स्वाधीनता कैसी होती है। —श्रीव्येंकटेश्वर समाचार।

—मूल पुस्तककी क्लिष्ट भाषाका सामना करनेमें तथा अपनी भाषाको सुन्दर बनानेमें अनुवादकने पूर्ण सफलता प्राप्त की है। —माडर्न रिव्यू।

—आर्य भाषाके प्रत्येक प्रेमीको इस पुस्तकका संग्रह करना चाहिए। —प्रचारक।

—हमें यह आशा नहीं है कि हिन्दीमें ऐसी पुस्तक छपेगी जो इसकी समता कर सके। —शिक्षा।

—यह ग्रन्थ मनन करने योग्य है और इसके प्रकाशित होनेसे नागरी-साहित्यके भण्डारमें एक अमूल्य रत्नका सचय हुआ है। —नागरीप्रचारक।

—दास्यपंकमें लोटते हुए भारतवासियोंके लिए स्वाधीनताके समान ग्रन्थके परिशीलनकी बड़ी आवश्यकता है। —चित्रमय जगत्।

मिलचरित।

—पिता पुत्रको कैसी सुशिक्षा दे सकता है, इसका नमूना मिलकी जीवनीमें मौजूद है। —श्रीव्येंकटेश्वर समाचार।

—जीवनी ऐसी अच्छी है कि जी चाहता है हम प्रत्येक पुत्रवान् मनुष्यको यह सम्मति दें कि यह अवश्य जीवनी पढ़े और देखे कि पिता पुत्रको विद्वान् कैसे बना सकता है। —शिक्षा।

—जीवनी खूब लिखी गई है। इसे पढ़कर मिलकी महत्ता, उसके विचारोंकी गंभीरता इत्यादिका चित्र आँखोंके सामने खिंच जाता है। —भारतोदय।

प्रतिभा।

भारतमें जो नया भाव, नयी ज्योति और नयी आकांक्षाका आविर्भाव हुआ

है, उसकी लहर, उसके प्रकाश और उसके साधनसे यह उपन्यास शराबोर है। अच्छे अच्छे और समयानुकूल विचार इसमें भरे पड़े हैं।

—श्रीवेंकटेश्वर समाचार।

—ऐसा भावपूर्ण और शिक्षाप्रद उपन्यास शायद ही कभी पहले हमारे सन्मुख आया हो। प्रतिभाका चरित्र भारतीय रमणियोंके लिए आदर्शस्वरूप है। लेखकने मनुष्यके मनोभावोंके पहचाननेमें प्रशंसनीय कौशल दिखलाया है। भाषा इसकी बहुत ललित है।

—अभ्युदय।

—यह ग्रन्थ उपन्यास नहीं है, नीतिका उत्तम ग्रन्थ है, समाजका प्रस्फुरित चित्र है, उपदेशोंका उत्तम संग्रह है। इस ग्रन्थसे नागरी साहित्यका बड़ा उपकार हुआ है।

—नागरी प्रचारक।

—अनुवाद बड़ा सुन्दर हुआ है। पुस्तकमें भ्रातस्नेह, भगिनीस्नेह तथा दम्पतिस्नेहका अनुपम वर्णन है। कहीं कहीं प्राकृतिक दृश्योंका यथार्थ चित्र खींचा गया है। उसकी पर्यालोचनासे हृदय प्रसन्न हो जाता है। प्रतिनायिका उमासुन्दरी तथा नायिका प्रतिभा दोनोंके पवित्र प्रेम पढ़नेवालोंके हृदयमें अनिर्वचनीय भाव उत्पन्न करते हैं। पुस्तक पढने योग्य, मनन योग्य तथा पुस्तकालयोंमें रखने योग्य है।

—शिक्षा।

—प्रतिभाको पढ़कर मेरे हृदयमें जिन जिन नवीन भावोंका सचार हुआ है, वे सर्वथा वर्णनातीत हैं। यदि कहा जाय कि हिन्दीमें अभी तक ऐसा उपन्यास कोई नहीं था, तो अत्युक्ति न होगी।

—स्त्रीदर्पण।

—यह पुस्तक समयके अनुकूल, सुधार विचारोंसे परिपूर्ण, जीवनका आदर्श दिखलानेवाली अथ च प्रशसनीय एव सग्रहणीय है।

—प्रभा।

—यह मनुष्यके चरित्रको उदार उन्नत और कार्यक्षम बनानेवाला सच्चा उपदेशक है। लेखकने चरित्रचित्रणके साथ साथ इसमें भारतकी वर्तमान अवस्थाका और उसकी वर्तमान आवश्यकताओंका बहुत ही मार्मिक पद्धतिसे विवेचन किया है। इसकी भाषा भी मनोहारिणी है।

—सरस्वती।

—उपन्यास अच्छा और शिक्षाप्रद है।

—भारतमित्र।

आँखकी किरकिरी।

—नागरीमें इस ढंगका उपन्यास अबतक प्रकाशित नहीं हुआ है। उपन्यासप्रेमी पाठक इस ग्रन्थको पढ़कर अवश्य ही प्रसन्न होंगे—नागरीप्रचारक।

—यह उपन्यास बहुत ही मनोरंजक और सुशिक्षादायक है। समाजके एक अंशविशेषका इसमें जीता जागता चित्र है। हमारे एक मित्रकी राय है कि—

" हिन्दीमें इसकी जोड़का एक भी उपन्यास नहीं। इसमें मनुष्यके स्वाभाविक भावोंके चित्र खींच कर उनके द्वारा मित्रकी तरह—आत्माकी तरह शिक्षा दी गई है। स्वत हृदयको गुदगुदा कर, परिणामोंको दिखा कर अच्छे विचारोंको विजय दिलानेवाली शिक्षा ही चिरस्थायिनी होती है। क्योंकि उसे ग्रहण करनेके लिए लेखक किसी तरहका आग्रह या अनुरोध नहीं करता। इस उपन्यासमें इस बात पर पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है। स्वाभाविक चरित्र-चित्रण अगर चित्रका रेखाचित्र है तो छोटे छोटे भावोंका चित्रण उसमें तरह तरहके रंगोंका भरना है, जिन रंगोंसे वह चित्र प्रस्फुरित हो उठता है। ऐसा चित्र बनाना रवीन्द्र बाबू जैसे सुचतुर शब्दचित्रकारका ही काम है। इसमें भावोंके उत्थान-पतन और उनकी विकासशैली वर्षामें पहाड़ों परसे गिरते हुए झरनोंकी तरह बहुत ही मनोहारिणी है। हृदयके स्वाभाविक उद्गार, छोटी छोटी घटनाओंका बड़ी बड़ी घटनाओंके बीच हो जाना और उनके चकित कर देनेवाले परिणाम बड़े ही स्पृहणीय हैं "

—सरस्वती।

फूलोंका गुच्छा।

—इसकी कहानियाँ मनोरंजक, रोचक, चित्ताकर्षक और शिक्षाप्रद हैं। कई कहानियोंमें ऐसी मर्मभेदी बातें हैं कि जिन्हें पढ़नेसे मनुष्यको अपना हृदय टटोलनेकी आकांक्षा उत्पन्न होती है। कहीं कहीं इस गुच्छेमें निर्मल निर्दोष आनन्दकी बड़ी मजेदार खुशबू है।

—श्रीव्यंकटेश्वर समाचार।

—गुच्छेकी कोई कोई गल्प तो बहुत ही चित्ताकर्षक है। पुष्पगुच्छ तो मुरझा जाते हैं पर इसके मुरझानेका डर नहीं।— कविर मैथिलीशरण।

—इस गुच्छको पढ़कर पाठकोंका चित्त प्रसन्न होगा और इसके नैतिक उपदेशोंसे वे लाभ उठायेंगे।

— नागरी प्रचारक।

—हिन्दीग्रन्थरत्नाकर कार्यालय बड़ी अच्छी पुस्तकें प्रकाशित कर रहा है। आख्यायिकारूप कलियोंका यह गुच्छ उसकी चौथी पुस्तक है। अच्छे कागज पर मनोहर टाइपमें यह छपा है। मुखपृष्ठ रंगीन अतएव बहुत ही मनोभिराम है। भाषा सरल और शुद्ध हिन्दी है। कहानियाँ हृदयकर्षक और निर्दोष है। आख्यायिका साहित्यके प्रेमियोंको इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। . ...

—सरस्वती।